प्रशासनिक चिंतक (भाग- 1)

ADMINISTRATIVE THINKERS

(Part- 1)

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय-हल्द्वानी
फोन नं0 05946 – 261122, 261123
टॉल फ्री नं0 18001804025
ई – मेल info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

अध्ययन मंडल

प्रो0 गिरिजा प्रसाद पाण्डे निदेशक- समाज विज्ञान विद्या शाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	प्रो0 अजय सिंह रावत उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
प्रो0 एम0 एम0 सेमवाल राजनीति विज्ञान विभाग केन्द्रीय विश्वविद्यालय,गढवाल, उत्तराखण्ड	प्रो0 मधुरेन्द्र कुमार (विशेष आमंत्रित सदस्य) राजनीति विज्ञान विभाग कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तराखण्ड
डॉ0 ए0 के0 रुस्तगी रीडर राजनीति विज्ञान विभाग जे0एस0पी0जी0 कॉलेज, अमरोहा, उत्तर प्रदेश	डॉ0 सूर्य भान सिंह, असिस्टेन्ट प्रोफेसर(राजनीति विज्ञान) उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
डॉ0 घनश्याम जोशी उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	

पाठ्यक्रम संयोजन एवं सम्पादन

डॉ0 घनश्याम जोशी (असिस्टेन्ट प्रोफेसर)
लोक प्रशासन विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखक	**इकाई संख्या**
डॉ0 जाकिर हुसैन(सेवानिवृत प्रोफेसर)	1, 3, 4, 5, 6
डॉ0 प्रो0 कमल कुमार श्रीवास्तव राजनीति विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ	2, 7
डॉ0 जया पाण्डे, विभागाध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रानीखेत	8
डॉ0 जया नैथानी, असिस्टेन्ट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रानीखेत	9

प्रकाशन वर्ष- 2022

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

संस्करण: 2022, सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन की प्रति।

प्रकाशन निदेशालय- अध्ययन एवं प्रकाशन, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय- 263139

अनुक्रम

खण्ड- 1 कौटिल्य, थामस वुडरो विल्सन		
1	कौटिल्य	1 – 12
2	थामस वुडरो विल्सन	13 – 21
खण्ड- 2 फेयोल, विन्सलो टेलर, मैक्स वेबर, कार्ल मार्क्स		
3	हैनरी फेयोल	22 – 32
4	फ्रेडरिक विन्सलो टेलर	33 – 42
5	मैक्स वेबर	43 – 56
6	कार्ल मार्क्स	57 – 69
खण्ड- 3 लूथर गुलिक, लिंडल एफ0 उर्विक, मैरी पार्कर फौलेट		
7	लूथर एच0 गुलिक	70 – 79
8	लिंडल एफ0 उर्विक	80 – 88
9	मैरी पार्कर फौलेट	89 – 98

इकाई- 1 कौटिल्य

इकाई की संरचना

1.0 प्रस्तावना
1.1 उद्देश्य
1.2 प्राचीन प्रशासकीय परम्परा
1.3 कौटिल्य- एक परिचय
1.4 कौटिल्य का अर्थशास्त्र
1.5 राज्य की प्रकृति
1.6 राजा और लोक प्रशासन
1.7 कौटिल्य का सप्तांग सिद्धान्त
1.8 अर्थशास्त्र और लोक प्रशासन के सिद्धान्त
1.9 लोक प्रशासन के तत्व
1.10 शासन के अधिकारी और विभाग
1.11 वित्तीय प्रशासन
1.12 गृह विभाग और अर्थशास्त्र
1.13 भर्ती एवं प्रशिक्षण
1.14 सारांश
1.15 शब्दावली
1.16 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.18 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.19 निबन्धात्मक प्रश्न

1.0 प्रस्तावना

कौटिल्य विश्व के महानतम विचारकों में गिना जाता हैं। उसने उस समय लिखना आरम्भ किया जब यूनान में प्लेटो, अरस्तु और सिसरो जैसे महान दार्शनिक राज्य पर अपने विचार प्रस्तुत कर चुके थे। अर्थशास्त्र का लेखक कौटिल्य एक यर्थाथवादी विचारक था। वह सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का सलाहकार और मंत्री था। वह चाहता था कि राजा शाक्तिशाली बना रहे और अपने राज्य का विस्तार साम, दाम, दण्ड, भेद की कूटनीति के माध्यम से करता रहे ताकि उसे धन प्राप्त हो जो राज्य की खुशहाली के लिये जरूरी है। उसने राज्य की सात प्रकृतियां या अंग बताये और कहा बिना इन सात अंगों के कोई राज्य पूर्ण नहीं है। उसने लोक प्रशासन को राज्य की शक्ति का अनिवार्य पहलू बताया। उसने प्रशासन के सिद्धान्त प्रतिपादित किये और समझाया कि प्रशासन कला भी है और विज्ञान भी, जिसमें स्वयं राजा को भी दक्ष होना चाहिए। प्रशासकों की योग्यता पर उसने बहुत जोर दिया। अर्थशास्त्र का अध्ययन करके आपकी समझ में आयेगा कि किस तरह अच्छे प्रशासन से लोगों की भलाई की जा सकती है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- भारत की प्राचीन प्रशासकीय परम्पराओं को समझ पायेंगे।
- कौटिल्य के जीवन-वृत और उस उद्देश्य को जिसको प्राप्त करने के लिये कौटिल्य ने अर्शशास्त्र लिखा, के विषय में जान पायेंगे।
- किस तरह कौटिल्य ने सप्तांग सिद्धान्त का प्रतिपादन करके राज्य की प्रकृति को दर्शाया, के विषय में जान पायेंगे।
- किस तरह लोक प्रशासन राज्य के लक्ष्यों की पूर्ति में साधक है, इसको जान पायेंगे।
- वित्तीय प्रशासन, प्रतिरक्षा प्रशासन और जनकल्याण प्रशासन का राज्य में क्या महत्व है, के विषय में जान पायेंगे।

1.2 प्राचीन प्रशासकीय परम्परा

कौटिल्य के प्रशासकीय विचारों को जानने से पहले हमको भारत की प्राचीन प्रशासकीय परम्पराओं को जानना चाहिए। जैसा कि आप जानते हैं भारत का इतिहास वैदिक काल से आरम्भ होता है। स्पष्ट है प्रशासन का इतिहास भी वैदिक काल में ही खोजना चाहिए। एक बात और भी याद रखनी होगी कि वर्तमान भारतीय लोक प्रशासन की जड़ों को मजबूती प्रदान करने में वैदिक साहित्य, बौद्ध ग्रन्थ, जैन लेखन, धर्मशास्त्र, पुराण, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति, शुक्रनीति इत्यादि का बड़ा योगदान रहा है।

1. **राजा और प्रशासन-** प्राचीन भारत में प्रशासकीय व्यवस्था राजा के इर्द-गिर्द घूमती नजर आती है। यद्यपि राजा ही राज्य की शक्तियों का केन्द्र होता था लेकिन वह अपनी सहायता के लिए अधिकारी रखता था। अधिकारियों से सम्बन्धित विभाग होते थे। इन विभागों का सम्बन्ध प्रजा के भौतिक और नैतिक विकास से होता था। अर्थात लोक प्रशासन के माध्यम से एक कल्याणकारी राज्य की कल्पना को साकार करना राजतंत्र का लक्ष्य होता था।
2. **प्रशासकीय विभाग-** चन्द्रगुप्त और अशोक के शासन काल में भारतीय प्रशासकीय पद्धतियों का विकास अपने चरम स्तर तक पहुँच चुका था। कार्यालयों की स्थापना होने लगी थी और प्रशासन का क्षेत्र केन्द्र से चलकर स्थानीय इकाइयों तक फैल गया था। यद्यपि ‘केन्द्रीकरण’ राजतंत्र की एक अनिवार्य प्रवृति थी, लेकिन प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण भी प्राचीन भारतीय शासन की एक अदभुत विशेषता बन चुकी थी। साम्राज्य प्रान्तों, जिलों, नगरों एवं ग्रामों में विभाजित थे। इन प्रशासकीय इकाइयों से सम्बन्धित विभाग एक निश्चित क्षेत्राधिकार से सम्पन्न थे। रामायण, महाभारत, शुक्रनीति, मनुस्मृति में भी विभागों से सम्बन्धित जानकारी मिलती है। इन विभागों में राजमहल विभाग, सेना विभाग, परराष्ट्र विभाग, माल विभाग, कोष विभाग, उद्योग विभाग, खान विभाग, वाणिज्य विभाग, धर्म विभाग आदि महत्वपूर्ण थे।
3. **प्रशासन में मानवीय दृष्टिकोण-**विभागों की एक संरचना होती है। इस सरचना का सम्बन्ध मानवीय रिश्तों से होता है। प्राचीन भारतीय प्रशासन में मानवीय मूल्यों को बहुत महत्व दिया जाता था। विभागों का अर्थ था- अधिकारियों, कर्मचारियों और क्रियाओं की एक श्रृंखला। इस श्रृंखला से जुड़े कुछ मुद्दे थे, जिनमें- पद, योग्यता, भर्ती, वेतन, अवकाश इत्यादि महत्वपूर्ण थे। उस समय योग्यता, उच्च कुल और कुशलता भर्ती के विशेष मापदण्ड थे। अधिकारी और कर्मचारी प्रायः तीन श्रेणियों में विभक्त थे- नगर

अधिकारी, ग्राम अधिकारी और सेना अधिकारी। मंत्री या परामर्शदाता जो राजा के समीप होते थे, इन अधिकारियों को निर्देशन और परामर्श देते थे।

अधिकारियों और कर्मचारियों की भर्ती एक महत्वपूर्ण विषय है। प्राचीन भारत में आज की तरह भर्ती के लिये सेवा आयोग नहीं रहे होंगे। अधिकारियों की भर्ती राजा अपने मंत्रियों की सलाह से करते थे। राजा, पुरोहित और प्रधानमंत्री की एक अन्तरंग परिषद होती थी जो सम्भवत: आज की तरह के लोक-सेवा आयोग का कार्य करती थी। अवकाश और पेन्शन के निश्चित नियम थे। पदोन्नति की भी परम्परा थी।

संक्षेप में प्राचीन भारत में केन्द्रीय कार्यालय का अस्तित्व भी था जो प्रान्तीय, प्रादेशिक और स्थानीय शासन का निरीक्षण करता था। प्रशासनिक व्यवस्था ऐसी थी जो प्रान्तीय, प्रादेशिक तथा जिला प्रशासन को मान्यता तथा महत्व देती थी। बड़े प्रान्तों को विभाजित करके नई प्रशासनिक इकाईयां बनाई जाती थी जिन्हें अक्सर मण्डल कहा जाता था। प्रशासन से सम्बन्धित ये सारे तथ्य वैदिक कालीन साहित्य में मिलते हैं। लेकिन एक योजनाबद्ध सिद्धान्तों के रूप में लोक प्रशासन पर एक स्पष्ट तस्वीर अर्थशास्त्र में ही देखने को मिलती है जिसके लेखक निःसन्देह कौटिल्य थे।

1.3 कौटिल्य- एक परिचय

कौटिल्य का मूल नाम था, विष्णुगुप्त। विष्णुगुप्त को चाणक्य भी कहा जाता है। अगर यह कहा जाये कि तुम चाणक्य हो तो इसका अर्थ होगा कि तुम कूटनीति, राजनीतिक दाव-पेंच और शासन कला में माहिर हो अर्थात तुम साम, दाम, दण्ड, भेद के माध्यम से सत्ता का उपयोग करते हो अथवा शक्ति प्राप्त करते हो और उसको बनाये रखते हो। कारण यह है कि कौटिल्य राजा को जो सीख देता है उसमें वह सब कुछ है जो सत्ता प्राप्ति के लिये, राज्य विस्तार के लिये और शासन करने के लिये जरूरी है। यहाँ नैतिकता और अनैतिकता में कोई अन्तर नहीं है।

आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि कौटिल्य जैसा एक चिन्तक इटली में भी हुआ उसका नाम था मैक्यावेली (1469-1527)। उसने अपने ग्रन्थ 'दि प्रिन्स' में जो कुछ लिखा है वो कौटिल्य के अर्थशास्त्र से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। यद्यपि ऐसा कहीं भी सिद्ध नहीं होता कि मैक्यावेली कौटिल्य या चाणक्य से प्रभावित था। परन्तु मानव प्रकृति, राज्य, राजा और शासन के बारे में दोनों के विचार इतने मिलते-जुलते हैं कि मैक्यावेली को यूरोप का चाणक्य और कौटिल्य को भारत का मैक्यावेली कहा जाता है। अक्सर किसी चालाक राजनीतिज्ञ के सन्दर्भ में यह कहा जाता है कि उसकी राजनीति मैक्यावेलियन है अथवा वह आज की राजनीति का चाणक्य है। दोंनों का अर्थ एक ही है।

मौरियन साम्राज्य (मौर्य साम्राज्य) की सबसे बड़ी देन है 'अर्थशास्त्र' जो कौटिल्य की एक विशिष्ट कृति मानी जाती है। अर्थशास्त्र पर तो बहस बाद में होगी लेकिन पहले समझना होगा उसके लेखक को। कौटिल्य का जन्म कब हुआ था? यह सही ज्ञात नहीं है, लेकिन यह बात सच है कि लगभग 321 बी0सी0 चन्द्रगुप्त मौर्य राज सिंहासन पर बैठा और उसी समय कौटिल्य को, जो उस समय तक्षिला विश्वविद्यालय में प्रोफेसर था, मौरियन साम्राज्य का प्रधानमंत्री बनाया गया। यह सम्भव है कि मैक्यावेली के समान कौटिल्य ने भी चन्द्रगुप्त मौर्य को शासन करने, साम्राज्य को मजबूती प्रदान करने तथा उसमें विस्तार करने के उद्देश्य से अर्थशास्त्र के माध्यम से पाठ पढ़ाने और प्रशिक्षित करने का प्रयास किया हो। कौटिल्य ना केवल स्वयं एक बुद्धिमान व्यक्ति था बल्कि वह प्रबुद्ध-वर्ग में पला-बढ़ा था। नालन्दा विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त करके वह तक्षशिला में राजनीति का प्रोफेसर बन गया और यहीं वह चन्द्रगुप्त के सम्पर्क में आया। उसका दृष्टिकोण धार्मिक या आध्यात्मिक कम और वैज्ञानिक अधिक था। वह आदर्शवादी या प्रत्यवादी (Idealist) कम था, लेकिन यर्थाथवादी (Realist) अधिक था। उसने अपने लेखन में ऐतिहासिक और अनुभववादी (Empirical) दोनों दृष्टिकोणों को अपनाया। इसलिये

आज ना केवल भारत बल्कि पूरे विश्व की राजनीति के सन्दर्भ में कौटिल्य बनाम चाणक्य की सार्थकता बनी हुई है। 'थामस बरो' कौटिल्य और चाणक्य को एक ही व्यक्ति नहीं मानते हैं। बरो के अनुसार यह दो अलग-अलग व्यक्तित्व थे।

1.4 कौटिल्य का अर्थशास्त्र

अर्थशास्त्र की रचना, अनेक विद्वानों के अनुसार 350-283 ईसा पूर्व हुई। अर्थात ठीक उस समय जब यूनानी दार्शनिक राज्य के सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत कर रहे थे। लेकिन कौटिल्य का जन्म कब हुआ और अर्थशास्त्र की रचना कब हुई? इस पर अनेक विद्वानों की राय एक नहीं है।

अनेक ऐसे भी विद्वान हैं, जो अर्थशास्त्र के लेखक पर भी सहमत नहीं है। 'आर0 पी0 कांगले' उनमें से एक हैं। लेकिन 'शाम शास्त्री' कौटिल्य को ही अर्थशास्त्र का लेखक मानते हैं।

आश्चर्य की बात यह है कि सन् 1904 तक अर्थशास्त्र से सम्बन्धित पाण्डुलिपियां समय की गर्द में छिपी रही। 1904 में अर्थशास्त्र का पूरा मूल पाठ ग्रन्थ लिपि में ताड़ के पत्तों पर शाम शास्त्री के हाथ लगा। सन् 1909 में उन्होंने इसे मूल रूप में और सन् 1915 में उन्होंने इसे अंग्रेजी में प्रकाशित किया। गणपति शास्त्री ने अर्थशास्त्र पर संस्कृत में टीका लिखी है। जर्मन, रूसी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अर्थशास्त्र का अनुवाद हो चुका है। आर0 पी0 कांगले ने अर्थशास्त्र पर तुलनात्मक ढंग से बहुत काम किया है।

अर्थशास्त्र पन्द्रह अधिकरणों अथवा ग्रन्थों में विभक्त है। इसकी संरचना सूत्रों के रूप में काव्य की भाषा में है, जिसमें 380 श्लोक हैं। कांगले की कृति में सूत्रों और श्लोकों की संख्या 5,348 है। यहाँ यह याद रखना होगा कि अर्थशास्त्र के केवल चार भाग- पहला, दूसरा, पाचवां और छटा लोक प्रशासन से सम्बन्धित हैं। अर्थशास्त्र का पचास प्रतिशत भाग विदेश-नीति और प्रति-रक्षा से सम्बन्धित है। दूसरे भाग का शीर्षक है 'सरकारी अधीक्षकों के कर्त्तव्य।' यह भाग विभागों से सम्बधित है। अर्थशास्त्र के प्रथम भाग में राजा का सम्बन्ध मंत्रियों, गुप्तचरों, राजदूतों, और राजकुमारों से दर्शाया गया है। यहाँ हर पहलू पर बहस की गई है।

अर्थशास्त्र में 'सेवीवर्ग' पर भी प्रकाश डाला गया है, क्योंकि कौटिल्य से पूर्व अथवा उसके समय में लिखित संविधान, कानून और नियम नहीं थे। इसलिये राजा, मंत्री और सेवीवर्ग गुणात्मक आधार को श्रेष्ठ मापदण्ड मानते थे। कौटिल्य ने सेवीवर्ग के गुणात्मक आचरण को बहुत महत्व दिया है और उसकी बहुत बारीकी से विवेचना की है। सार यह था कि यदि राजा और सेवीवर्ग का चरित्र अच्छा है तो शासन भी अच्छा होगा।

कुल मिलाकर अर्थशास्त्र राजनीति का एक वैज्ञानिक अध्ययन है। यहाँ हमें यह याद रखना होगा जैसा कि नाम से अभास होता है कि अर्थशास्त्र राज्य की अर्थव्यवस्था का अध्ययन नहीं है, यह राजनीति की श्रेष्ठतम कृति है। फिर कौटिल्य का उत्तर यह है कि प्रजा की भौतिक आश्यकताओं की पूर्ति करना अथवा इस पूर्ति के लिए अनिवार्य शर्तें या माहौल पैदा करना राजा का कर्त्तव्य है। इसलिए राजा को ऐसी रीतियां और कौशल अपनाना चाहिये जो राज्य के विस्तार के लिये जरूरी हों, क्योंकि विस्तृत राज्य, शक्ति और धन की गारन्टी है। इस तरह कौटिल्य की नजर में रोजी-रोटी को हासिल करना और उसके साधनों की रक्षा करना साध्य है। एक मजबूत और विस्तृत राज्य इस साध्य को प्राप्त करने का एक साधन है।

'अर्थ' का मतलब है, रोजी-जीविका से सम्बन्धित चीजें। ये चीजें भू-भाग का विस्तार करके और उसको बनाये रखकर हासिल की जा सकती है। अतः अर्थशास्त्र एक ऐसा ग्रन्थ है, जो राजा को राज्य के भू-भाग को विस्तृत करने की कला सिखाता है। कौटिल्य ने 'अर्थ' को व्यापक अर्थ में लिया है। इसमें सब कुछ सम्मिलित है- राज्य, अर्थशास्त्र, राजनीति, कूटनीति, कौशल, रणनीति और सबसे अधिक शासन और प्रशासन की कला। इस तरह अर्थशास्त्र एक विज्ञान भी है और कला भी। इसके दो उद्देश्य हैं: पहला- 'पालन' जिसका आशय है प्रशासन और

राज्य की सुरक्षा। दूसरा 'लाभ'- जिसका अर्थ है भू-भाग को जीतना और उस पर कब्जा बनाये रखना। 'अर्थ' में यह दोनों बातें शामिल है।

1.5 राज्य की प्रकृति

कौटिल्य ने एक अराजक राज्य की कल्पना की है। इसमें 'मत्स्य न्याय' (अर्थात बड़ी मछली का छोटी मछली को खा जाना) सर्वोपरि है। स्वाभाविक है कि सबल, दुर्बल को सतायेगा और राज्य में अराजकता फैलेगी। ऐसे में राजा का शक्तिशाली होना जरूरी है। यहाँ कौटिल्य मिथ का सहारा लेता है। अराजकता की स्थिति में प्रजा 'मनु' को राजा चुनती है। तय यह किया जाता है कि राजा को आनाज का 'एक-छटा' और बिक्री की वस्तुओं का 'एक-दसवां' हिस्सा मिलेगा। यह एक प्रकार का कर होगा। राजा इस आय से प्रजा के कल्याण और सुरक्षा की गारन्टी देगा। लेकिन इस कहानी से हमको यह नहीं समझना चाहिए कि कौटिल्य समझौते के सिद्धान्त को राज्य की उत्पत्ति का आधार मानता था।

क्योंकि मनु 'विवास्वत्' का पुत्र है और विवास्वत् सूर्य देवता हैं, इसलिये कौटिल्य राजा को ईश्वर का अवतरण या छाया मानता है। आप सवाल कर सकते हो कि क्या कौटिल्य राज्य की उत्पत्ति में देवी सिद्धान्त को मान्यता देता है? हाँ, कुछ हद तक। जब वह यह कहता है कि अगर लोग राजा का अपमान करेंगे तो उनको दैवीय दण्ड का सामना करना पड़ेगा। राजा का महत्व यह है कि वह इन्द्र के समान पुरस्कार देता है और यम् के समान दण्डित कर सकता है। यह सब कुछ तभी सम्भव है, जब राज्य का प्रशासन अच्छा हो। कौटिल्य अपेक्षा करता है कि राजा स्वयं एक अच्छा प्रशासक होगा। अधीनस्थ भी कर्मठ हों, निष्ठावान हों, चरित्रवान हों और योग्य हों। इसकी पहली शर्त है स्वयं राजा की योग्यता, निष्पक्षता और उसमें सद्-बुद्धि। प्रजा का कल्याण राजा का परम् धर्म होना चाहिए।

1.6 राजा और लोक प्रशासन

आपको अर्थशास्त्र की रचना का मुख्य लक्ष्य समझ में आ गया होगा। अब आप सवाल कर सकते हो कि इस लक्ष्य को प्राप्त करने का मूल-मंत्र क्या था? आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि कौटिल्य की नजर में यह मूल-मंत्र था, राजा या राजकुमार का लोक प्रशासन में दक्ष होना। उसने लिखा, लोक प्रशासन एक कला भी है और विज्ञान भी। अर्थशास्त्र का उद्देश्य है राजा को लोक प्रशासन में माहिर करना। राजा को लोक प्रशासन के विज्ञान का पूरा ज्ञान होना चाहिए। इतना ही नहीं राजा के अतिरिक्त राजकुमार, पुजारी और मंत्रियों को भी लोक प्रशासन में माहिर होना चाहिये। अतः कौटिल्य राजा को सलाह देता है कि उसे लोक प्रशासन का गहन अध्ययन करके विशिष्ट प्राध्यापकों के निर्देशन में प्रशासकीय सिद्धान्तों पर अमल करना चाहिए। पुजारी का कर्तव्य मात्र धार्मिक कार्यों को ही करना नहीं होना चाहिए। कौटिल्य के अनुसार ऐसा राजा जो हठधर्मी और दम्भी हो और प्रशासन के वैज्ञानिक सिद्धान्तों के विरूद्ध शासन करने पर अड़ा रहे वह स्वयं का भी विनाश करता है और अपने राज्य का भी। कौटिल्य के अनुसार राजा को एक बात और याद रखनी होगी, उसे अपने मन से यह भ्रम निकालना होगा कि वह स्वयं में पूर्ण है। वह स्वयं में पूर्ण नहीं है, वह सहयोगियों पर निर्भर है। वह जितना शक्तिशाली होता है, उतनी ही उसकी जिम्मेदारियां बढ़ती जाती हैं। उसे अपने अधिकारियों का सहयोग लेना होता है। इसलिये उसके अधिकारी या अधीक्षक लोक प्रशासन के शास्त्र में निपुण हों यह जरूरी है। गाड़ी के एक पहिये से गाड़ी नहीं चलती।

अर्थशास्त्र में एक और तथ्य पर जोर दिया गया है कि वह है- जासूसी करवाना। जासूस राजा की आखें हैं। पूरे साम्राज्य में जासूसों का जाल बिछा हो ताकि राजा अधिकारियों के कृत्यों पर नजर रख सकें। अर्थात् जासूसी लोक प्रशासन का एक अंग होना चाहिये।

1.7 कौटिल्य का सप्तांग सिद्धान्त

भले ही कौटिल्य के समय में राज्य का कोई संविधान नहीं था, ना ही लिखित कानून या नियम थे। लेकिन कौटिल्य को विश्वास था कि बिना सिद्धान्तों के राज्य की गाड़ी अपनी मंजिल तक नहीं पहुँच सकती। सफल राज्य के लिये कुछ तत्व अनिवार्य हैं। इसलिये उसने अर्थशास्त्र में बहुचर्चित सप्तांग सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।
कौटिल्य ने राज्य की सात प्रकृतियां या अनिवार्य अंग बताए हैं। ये हैं- स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड और मित्र। इन सात अंगों पर ही राज्य टिका हुआ है। संक्षेप में इन सात अंगों की व्याख्या इस प्रकार है:

1. **स्वामी अर्थात राजा-** राजा, राज्य की आत्मा है। वह शासक है और उसका रूप स्वामी जैसा है। उसके बिना राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती। कौटिल्य ने राजा को असीम शक्तियां प्रदान की हैं और एक तरह उसे राजा में दैवी शक्ति के दर्शन होते हैं। राजा का कर्तव्य है, प्रजा के प्राणों और सम्पत्ति की रक्षा करना। राजा रक्षक और पालक है। यह रक्षण और पालन के सिद्धान्त के अन्तर्गत आता है। लक्ष्य (जनता का कल्याण) की प्राप्ति के लिये राजा को दण्ड का भी प्रयोग करना चाहिये और शान्तिमय उपायों का भी। आपने पहले भी पढ़ा है कि कौटिल्य और मैक्यावेली के विचारों में अनेक विषयों पर बहुत समानता है। इनमें एक है राज्य का निरन्तर विस्तार करते करना। इसका अर्थ है कि कौटिल्य साम्राज्यवादी नीतियों का सर्मथक था, क्योंकि हमारा इस समय विषय लोक प्रशासन है, इसलिये यह बता दें कि कौटिल्य लोक प्रशासन में राजा की दक्षता को राज्य के विस्तार की अनिवार्य शर्त मानता था। जो राजा राज्य की सीमाओं में निरन्तर विस्तार ना करें वह आयोग्य है और अयोग्य राजा को दण्डित करना चाहिए। वह मृत्यु दण्ड का भी पात्र है।
   राजा को युद्ध और न्याय प्रशासन में भाग लेते रहना चाहिए। प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति स्वयं उसे करनी चाहिये। उस नीतियों की विस्तृत रूपरेखा तैयार करनी चाहिये और समय-समय पर अध्यादेश जारी करते रहना चाहिए। अधिकारियों को राजधर्म का पाठ पढ़ाते रहना चाहिये। उसे अधिकारियों को बताना चाहिए कि उनका राजधर्म क्या है?
2. **अमात्य अर्थात मुख्य सचिव-** राज्य का दूसरा अंग है अमात्य। अमात्य की स्पष्ट व्याख्या कहीं नहीं मिलती। कुछ विद्वानों के अनुसार यह प्रधानमंत्री है, कुछ इसे विशेष मंत्री मानते हैं। लेकिन कुछ टीकाकारों के अनुसार यह आज के मंत्रीमण्डलीय सचिवालय के प्रमुख सचिव के समान अधिकारी है। यह प्रशासन के मामलों में दक्ष और कुशल है। इसकी बुद्धि कुशाग्र है और सटीक निर्णय लेने में इसका विवेक अद्वितीय है। वह सम्पूर्ण प्रशासन पर पैनी नजर रखता है।
   अनेक विद्वानों का यह भी मत है कि अमात्य मंत्रियों की एक परिषद है, जिसमें प्रधानमंत्री, अन्य मंत्री, उच्च पुजारी, सेनापति, वित्तमंत्री इत्यादि आते हैं। कुल मिलाकर अमात्य एक ऐसा अधिकारी या अधिकारियों का समूह है जो प्रशासन का मुख्य स्रोत है।
3. **जनपद अर्थात जनसंख्या-** कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में जनता या प्रजा का नाम नहीं लिया है। जनसंख्या के स्थान पर उसने जनपद शब्द का प्रयोग किया है। जनता आर्थिक दृष्टि से इतनी सक्षम हो कि कर (Tax) अदा कर सके। वे राजा के प्रति वफादार हों और उसकी आज्ञाओं का पालन करें। राजा को अपने राज्य की सीमाओं को मजबूत करना चाहिए और पड़ोसी राज्यों को कमजोर करना चाहिये। जनपद या प्रजा की खुशहाली के लिये राजा का विस्तारवादी होना अनिवार्य है। इस तरह हमको यह याद रखना होगा कि जनपद में जनसंख्या और राज्य का भू-भाग दोनों आते हैं। जनसंख्या का कर्मठ और निपुण होना तथा भू-भाग का साधनों से सम्पन्न होना और उपजाऊ होना अनिवार्य है।

4. **दुर्ग या किला-** दुर्ग राज्य का तीसरा अंग है। दुर्ग मात्र किला नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण राज्य की किलेबन्दी दुर्ग की परिभाषा में आती है। यह किलेबन्दी आक्रमण और प्रतिरक्षा दोनों में सक्षम हो। इसमें सेना के लिये सारी सुविधाएँ उपलब्ध करायी गयी हो। कौटिल्य के अनुसार चार प्रकार के दुर्ग होते हैं: आदिक- जो चारों ओर से जल से घिरा हुआ हो, पवर्त- जो पहाड़ियों के मध्य हो, धनवान- जो रेगिस्तान में हो और वन दुर्ग- जो जंगलों के बीच में हो। कौटिल्य के इस वर्गीकरण से मात्र किले का आभास होता है।
5. **कोष या खजाना-** कोष या खजाना राज्य के अस्तित्व का आधार है। कोष का प्रशासन, कौटिल्य की नजर में राज्य की अर्थव्यवस्था के लिये अनिवार्य है। कोष का अर्थ है, राज्य के राजस्व का एक स्थाई स्रोत। जनपद राज्य के राजस्व का सबसे बड़ा स्रोत है। हर हालत में राजा को उत्पादन का एक छठवां भाग मिलना चाहिये और कोष में पर्याप्त सोने का भण्डार होना चाहिए। धन के स्रोत नैतिक और न्याय-युक्त होने चाहिए और धन इतना होना चाहिये कि राज्य लम्बे समय तक अस्तित्व में बना रहे। कोष राजा का निजी खजाना नहीं है। राजा को जो उपहार दिया जाता है, वह भी राज्य के खजाने में जमा हो।
6. **दण्ड या सेना-** राजा के पास एक शक्तिशाली सेना हो। यह सेना सैन्य कला में माहिर हो। वह वफादार और देश भक्त हो। राजा को ध्यान रखना होगा कि सेना सन्तुष्ट रहे। राजा की सफलता के लिये यह जरूरी है। सेना क्षत्रियों पर निर्भर हो, क्योंकि सैनिक योग्यता उनके स्वाभाव में है। लेकिन संकट काल में शूद्रों और वैश्यों को भी सेना में लिया जा सकता है। प्रतिरक्षा विभाग का प्रमुख सेनापति होता है, वह सेना नायक (कमाण्डर) नहीं होता है। वह एक तरह से प्रतिरक्षा विभाग का मुख्य प्रशासक होता है।
7. **मित्र या सहयोगी-** राजा की कूटनीति का एक महत्वपूर्ण अंग सहयोगियों को बनाना है। सहयोगी ऐसे हों जो अन्ततः मित्र बन सके और जिनसे रिश्ते टूटने की सम्भावना कम से कम हो। सहयोगियों से यहाँ अभिप्राय दूसरे राज्य के राजाओं से है। इसका अर्थ यह नहीं है कि दूसरे राज्य के राजा किसी राज्य के आन्तरिक संगठन का हिस्सा हैं। सहयोगी (Allies) बनाना मात्र एक कूटनीतिक दक्षता है। इसका सम्बन्ध विदेश-सम्बन्धों से है। अर्थशास्त्र में विदेश नीति और कूटनीति पर खुलकर बहस की गयी है।

1.8 अर्थशास्त्र और लोक प्रशासन के सिद्धान्त

कौटिल्य वह पहला भारतीय विचारक है, जिसने शासन को चलाने के लिये लोक प्रशासन के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। यद्यपि उसने कहीं भी लोक प्रशासन शब्द का प्रयोग नहीं किया है। लेकिन प्रशासन से सम्बन्धित जो सिद्धान्त उसने प्रतिपादित किये हैं, वे लोक प्रशासन के अन्तर्गत ही आते हैं। यह सिद्धान्त दो वर्गों में विभक्त हैं: पहला- सत्ता, आज्ञापालन, अनुशासन, कर्तव्य और उत्तरदायित्व से सम्बन्धित सिद्धान्त और दूसरा- श्रम विभाजन, समन्वय, पृथ्क्कीकरण, दक्षता, पदसोपान इत्यादि से सम्बन्धित सिद्धान्त। पहले प्रकार के सिद्धान्त का सम्बन्ध राज्य की प्रभुसत्ता से है, लेकिन दूसरे प्रकार के सिद्धान्त लोक प्रशासनिक क्रियाओं से सम्बन्धित हैं। कौटिल्य ने दोनों प्रकार के सिद्धान्तों को अच्छे शासन के लिये अनिवार्य बताया है।

सत्ता, आज्ञापालन और अनुशासन राज्य का सार है। इन सिद्धान्तों का स्वरूप वैधानिक है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में लिखा कि, जब शासक दण्ड के प्रति उदासीन हो जाता है तो ऐसी अव्यवस्था फैलती है कि कमजोर शक्तिशाली का शिकार बन जाता है। लेकिन जब सुरक्षा का एहसास बढ़ता है तो कमजोर अन्याय का मुकाबला करता है। कौटिल्य के अनुसार जनता के चार वर्ग या जातियां अपने-अपने स्वाभाव के अनुरूप काम करें। यह राजा के दृढ़ निश्चय पर निर्भर करता है। अर्थशास्त्र में यह भी स्पष्ट किया गया है कि सत्ता, आज्ञापालन और अनुशासन उसी सीमा तक प्रभावशाली हैं, जहाँ दण्ड की व्यवस्था है। सुशासन के लिये कर्तव्य, हित और उत्तरदायित्व के सिद्धान्त भी अनिवार्य हैं। अच्छे उद्देश्य के लिये दण्डित करना चाहिए, बदला लेने के लिये नहीं।

1.9 लोक प्रशासन के तत्व

कौटिल्य ने प्रशासन के पांच तत्व बताए हैं। पहला- उपक्रमों या कार्यों को आरम्भ करने के उपाय, दूसरा- कार्यों में लगने वाले लोगों और सामग्री (material) की उत्कृष्टता (Excellence), तीसरा- स्थान और समय का चयन, चौथा- असफलता की स्थिति में अभिपूर्ति (provision) और पांचवां- कार्य को पूरा करना।
कौटिल्य का मानना है कि राजा को अपनी सुरक्षा पर भी पूरा ध्यान देना चाहिए, क्योंकि सत्ता और अनुपालन तभी सम्भव है, जब राजा सुरक्षित है। जिस तरह वह दूसरों की सुरक्षा के लिये जासूसों का इस्तेमाल करता है, उसी तरह उसे बाहरी खतरों को देखते हुये अपनी सुरक्षा का ध्यान रखना चाहिए। इसलिये कौटिल्य ने गुप्तचर व्यवस्था पर बहुत जोर दिया है। सुरक्षा, वफादारी और स्थायित्व प्रशासन की अनिवार्यताएं हैं। सुदृढ़ गुप्तचर व्यवस्था आन्तरिक असंतोष, भ्रष्टाचार और बाहरी आक्रमण का सामना करने में सक्षम होती है।
एकता, स्थायित्व और आदेश की स्वतंत्रता शक्तिशाली राज्य की अनिवार्य शर्तें हैं। इन शर्तों की पूर्ति के लिये अर्थशास्त्र में अनेक सावधानियों पर बहस की गई है। इनमें राजा को सत्ता बनाये रखने के लिये आदेश की एकता (unity of command) और निर्देशन का बहुत महत्व है। सेवीवर्ग के सभी सदस्य राजा से सत्ता प्राप्त करते हैं। जनता के सामने वे राजा के प्रतिनिधि की हैसियत से खड़े होते हैं और अन्तत: वे राजा के प्रति उत्तरदायी होते हैं।
अनुपालन (obedience) प्रशासन का महत्वपूर्ण तत्व है। अनुपालन के पीछे भय, कर्तव्य, हित या स्वार्थ इत्यादि छिपे होते हैं। जो आज्ञाकारी है, वह राजा से बहुत भयभीत रहता है। स्थिति आग के समान है। आग तो केवल उसे जलाती जो उसमें कूदता है, लेकिन राजा अगर क्रोधित होता है, तो वह अपने सेवक के पूरे परिवार को जला सकता है। किस तरह प्रशासन के आदेशों का पालन किया जाये? इसके लिये लोगों का सहयोग जरूरी है। राजा को लोगों और सेवीवर्ग पर भरोसा भी करना चाहिए।
दण्ड राजा का प्रतीक है। इसके माध्यम से लोगों को भलाई की ओर अग्रसर किया जा सकता है। धन में वृद्धि की जा सकती है, खुशहाली आ सकती है। प्रोत्साहन भी दण्ड का भाग है। अभावग्रस्त या जरूरतमंदों की सहायता करके लोगों का सहयोग लिया जा सकता है। अधीनस्थों को प्रोन्नति के अवसर प्रदान करने चाहिए, उनके वेतन बढ़ाने चाहिये, उन्हें पुरस्कृत किया जाये तथा उनको उचित अवकाश दिया जाये। पेन्शन का प्रावधान होना चाहिये, सेवा में स्थायित्व की व्यवस्था होनी चाहिये। कौटिल्य ने सजा के लिये अनेक सुझाव दिये हैं, जो आज भी सार्थक हैं। अधिकारियों की गुणात्मक विशेषताओं का भी उल्लेख अर्थशास्त्र में देखने को मिलता है। अधिकारियों के चयन में इन विशेषताओं को ध्यान में रखने पर जोर दिया गया है। जहाँ तक उत्तरदायित्व का सवाल है, उससे ना केवल राजा बंधा हुआ है, बल्कि अधिकारी भी उत्तरदायित्व को प्रशासन का लक्ष्य समझे, ऐसा जरूरी है।
जहाँ तक लोक प्रशासन के दूसरे प्रकार के सिद्धान्तों का सवाल है, अर्थात् श्रम विभाजन, समन्वय, पृथक्कीकरण, दक्षता, पदसोपान इत्यादि का तो इन्हें कौटिल्य प्रशासन की मशीनरी मानता है। उसके अनुसार श्रम विभाजन शासन को चलाने के लिये एक प्रभावशाली कदम है। उसने लिखा- सम्प्रभुता सहयोग पर आधारित है, एक पहिये से गाड़ी नहीं चल सकती। राजा के मंत्री होने चाहिए। वे अपने-अपने क्षेत्र में काम करें और राजा को सलाह दें। मंत्रियों और राजा के मध्य, अधिकारियों और अधीक्षकों के मध्य समन्वय होना चाहिए। यह लोक प्रशासन की सफलता का मूल-मंत्र है। पदसोपानीय (Hierarchy) व्यवस्था अर्थात् प्रशासन में आदेश का प्रत्येक स्तर से गुजरते हुये चोटी से तल तक आना और अनुपालन तल से चोटी तक जाना, कौटिल्य की दृष्टि में समन्वय और क्रियान्वयन को प्रभावशाली बनाता है। सत्ता की सार्थकता भी पदसोपानीय व्यवस्था (सिद्धान्त) में छिपी है।

1.10 शासन के अधिकारी और विभाग

राजा प्रशासनिक इकाईयों और उनसे सम्बन्धित अधिकारियों पर अपने शासन के लिये निर्भर रहता है। कुछ अधिकारी जिनका वर्णन अर्थशास्त्र में है, सीधे राजा के अधीन हैं। जबकि अधिकांश अधिकारियों को वह परोक्ष रूप से उच्चतर अधिकारियों के माध्यम से नियंत्रित करता है। राजा वास्तव में देश का सर्वोच्च कार्यपालक है। उच्च अधिकारी राजा के प्रति उत्तरदायी है। मंत्री अपने निजी क्षेत्राधिकार के कामों को भी देखते हैं और उन सब कामों को भी, जिनका सम्बन्ध राजा और उसके शत्रु से है।

अर्थशास्त्र में अधिकांश ऐसे अधिकारी हैं, जिनको अधीक्षक कहा गया है। यह अधिकारियों से कम स्तर के होते हैं। यह विभाग प्रभारी नहीं होते हैं, बल्कि यह विभिन्न आर्थिक और सामाजिक अनुभागों के प्रमुख होते हैं। अधीक्षकों की सहायता के लिए (विशेष रूप से तकनीकी क्षेत्र में) विशेषज्ञ रहते हैं। विभागों का विभाजन सेवाओं के आधार पर होता है। सभी विभागों पर नियंत्रण कलेक्टर-जनरल और ट्रेजरार-जनरल का होता है।

राज्य का सबसे बड़ा अधिकारी समार्हत्र (कलेक्टर-जनरल) ही होता था। इस का मुख्य कार्य राजस्व को एकत्र करना होता था। इसके अन्तर्गत आयुक्त, जिलाधिकारी और जिले से लेकर ग्राम तक सभी क्षेत्राधिकारी आते थे। महत्वपूर्ण स्तर के लगभग 18 अधिकारी होते थे।

1.11 वित्तीय प्रशासन

अर्थशास्त्र की सबसे बड़ी विशेषता है कि राज्य से सम्बन्धित हर विषय पर उसमें बहस की गई है। जैसा कि आप जानते हैं अर्थ, धन या वित्त का पर्यायवाची है। राजा का उद्देश्य भी धन के लिये राज्य का विस्तार करते रहना है। इसलिये अनिवार्य है कि वित्तीय प्रशासन चुस्त-दुरूस्त हो। अर्थशास्त्र में एक वित्तीय विभाग का वर्णन है। इसमें 3 अधिकारी हैं। समाहर्त्र (कलैक्टर-जनरल), अर्थात वह अधिकारी जो राजस्व एकत्रित करने का प्रभार सभालता है; समनीघत्र (ट्रेजरार-जनरल), अर्थात वह अधिकारी जो राज्य के कोष का प्रमुख है तथा लेखा-जोखा अधीक्षक (सुपरिन्टेनडेन्ट-अकाउन्ट्स), जो आज के महालेखाकार के स्तर का था। यह तीनों विभाग एक-दूसरे पर निर्भर हैं। कलेक्टर जनरल और ट्रेजरार-जनरल (कौटिल्य ने इन नामों का प्रयोग नहीं किया है, बल्कि आधुनिक सन्दर्भ में इन नामों को चुना गया है।) तथा दूसरे का काम, आपूर्ति के व्यय को नियंत्रित करना है। दोनों अधिकारी अधीक्षकों पर सत्ता का प्रयोग करते हैं।

कौटिल्य आय और व्यय के ब्योरे के रख-रखाब को वित्तीय प्रशासन का एक महत्वपूर्ण कार्य मानता है। यहाँ तक कि वह लेखा अधीक्षक को भी कलेक्टर जनरल के अधीन रखता है जो लेखे-जोखे का परीक्षण करता है। इन लेखों(Accounts) में आमद (आमदनी) और खर्च दोनों होने चाहिए।

राजा को लेखों के आमद और खर्च पर बड़ी नजर रखनी होती है। इस सम्बध में वह हर विभाग के आमद और खर्च से अवगत रहता है। ऐसा वह मंत्रीमण्डल को मीटिंग बुलाकर करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि सभी विभागों में वित्तीय विभागों को अर्थशास्त्र में बहुत महत्व दिया गया है। व्यापार या वाणिज्य प्रबन्धों (जैसे- उत्पादन या निर्माण कार्य, खनिज खानों, सागरीय खानों, लवण खानों, नमक, वन उत्पादन, स्वर्ण, हाथ करघा इत्यादि) के अधीक्षक भी कलेक्टर जनरल के निरीक्षण में आते हैं।

कौटिल्य ने वित्तीय विभाग को बहुत व्यापक अर्थ में लिया है। उसमें अनेक वाणिज्य क्रियाकलाप भी शामिल हैं। यद्यपि इन क्रियाकलापों से सम्बन्धित विभाग हैं, लेकिन उनको वित्तीय विभाग का आर्थिक संरक्षण मिला हुआ है। अर्थशास्त्र में सामाजिक कल्याण पर भी जोर दिया गया है। यहाँ यह याद रखना होगा कि जिस समय अर्थशास्त्र की रचना हुई उस समय कल्याण की गतिविधियों का संचालन धार्मिक निगम, ग्राम और नगर पालिकाऐं,

दस्तकारी समूह और जातीय संगठनों के क्षेत्राधिकार में आता था। सरकार का यह कर्तव्य था कि वह सामाजिक कल्याण कार्यों में रूचि ले और वित्तीय प्रशासन की सहायता से जरूरतमन्दों की आर्थिक मदद करे। कौटिल्य ने इसे सामाजिक न्याय कहा है। कौटिल्य ऐसे प्रशासकीय विभागों की स्थापना पर जोर देता है जो बुजुर्गों, अनाथों, अपंगों और मजबूरों की आर्थिक मदद कर सकें।

1.12 गृह विभाग और अर्थशास्त्र

अब आपकी समझ में आने लगा होगा कि ब्रिटिश काल से लेकर आज तक जो प्रशासकीय व्यवस्था अस्तित्व में रही है, वैसा लगभग सब कुछ हमें अर्थशास्त्र में देखने को मिलता है। क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है? लगभग 23 सौ साल पहले प्रशासन के क्षेत्र में कौटिल्य ने वह सब कुछ सोचा, जो आज हम करते हैं।

वित्तीय प्रशासन के बाद हम अर्थशास्त्र में वर्णित किये गये गृह विभाग के प्रशासन पर नजर डालेंगे। प्रधानमंत्री, द्वारिका अर्थात महल के कर्मचारियों का मुखिया, हरम (जहां राजघराने की महिलाऐं रहती हैं) का अधीक्षक, अन्तपाल (सीमाओं का मुख्य प्रभारी) पासपोर्ट का अधीक्षक, कलेक्टर जनरल या आज के सन्दर्भ में जिलाधीश, अतिवाहक अर्थात वनों का मुख्य प्रभारी, दुर्गपाल (किले का रक्षक) और दण्डपाल, ये ऐसे उच्च स्तरीय अधिकारी हैं जो गृह विभाग का अंग हैं। गृह विभाग के किसी गृहमंत्री या गृह सचिव का अर्थशास्त्र में वर्णन नहीं मिलता है। द्वारिका और हरम का अधीक्षक राजा की निजी सुरक्षा के लिए जिम्मेदार हैं।

जिले और सीमाओं के अधीक्षक प्रतिरक्षा सम्बन्धी बातों को देखते हैं। पासपोर्ट अधीक्षक का सम्बन्ध राज्य में आने और जाने वाले लोगों से होता है। विदेशियों की गतिविधियों पर भी यह नजर रखता है। चरागाहों का अधीक्षक वनों की रक्षा करता है, राहजनों को पकड़ता है, मार्गों की रक्षा करता है, गायों की देखभाल करता है और सड़कों की मरम्मत करवाता है। कानून और न्याय का भी विभाग है। इस तरह अर्थशास्त्र में उन सब बातों को गृह विभाग में रखा गया है जो राज्य हित, राजा के हित और जन हित में है।

न्याय से सम्बन्धित अदालतों का प्रशासन गृह विभाग के अन्तर्गत आता है या नहीं, इस पर अर्थशास्त्र खामोश है। लेकिन न्याय व्यवस्था पर खुलकर बहस की गयी है। यह स्पष्ट किया गया है कि प्रशासकीय अदालतें ऐसे 3 व्यक्तियों पर निर्भर होंगी, जो धर्मशास्त्र में दक्ष हों। ऐसे तीन अधिकारी भी होंगे, जो न्याय प्रशासन को लागू करें। अदालतों की पदसोपानीय व्यवस्था होगी। अर्थात दस गावों की एक अदालत से लेकर राजा की अदालत तक। एक सर्वोच्च न्यायालय भी होगा, परन्तु उसकी अध्यक्षता कौन करेगा? राजा या मुख्य न्यायाधीश, इस पर अर्थशास्त्र खामोश है। सामाजिक न्याय की देखरेख राजा करेगा। कानून की अदालतें श्रमिकों, दासों और समितियों के मामले देखेंगी। बूचरखानों, वेश्याओं, मदिरा और बुनकरों से सम्बन्धित विभाग होंगे, जो सामाजिक कल्याण कानून के अन्तर्गत आयेंगे।

1.13 भर्ती एवं प्रशिक्षण

आज के लोक प्रशासन का एक महत्वपूर्ण विषय भर्ती और प्रशिक्षण है। आप सोचोगे यह आज के प्रशासन का विषय है। कौटिल्य ने भर्ती और प्रशिक्षण को लोक प्रशासन की दृष्टि से बहुत गम्भीरता से लिया है। अर्थशास्त्र में ऐसे अनेक प्रशिक्षणों का सुझाव दिया है, जो प्रशासक बनने से पहले अनिवार्य हैं। उदाहरण के लिये तकनीकी क्षमता, बुद्धिमत्ता (Intelligence), निरन्तर परिश्रम करने की आदत (मेहनतकशी), कर्मठता, वक्तृत्वशक्ति (eloquence) (धाराप्रवाह बोलने की शक्ति), साहस और निर्णय लेने की क्षमता, संकट के समय कष्टों को झेलने की क्षमता मजबूत चरित्र, निष्ठा और निष्पक्षता जैसे गुण एक प्रशासक में होने चाहिये। भर्ती से पहले प्रत्याशियों की योग्यताओं की समीक्षा करना तो अनिवार्य था, लेकिन सैनिकों को छोड़कर अन्य कर्मचारियों या अधिकारियों

के प्रशिक्षण की व्यवस्था क्या थी? यह स्पष्ट नहीं है। अर्थशास्त्र में मजदूरी और वेतन पर भी प्रकाश डाला गया है। कौटिल्य के अनुसार जिस अधिकारी की जिम्मेदारी अधिक हो, उन्हें अधिक वेतन दिया जाये और जिन अधिकारियों या कर्मचारियों ने अच्छा काम किया हो उनको प्रोन्नत किया जाये।

अभ्यास प्रश्न-

1. कौटिल्य को भारत का क्या कहा जाता है?
   क. मार्क्स ख. अरस्तु ग. मैक्यावेली घ. बोंदा
2. अर्थशास्त्र ग्रन्थ है?
   क. अर्थव्यवस्था पर ख. इतिहास पर ग. राजनीति पर घ. धर्म पर
3. कौटिल्य के सप्तांग सिद्धान्त का सम्बन्ध है-
   क. समाज से ख. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों से ग. राज्य की प्रकृति से घ. लोक प्रशासन से
4. लोक प्रशासन के कितने तत्व कौटिल्य ने बताए हैं?
5. राजस्व एकत्रित करने वाले अधिकारी को कहते हैं ?
   क. कलैक्टर-जनरल ख. ट्रेजरार-जनरल ग. लेखा-जोखा अधीक्षक घ. दण्डपाल
6. हरम में राजा के दास रहते थे। सत्य/असत्य
7. हरम में राजघराने की महिलाएँ रहती थीं। सत्य/असत्य
8. दुर्गपाल सेनापति होता था। सत्य/असत्य
9. अदालतें ऐसे तीन व्यक्तियों पर निर्भर होगीं, जो धर्मशास्त्र में दक्ष हों। सत्य/असत्य

1.14 सारांश

कौटिल्य का अर्थशास्त्र लोक प्रशासन और राजनीति शास्त्र पर एक गहन अध्ययन है। इन दोनों विषयों को उसमें व्यापक अर्थ में लिया है, इसमें राज्य चलाने के तरीकों से लेकर अर्थव्यवस्था और कूटनीति तक बहस की गई है। कौटिल्य, मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का सलाहकार और मंत्री था। यद्यपि अर्थशास्त्र की ऐतिहासिक सत्यता पर विद्वानों में मतभेद है, लेकिन उसमें राजनीति और प्रशासन के सम्बन्ध में जो सिद्धान्त पढ़ने को मिलते हैं, वे आश्चर्य में डालते हैं।

1. कौटिल्य ने राज्य की सात प्रकृतियां या अंग बताए हैं। वह इन अंगों को सप्तांग कहता है और उन्हें राज्य के अस्तित्व के लिये अनिवार्य मानता है।
2. कौटिल्य ने प्रशासन के भी सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं, जिनके माध्यम से राज्य के विभिन्न अंगों को सूचारू रूप से अर्थपूर्ण बनाया जा सकता है।
3. अर्थशास्त्र में कर्मचारियों, अधिकारियों या सेवीवर्ग के लिये अनेक मनोवैज्ञानिक तत्वों पर प्रकाश डाला गया है, जिनमें भय, कर्त्तव्य, और हित महत्वपूर्ण हैं। कर्मचारियों के आचरण को प्रभावित करके उनको उत्प्रेरित करना कौटिल्य का लक्ष्य है।
4. कौटिल्य ने शासन के विभागों की संरचना पर प्रकाश डाला है और सगंठन के आदेश की एकता, पद सोपान, समन्वय और उत्तरदायित्व के सिद्धातों की रचना भी की है।
5. कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में राजतंत्रीय शासन-व्यवस्था की बड़ी दार्शनिक विवेचना की है। वह कहता है कि प्रजा के सुख में राजा का सुख है। राज्य का सारा प्रशासन राजा के इर्द-गिर्द घूमता है। लेकिन अयोग्य राजा को वह मृत्यु दण्ड तक देने की सिफारिश करता है।

6. वित्त प्रशासन के सम्बन्ध में कौटिल्य तीन प्रकार के अधिकारियों का वर्णन करता है जो राजस्व, कोष और आय-व्यय के लेखे-जोखे को देखते हैं।
7. कौटिल्य की तुलना इटली के दार्शिनिक मैक्यावेली से की जाती है। दोनों का राजनीति में नैतिकता के बारे में मत एक है। दोनों साम, दाम, दण्ड, और भेद के सिद्धान्त को मानते हैं। दोनों ही राज्य विस्तार और कूटनीति के बारे में क्रूरता, उत्पीड़न और हिंसा के औचित्य को मान्यता देते हैं।

कौटिल्य की बड़ी गम्भीर आलोचनाएं भी की गयी हैं और जहाँ तक प्रशासन का प्रश्न है, उसकी प्रशंसा भी की जाती है।

1.15 शब्दावली

प्रत्यवादी- वह विचारक जो प्रत्यय आर्दश में विश्वास करे या उसकी यह धारणा हो कि आदर्श या त्रुटि मुक्त जीवन, स्थिति या राज्य अथवा समाज को पाया जा सकता है। ऐसा विचारक यथार्थ से दूर कल्पनावादी होता है।
साम्राज्यवाद- राजनीति की यह अवधारणा कि राज्य की सीमाओं का सदा विस्तार करते रहना चाहिये। युद्ध, क्रूर, रणनीति, छल-कपट की कूटनीति में राज्य विस्तार के लिये राजा निपुण होना चाहिए।
पदसोपान- सगठन की वह व्यवस्था जो त्रिकोणीय हो अर्थात चोटी पर मुख्य कार्यपालक का तल के अधीनस्थों को आदेश प्रत्येक पद या स्तर से गुजरता हुआ पहुँचे और तल से प्रत्येक स्तर से गुजरता हुआ अनुपालन चोटी तक जायें।
दक्ष होना- कुशल या निपुण होना, कृत्य- कार्य, कुशाग्र- तेज, आमद- आमदनी

1.16 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग, **2.** ग, **3.** ग, **4.** 5 तत्व, **5.** क, **6.** असत्य, **7.** सत्य, **8.** असत्य, **9.** सत्य

1.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ0 रविन्द्र प्रसाद, बी0 एस0 प्रसाद, पी0 सत्यनारायण: एडमिनिस्टेटिव थिंकर्स (ऐडिटेड 2013, नई दिल्ली, स्टलिंग)
2. रोजर, बोएशे: दि फर्स्ट ग्रेड पोलिटिकल रियालिस्ट: कौटिल्य एण्ड हिज अर्थशास्त्र, लनहेम, 2003,
3. शामशास्त्री: अर्थशास्त्र ऑफ कौटिल्य, ओरियण्टल लिब, 1908,
4. अवस्थी एवं अवस्थी: लोक प्रशासन, 1998,

1.18 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 अशोक कुमार, प्रकाशक- लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
2. प्रशासनिक विचारक,आर0 पी0 जोशी एवं अंजु पारीक, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
3. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 सुरेन्द्र कटारिया, नेशनल पब्लिशिंग हाउस।

1.19 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्राचीन भारतीय व्यवस्था में मानवीय दृष्टिकोण क्या था?
2. कौटिल्य के सप्तांग सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।
3. कौटिल्य के लोक प्रशासन के विषय में क्या विचार थे?

इकाई- 2 थामस वुडरो विल्सन

इकाई की संरचना

2.0 प्रस्तावना
2.1 उद्देश्य
2.2 वुडरो विल्सन- जीवन परिचय
2.3 वुडरो विल्सन के प्रमुख विचार एवं योगदान
    2.3.1 लोक प्रशासन को परिभाषित करना
    2.3.2 लोक प्रशासन: प्रशासनिक विज्ञान
    2.3.3 राजनीति-प्रशासन द्वैतवाद
    2.3.4 प्रशासन एवं जनमत
    2.3.5 लोक सेवा
    2.3.6 तुलनात्मक लोक प्रशासन
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.0 प्रस्तावना

लोक प्रशासन सामाजिक विज्ञानों के समुदाय का एक नवीन सदस्य है। तथापि इसका क्षेत्र तथा महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और आज यह सामाजिक विज्ञानों की श्रेणी में काफी प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर चुका है। अध्ययन और अनुशासन के रूप में लोक प्रशासन के विकास में संयुक्त राज्य अमेरिका की अहम् भूमिका रही है। भारत में यद्यपि लोक प्रशासन का अध्ययन-अध्यापन काफी विलम्ब से प्रारम्भ हुआ, तथापि आज यह प्रगति के पथ पर अग्रसर है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि लोक प्रशासन के क्षेत्र में अपना-अपना योगदान करने वाले प्रमुख विचारकों का अध्ययन किया जाए। प्रस्तुत लेख लोक प्रशासन के जनक ‘वुडरो विल्सन’ से सम्बन्धित है। अन्य शब्दों में वुडरो विल्सन को ‘भीष्म पितामह’ की संज्ञा से परिभाषित करना भी अतिश्योक्ति नहीं होगी। यही कारण कि वुडरो विल्सन लोक प्रशासन के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्वपूर्ण सितारे बन गये हैं।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- वुडरो विल्सन के जीवनी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर पाओगे।
- लोक प्रशासन के क्षेत्र में वुडरो विल्सन के योगदान के सम्बन्ध में विस्तार से जानकारी प्राप्त कर पाओगे।

2.2 वुडरो विल्सन- जीवन परिचय

वुडरो विल्सन का जन्म संयुक्त राज्य अमेरिका (U.S.A.) के वर्जीनिया राज्य में 28 दिसम्बर सन् 1856 को हुआ था। विल्सन ने राजनीति, शासन तथा कानून की शिक्षा प्राप्त की। सन् 1879 में प्रिन्सटन विश्वविद्यालय से स्नातक उपाधि प्राप्त की। मात्र 30 वर्ष की आयु में विल्सन को डॉक्टर आफ फिलासफी (पी0एचडी0) की उपाधि प्राप्त हुई। तदोपरान्त शैक्षणिक जगत में प्रवेश किया और उसी वर्ष प्रिन्सटन विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर बने। सन् 1902 तक इस पद को सुशोभित किया। तत्पश्चात सन् 1910 तक इसी विश्वविद्यालय के प्रेसीडेन्ट बने। सन् 1910 में ही विल्सन अमेरिका के न्यूजर्सी राज्य में गवर्नर के पद पर आसीन हुए। यह प्रमाणित करता है कि वे केवल अकादमिक क्षेत्र के महाबली नहीं थे वरन् राजनीतिक क्षेत्र में भी प्रतिभा के धनी थे। तीन वर्ष तक गर्वनर के पद की शोभा बढ़ाते हुए राजनीतिक ऊँचाइयों को पार करते हुए संसार की प्रमुख महाशक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका (U.S.A.) के राष्ट्रपति बने। वुडरो विल्सन ने आठ साल तक राष्ट्रपति के पद की गरिमा बनाये रखी, जो विश्व के सबसे शक्तिशाली सार्वजनिक पदों में से एक था। प्रथम विश्वयुद्ध के समय विल्सन का नेतृत्व अमेरिका के लिए काफी लाभदायक रहा। राष्ट्रपति के पद का दूसरा कार्यकाल भी बड़े सम्मानजनक ढंग से निर्वाहन किया। दुर्भाग्यवश दूसरा काल पूर्ण करने के तीन वर्ष पश्चात सन् 1924 को उनका देहान्त हो गया। इस महान विचारक और राजनीतिज्ञ के निधन के पश्चात लोक प्रशासन में एक रिक्तता सी आ गयी, क्योंकि अभी लोक प्रशासन नवोदित पौधे के रूप में विकसित हो रहा था। फिर भी विल्सन द्वारा प्रज्जवलित लोक प्रशासन की ज्वाला को आगे अनेक मनीषियों एवं विद्वानों ने धीमी नहीं पड़ने दिया वरन् लोक प्रशासन की यात्रा को विकास के रथ पर आरूढ़ कर निरन्तर प्रगति को ओर अग्रसारित किया।

वुडरो विल्सन राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर होने के साथ-साथ, एक प्रशासनिक चिन्तक, शिक्षा शास्त्री, इतिहासकार, सुधारक एवम् एक अच्छे नेता भी थे। इनकी कतिपय रचनाऐं निम्नलिखित हैं।

- कांग्रेसनल गवर्नमेन्ट (1885)
- दी स्टेट (1889)
- डिवीजन एण्ड रीयूनियन
- ए हिस्ट्री ऑफ अमेरिकन पीपुल (1902)
- कान्सटीट्यूशनल गवर्नमेन्ट इन द युनाइटेड स्टेटस (1908)
- मेयर लिटरेचर एण्ड अदर एसेज (1896)
- जार्ज वांशिगटन (1896)
- एन ओल्ड मास्टर एण्ड अदर पालीटिकल एसेज(1893)

उपरोक्त रचनाओं के साथ-साथ 1887 में ‘पोलिटिकल साइन्स क्वार्टरली’ में प्रकाशित उनका लेख ‘प्रशासन का अध्ययन’(The Study of Administration) लोक प्रशासन के उदय की जड़ माना जा सकता है। यह स्मरण रहे कि यही एकमात्र शैक्षिक रचना है, जो विल्सन ने लोक प्रशासन पर लिखी थी। इससे यह स्पष्ट होता है कि मात्रात्मक होना आवश्यक नहीं है। गुणात्मक होना जरूरी है।

2.3 वुडरो विल्सन के प्रमुख विचार एवं योगदान

विल्सन के प्रमुख विचारों तथा उनके योगदान को निम्नलिखित शीर्षकों में विभाजित किया जा सकता है। फलस्वरूप अध्ययन में काफी सहजता होगी।

2.3.1 लोक प्रशासन को परिभाषित करना

प्रशासन का अध्ययन 'The Study of Administration' नामक लेख 'पोलीटिकल साइन्स क्वार्टरली' के जून अंक में 1887 प्रकाशित हुआ था। यह लेख लोक प्रशासन के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ। ड्वाइट वाल्डो एक प्रमुख लोक प्रशासन के चिंतक हैं, इनका भी जन्म अमेरिका में हुआ था, ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में व्यापक कार्य किए हैं। इनका मानना है कि उपरोक्त लेख स्व-जागरूक लोक प्रशासन के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है तथा साथ ही अन्र्तहीन प्रेरणा एवम् विवाद का स्रोत भी है। वास्तविक रूप में 1885 में विल्सन ने 'दी आर्ट ऑफ गवर्निंग'(The Art of Governing) नामक शीर्षक से एक लेख लिखा था, परन्तु किन्हीं अपरिहार्य कारणों से छपाया नहीं था। जब कॉरनैल विश्वविद्यालय में उन्हें बोलने को आमंत्रित किया गया तो विल्सन ने आगे के विचारों को ध्यान में रखते हुए इस लेख का पुनर्रीक्षण किया तथा यही लेख फिर प्रशासन का अध्ययन (The Study of Administration) नाम शीर्षक से प्रकाशित हुआ। यही से अध्ययन अनुशासन के रूप में लोक प्रशासन की यात्रा प्रारम्भ हुई। लोक प्रशासन सरकार का सबसे स्पष्ट भाग होते हुए काफी विलम्ब से अध्ययन के रूप में विकसित हुआ। इसके कारणों पर विल्सन ने गहनता से चिन्तन करते हुए तर्क देते हुए कहा कि राजनीति विज्ञानिकों ने अपना ध्यान केवल विशुद्ध अमूर्त राजनीतिक विषयों पर ही केन्द्रित किया। जैसे राज्य की प्रकृति, प्रभुसत्ता, लोक प्रिय सत्ता इत्यादि। विल्सन के अनुसार ''प्रशासन के अध्ययन का विकास समाज में बढ़ती हुई जटिलताओं, राज्य के कार्यो में बढ़ोत्तरी होने तथा लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों पर सरकारों की वृद्धि के परिणाम स्वरूप हुआ। कार्यो के इस प्रकार लगातार बढ़ते हुए क्रम ने यह प्रश्न उठाया कि 'कैसे' और 'किन' दशाओं में इन कार्यों को निष्पादित किया जा सकता है। इसके लिए विल्सन ने सुझाव दिया कि सरकार में सुधार की आवश्यकता है और ये सुधार प्रशासन के क्षेत्र में होने चाहिए।''

विल्सन के मतानुसार देश का संविधान निर्मित करना आसान है, परन्तु उसका अनुपालन सुनिश्चित करना बड़ा ही कठिन काम है। विल्सन ने संविधान बनाने से ज्यादा महत्व इसे लागू करने एवम् अनुपालन सुनिश्चित करने पर दिया है। यह कार्य सरकार और उसके कार्यात्मक अथवा प्रशासन का है।

विल्सन का कथन है कि ''लोक प्रशासन सार्वजनिक कानून का विस्तृत और व्यवस्थित क्रियान्वयन है। सामान्य कानून का प्रत्येक अनुप्रयोग प्रशासन का कार्य है।'' अगर प्रशासन का अध्ययन दार्शनिक दृष्टिकोण से किया जाए तो यह संवैधानिक सत्ता के सही वितरण के अध्ययन के साथ निकटता से जुड़ा हुआ है।

2.3.2 लोक प्रशासनः प्रशासनिक विज्ञान

विल्सन प्रशासन के विज्ञान होने की वकालत करते हैं। प्रशासन का विज्ञान, राजनीति के विज्ञान के अध्ययन का सबसे ताजा फल है। प्रशासन का विज्ञान सरकार के कार्यो को सुगम, संगठन को सुदृढ़ एवं शुद्ध बनाता है। फलस्वरूप कर्तव्यों में कर्तव्य-भावना का संचार एवम् समावेश पैदा होता है। प्रशासन के विज्ञान के विकास की आवश्यकता संयुक्त राज्य अमेरिका में पड़ी। वुडरो विल्सन ने कहा है ''हमें इसका अमेरीकीकरण करना होगा। केवल औपचारिकता से नहीं, मात्र भाषा से नहीं बल्कि प्रगतिशील रूप में, विचारों में, सिद्धान्तों और लक्ष्यों में

भी। इसे हमारे संविधान को कंठस्थ करना होगा, इसकी रक्तवाहिनियों से नौकरशाही के बुखार को बाहर करना होगा और स्वतंत्र अमरीकी वायु का श्वसन करना होगा।''

विल्सन का मत था कि राजतंत्र की तुलना में प्रजातंत्र में प्रशासन को संगठित करना अधिक कठिन कार्य होता है। यही कारण है कि अमेरिका में प्रशासन विज्ञान की प्रगति काफी धीमी रही। इनका मानना है कि प्रशासन को सही दिशा निर्गत करने के लिए संविधान के साथ ज्यादा छेड़छाड़ नहीं करना चाहिए। सरकारें संविधान के छेड़छाड़ में व्यस्त रहने के कारण प्रशासन पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाती हैं। इसलिए संवैधानिक सिद्धान्तों पर अधिक बहस ना करके प्रशासन के विज्ञान का व्यवस्थित विश्लेषण कर इसे समझने की कोशिश की जानी चाहिए।

विल्सन कहते हैं कि वे सरकारें जिनके शासक निरंकुश तो थे, लेकिन जब राजनीतिक प्रकाश के आधुनिक दिन आये, जिनमें अन्धों के अतिरिक्त सबको स्पष्ट हो गया है कि शासक, वास्तव में शासितों के सेवक हैं, वे प्रशासनिक व्यवहार के आधुनिक विकासों से भिन्न एवं अग्रणी हो गए हैं। पुन: स्मरण हेतु, वुडरो विल्सन ने अपना लेख ''प्रशासन का अध्ययन'' अमरीकी इतिहास के उस युग में लिखा था, जब अध्ययन का मुख्य केन्द्र-बिन्दु राज्य की प्रकृति और सरकार का उद्देश्य हुआ करता था। लोक प्रशासन का अध्ययन उन दिशाओं में विकसित हुआ है, जिन्हें प्रथम बार सन् 1887 में विल्सन ने अपने प्रसिद्ध निबन्ध, जिसे वे नम्रता से प्रशासनिक अध्ययनों का अर्ध-जनप्रिय परिचय कहते हैं, में सुझाया था यह निबन्ध आज विल्सन द्वारा इसके मूल्यांकन से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। संक्षिप्त में और पूर्णरूप से विल्सन एक प्रजातंत्र में प्रशासन की समस्याओं और विशेषताओं को निश्चित करते हैं। इस प्रकार वह पैगम्बरीय विशेषताओं के दावेदार बन जाते हैं। अगर प्रजातंत्र में प्रशासन को प्रभावशाली भूमिका निभानी है तो इसके व्यवहार में, अपने देश की समस्याओं का अध्ययन कर सुधार किया जाना चाहिए। साथ ही साथ 'किस विधि से विदेशी सरकारें अपने सार्वजनिक कार्य सम्पन्न करती हैं' की सावधानी से जांच की जानी चाहिए। इस प्रकार विल्सन ने सौ वर्ष से पहले ही तुलनात्मक प्रशासन के अध्ययन पर बल दिया था।

जब 1887 में विल्सन ने यह लेख लिखा था तो इससे पहले ही संयुक्त राज्य अमरीका ने 'पेन्डलटन अधिनियम' (1883) पारित कर दिया था। यह संघ लोक सेवाओं में भर्ती की योग्यता व्यवस्था का उद्-घोष था। विल्सन लोक सेवाओं में सुधार के अधिवक्ता थे और उनका लोक सेवा के सम्बन्ध में यह सन्दर्भ कि ''सुसंस्कृत, सोच समझकर और उत्साह के साथ कार्य करने में आत्मनिर्भर फिर भी स्वेच्छाचारिता या वर्ग भावना से बिल्कुल पृथक्'' प्रजातंत्र में लोक सेवा का सही वर्णन है।

2.3.3 राजनीति- प्रशासन द्वैतभाव

वुडरो विल्सन ने राजनीति और प्रशासन के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों को काफी गहनता से अध्ययन किया। परीक्षणोपरान्त राजनीति-प्रशासन द्वैतभाव के सिद्धान्त का समर्थन किया। विल्सन का अभीष्ट, प्रशासन को राजनीति से पृथक करना था। इसके लिए विल्सन राजनीति और प्रशासन को एक-दूसरे से प्रथक बताते हुए राजनीति-प्रशासन द्वैतभाव (Politics Administration Dichotomy) की वकालत करते हैं। इसके मतानुसार ''प्रशासन का क्षेत्र व्यवसाय का क्षेत्र है। यह राजनीति की आपाधापी और हंगामे से अलग होता है। प्रशासन संवैधानिक विवादों के विचार-विमर्श से भी दूर-दूर रहता है। प्रशासन स्वयं राजनीति के दायरे से बाहर ही रहता है। प्रशासनिक प्रश्न राजनीतिक प्रश्न नहीं होते हैं। यद्यपि राजनीति प्रशासन के लिए पाठ तैयार करती है और बताती है कि प्रशासन को क्या-क्या करना है? परन्तु राजनीति को चाहिए कि वह प्रशासनिक कार्यालयों का दुरूपयोग ना करें। इस प्रकार इस वक्तव्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि विल्सन प्रशासन और राजनीति को अलग-अलग करके देखते हैं।''

उपरोक्त कथन से स्पष्ट होता है कि एक ओर विल्सन राजनीति और प्रशासन के पारस्परिक सम्बन्धों की चर्चा करते हैं, वहीं दूसरी ओर वे राजनीति प्रशासन द्वैतभाव के प्रबल समर्थक भी थे।

विल्सन ने अपना निबन्ध ''राजनीतिक'' या नीति जैसा कि आज इसे कहा जाता है, को प्रशासन से पृथक मानकर प्रारम्भ किया है। यह विरोधाभास अमान्य है। लेकिन क्या एक नई व्याख्या से इसे नहीं बचाया जा सकता है? राजनीति अभ्यास कर्त्ताओं को चाहिए कि वे दिन-प्रतिदिन के प्रशासनिक कार्यों में हस्तक्षेप से बचें। यह बुद्धिमतापूर्ण दृष्टिकोण है, जिसकी उपेक्षा का दुष्प्रभाव प्रशासन को स्पन्दनहीन बना सकती है, जो विशुद्ध रूप से प्रशासनिक प्रश्न है। उनमें राजनीतिक हस्तक्षेप प्रणाघातक पाप है, विशेषकर भारत जैसे विकाशशील प्रजातंत्र में। वुडरो विल्सन ने सही अवलोकन किया था कि लोक प्रशासन की चिन्ताऐं संविधान निर्माताओं की चिन्ताओं से भिन्न हैं। संविधान निर्माताओं ने तो एक बड़े समाज में गम्भीर विरोधाभासों को पैदा किया था। इन दोनों की चिन्ताएँ इतनी अधिक भिन्न हैं कि संविधान का परिचालन (प्रशासन करना) संविधान निर्माण से अधिक कठिन हो गया है। विल्सन यह चाहते थे कि एक देश का लोक प्रशासन उन सिद्धान्तों पर आधारित होना चाहिए, जिनमें ''प्रजातांत्रिक नीति हृदय में सन्निहित हो।'' दूसरे शब्दों में, संविधान में निहित सिद्धान्त प्रशासनिक प्रक्रियाओं और कार्यों में जज्ब (विलीन) हो जाने चाहिए तथा इन्हीं के अनुरूप शासन भी होना चाहिए। इसके लिए संविधान, इसकी विचारधारा और सिद्धान्तों का प्रशासन के साथ सामान्जस्य आवश्यक है। प्रशासनिक प्रक्रियाऐं और व्यवहार प्रबन्धकीय दृष्टिकोणों सहित संवैधानिक मूल्यों के अनुरूप होनी चाहिए। लेकिन प्रबन्धकीय दृष्टिकोण जो किसी प्रशासन का हृदय है, का संवैधानिक मूल्यों के साथ सामान्जस्य हमेशा आसान या सरल नहीं होता। ऐसी परिस्थितियों में लघु मार्गों की उपेक्षा की जानी चाहिए तथा संविधान का विरोध ना करते हुए संघर्षों का समाधान किया जाना चाहिए। समकालीन भारत के लिए वुडरो विल्सन का बहुत अधिक औचित्य है।

2.3.4 प्रशासन एवं जनमत

प्रशासन और जनमत के सम्बन्धों का भी परीक्षण विल्सन ने किया। इनके मध्य किस प्रकार से सामंजस्य स्थापित किया जाय, इस विचारधारा का भी विल्सन ने काफी गहनता से अध्ययन किया। विल्सन का मानना है कि प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए जनमत की आलोचना से बचना चाहिए। जनमत एक सत्तावादी आलोचक की तरह कार्य करता है। यद्यपि प्रशासन के कार्यों में जन आलोचना का विशेष महत्व नहीं होना चाहिए, परन्तु नीति निर्धारण में आलोचना काफी लाभदायक है, अपितु पूरी तरह से अनिवार्य भी है। अतः विल्सन का मत था कि प्रशासनिक अध्ययन को जन आलोचना नियंत्रण का सबसे अच्छा साधन खोजना चाहिए और साथ ही उसे प्रशासन में हस्तक्षेप से बचना चाहिए।

2.3.5 लोक सेवा

विल्सन तकनीकी रूप से शिक्षित सिविल सेवा की वकालत करते हैं। जीवन्त लोकतंत्र के लिए योग्यता आधारित सिविल सेवा अपरिहार्य है। यद्यपि विल्सन का विश्वास था कि प्रशासक सिद्धान्ततः राजनीतिक प्रक्रिया में सम्मलित नहीं होते हैं पर साथ ही वे ऐसे नौकरशाह अभिजन-वर्ग बनाने के विरूद्ध थे, जो लोकतांत्रिक नियंत्रण में ना हों।

विल्सन अमेरिका में लोक सेवाओं में सुधार लाने के समर्थकों में अग्रणी थे। उनका मत था कि सिविल सेवा पेशेवर रूप में समर्थ और राजनीतिक रूप से निष्पक्ष होनी चाहिए। वस्तुतः विल्सन पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने राजनीतिक रूप से तटस्थ लोक सेवा का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। इन्होंने बड़ी बुद्धमत्ता से लोकतंत्र में लोक सेवकों के विकास के लिए सही मार्ग-दर्शन चित्रित किया। इस प्रकार विल्सन ने आधुनिक सेवीवर्गीय प्रशासन की

आध्यात्मिक आधार शिला की नींव रखी। अमेरिका में लोक सेवकों के सुधार में जो प्रयास किये जा रहे थे वे सम्पूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार की शुरूआत थी। ये सुधार जो सेवा को पक्षपात विहीन बनाने का इरादा रखते थे, ने प्रशासन को व्यवसाय के समान चलाने का रास्ता दिखाया। नियुक्तियों में सुधार, कार्यपालिका के कार्यों में सुधार व क्रियाओं पर भी लागू होना चाहिए। उपरोक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि वुडरो विल्सन सिविल सेवा सुधार के अग्रदूत थे। उन्होंने पेशे से योग्य और राजनीतिक रूप से तटस्थ सार्वजनिक कर्मचारियों जो सिविल सेवा का अधार बने, का विचार प्रदान किया। विल्सन में इस प्रकार आधुनिक कार्मिक प्रशासन का बौद्धिक आधार मिलता है। यह नीबूर थे, जिन्होंने बेधड़क कहा था, स्वतंत्रता अतुलनीय रूप से संविधान की अपेक्षा प्रशासन पर निर्भर करती है। यह एक महत्वपूर्ण अवलोकन है, जिसमें व्यापक सच्चाई निहित है। प्रशासन एक निरन्तर प्रक्रिया है और समाज में यह असंख्य बिन्दुओं में सक्रिय रहती है। एक व्यक्ति की स्वतंत्रता इसी प्रकार के प्रशासनिक बन्दोबस्त और क्रियाओं का परिणाम है। लोक प्रशासन सार्वजनिक कानून का विस्तृत एवं व्यवस्थित क्रियान्वयन है। सामान्य कानून का प्रत्येक क्रियान्वयन प्रशासन का एक कार्य है।

कर निर्धारण और संग्रह, अपराधी को फांसी, डाक भेजना और वितरण, थल और जल सेना में भर्ती और इनका शस्त्रीकरण इत्यादि, स्पष्ट रूप से प्रशासन के कार्य हैं। लेकिन सामान्य कानून जो इन समस्त कार्यों को सम्पन्न करने के निर्देश देते हैं, वे प्रशासन के बाहर और ऊपर हैं। सरकार के कार्यों की व्यापक योजनाएँ प्रशासनिक नहीं हैं। लेकिन इन योजनाओं का व्यापक क्रियान्वयन प्रशासनिक है, जैसा कि हमारा अनुभव दर्शाता है। स्वतंत्रता के वास्तविक प्रयोग की सुविधा मौलिक अधिकारों के माध्यम से संवैधानिक प्रत्याभूतियों (गारंटी) की अपेक्षा प्रशासनिक व्यवस्थाओं पर अधिक निर्भर करती हैं। लेकिन यह भी उतना ही सत्य है कि एक समाज बिना प्रत्याभूतियों सहित प्रभावशाली संवैधानिक व्यवस्थाओं से स्वतंत्रता का आनन्द नहीं उठा सकता। वुडरो विल्सन के इस अवलोकन से यह प्रश्न बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि ''स्वतंत्रता संवैधानिक सिद्धान्त से पृथक् नहीं हो सकती और कोई भी प्रशासन कितना ही पूर्ण और अनुदारवादी क्यों ना हो, वह अगर सरकार के अनुदारवादी सिद्धान्तों पर आधारित है तो वह व्यक्तियों को घटिया और नकली स्वतंत्रता ही दे सकता है।''

समाज में प्रशासन के महत्व में वृद्धि को देखते हुए वुडरो विल्सन ने सुयोग्य प्रशासक को तैयार करने के लिए औपचारिक प्रशासनिक व्यवस्थाओं की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है। उन्होंने संस्तुति की कि ''प्रजातन्त्र को संगठित करने के लिए लोक सेवकों के लिए प्रतियोगितात्मक परीक्षाएँ (इन्हें लोक सेवा अधिनियम 1883, जिसे पैन्डलटन अधिनियम भी कहा जाता है, दिया गया है) होनी चाहिए, जिनकी परीक्षा उदार के साथ-साथ तकनीकी ज्ञान के लिए भी होगी।'' उन्होंने स्पष्ट कहा कि ''तकनीकी में प्रशिक्षित लोक सेवा अब पूर्णतः अपरिहार्य हो गयी है।'' प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में स्वयंसिद्ध प्रशासनिक सिद्धान्तों और तकनीकों के अध्ययन और क्रियान्वयन पर बल दिया जाना चाहिए। वहाँ पर यह ध्यान देने योग्य है कि विल्सन उदार शिक्षा के समर्थक थे। जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में सम्पन्न होने वाली प्रतियोगितात्मक परीक्षाएँ एक उम्मीदवार के तकनीकी (विषय विशेष सम्बन्धी) ज्ञान की परीक्षा करती थी। केवल वरिष्ठ कार्यपालिका सेवा की 'द्वितीय इवर समिति' द्वारा संस्तुति के पश्चात ही, अमेरिकी प्रशासन के उदार परीक्षण के आधार पर प्रतियोगितात्मक परीक्षाएँ प्रारम्भ हुई।

2.3.6 तुलनात्मक लोक प्रशासन

विल्सन तुलनात्मक लोक प्रशासन के प्रवर्तक के रूप में भी जाने जाते हैं। विल्सन ने दार्शनिक विधि को अस्वीकार करते हुए ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक विधि पर जोर डाला। वे चाहते थे कि विश्व के अन्य देशों से भी लोक प्रशासन के अच्छे सिद्धान्तों का अध्ययन करके अमेरिका में लागू किया जाए, फलस्वरूप अमेरिका का प्रशासन सबसे अच्छा हो सके।

विदेशी सरकारों के तुलनात्मक अध्ययन से यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि इनमें संरचनात्मक समरूपता होती है। विल्सन ने कहा कि ''एक स्वतंत्र मानव में वे ही सब शारीरिक अंग होते हैं, वे ही कार्य करने वाले भाग होते हैं जो एक दास में होते हैं। उसके इरादे, सेवाएँ और ऊर्जा भिन्न क्यों ना हो।'' राजतंत्र और प्रजातंत्र अन्य बातों में एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं, लेकिन वास्तव में इनके कार्य करीब-करीब समान होते हैं।

इसका अभिप्राय बिना सोचे समझे प्रशासनिक संस्थाओं और प्रक्रियाओं का प्रत्यारोपण नहीं है। एक देश की प्रशासनिक संस्थाएँ दूसरे देश में जबरदस्ती थोपी नहीं जा सकती हैं। विल्सन का मत था कि अमरीकी व्यवस्था में विदेशी व्यवस्थाओं का प्रत्यारोपण सफल नहीं हो सकता। लेकिन क्यों नहीं ऐसे विदेशी अविष्कारों के भागों को जिन्हें हम चाहते हैं और जो थोड़ा भी उपयोगी हो सकते हैं, अपना लें, हमें अपरिचित प्रयोग से खतरा नहीं है। हमने विदेशों से चावल आयात किया, लेकिन चावल चौपस्टिक से नहीं खाते। हमने समस्त राजनीतिक भाषा इग्लैण्ड से उधार ली है, लेकिन हमने इसमें से 'राजा' और 'लार्ड' जैसे शब्द पृथक कर दिए हैं। अगर हम इनकी विशेषताओं के आवश्यक अन्तर को समझ लेते हैं तो हम प्रशासन के विज्ञान को पूर्ण सुरक्षा और लाभ के साथ उधार ले सकते हैं। हमें इसे केवल अपने संविधान के माध्यम से छानना है। आलोचना की धीमी आंच के ऊपर रखना और इसे विदेशी गैसों से परिशोधित करना है।

विल्सन का विचार है कि तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग प्रशासन के क्षेत्र की अपेक्षा अन्यत्र कहीं भी लाभदायक नहीं हो सकता। उन्होंने कहा था ''अन्ततः सर्वोत्तम होगा कि हम अपने वातावरण से दूर हो जाऐं और ऐसी व्यवस्थाएँ, जैसे फ्रान्स और जर्मनी की व्यवस्थाओं का सावधानी से परीक्षण करें। ऐसे जनसम्पदा साधनों से अपनी संस्थाओं को देखने में हम स्वयं को वैसे ही देखते हैं, जैसे विदेशी हमें देखें। अगर वे हमें पूर्वाग्रहों के बिना देखना चाहें। स्वयं के बारे में अगर हम केवल अपने को ही जानते हैं, तो हम कुछ नहीं जानते।'' वुडरो विल्सन की धारणा थी कि ''एक चाकू को तेज करने की विधि एक हत्यारे से भी सीखी जा सकती हैं।'' उन्होंने चेतावनी दी कि ''हमारी राजनीति सभी सिद्धान्तों और व्यवस्थाओं की मुख्य कसौटी होनी चाहिए। ये केवल पूर्ण अनुभव द्वारा ही स्वीकृत नहीं, बल्कि अमरीकी स्वभाव के अनुकूल भी होनी चाहिए। इसके सैद्धान्तिक पूर्णता के लिए बिना हिचकिचाहट के अंगीकृत किया जाना चाहिए।

वुडरो विल्सन के मुख्य विचारों को संक्षेप में बताया जा सकता है-

- प्रशासन का महत्व समाज कल्याण की दिशा में निरन्तर बढ़ता जा रहा है।
- प्रशासन को 'विज्ञान' कहा जा सकता है।
- व्यक्तियों को प्रशासन के सिद्धान्त एवं तकनीकें सिखाई और पढ़ाई जा सकती हैं।
- प्रशासन के कार्य निष्पक्ष, व्यापक और प्रबन्धकीय (व्यवसाय सामान) होते हैं।
- प्रशासन की प्रक्रियाएँ और तकनीकें होती हैं, जो सार्वभौमिक रूप से लागू होती हैं। इसलिए सभी आधुनिक सरकारों के लिए समान होती हैं।
- प्रशासन ज्ञान का क्षेत्र है, जिसे महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में ग्रहण किया जा सकता है।
- प्रशासन राजनीति से पृथक है।
- प्रशासनिक अध्ययन में अन्य सरकारों के अनुभवों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न-

1. लोक प्रशासन के जनक कौन थे? इनका जन्म कहाँ हुआ था?

2. वुडरो विल्सन की कतिपय रचनाएँ कौन-कौन सी हैं?
3. राजनीति-प्रशासन द्वैतभाव से क्या तात्पर्य है?
4. तटस्थ सेवा सिद्धान्त क्या है।

2.4 सारांश

वुडरो विल्सन जिन्हें लोक प्रशासन का जनक माना जाता है, का लोक प्रशासन में बड़ा सम्मान किया जाता है। जून 1887 में 'पॉलिटिकल साइन्स क्वार्टरली' में छपे अपने लेख 'द स्टडी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' के पश्चात ही एक अध्ययन अनुशासन के रूप में लोक प्रशासन की विकास यात्रा प्रारम्भ हुई। आठ साल तक अमेरिका के राष्ट्रपति तथा प्रिन्सटन विश्वविद्यालय में राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर रहे विल्सन की ख्याति किसी से सानी नहीं है।
अपने लेख में विल्सन ने ''राजनीति-प्रशासन द्वैतभाव'' के विचार का समर्थन किया और इस बात की वकालत की कि राजीनतिक प्रश्न, प्रशासनिक प्रश्नों से भिन्न होते हैं। देश का संविधान बनाना उनके मत में आसान है, किन्तु उसे चलाना कठिन। उसे चलाने पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। विल्सन लोक प्रशासन को विधि के विस्तृत और व्यवस्थित क्रियान्वयन के रूप में परिभाषित सकते हैं और प्रशासन के विज्ञान पर बल देते हैं।
राजनीति और प्रशासन के सम्बन्धों पर विल्सन के विचार उलझे हुए मालूम पड़ते हैं, क्योंकि कहीं-कहीं तो वे राजनीति और प्रशासन के बीच घनिष्ठ सम्बन्धों की चर्चा करते हैं, तो कहीं राजनीति और प्रशासन को अलग-अलग करके देखने की वकालत करते हैं।
विल्सन प्रशासन और जनमत के सम्बन्धों की भी चर्चा करते हैं और इस बात का परीक्षण करते हैं कि प्रशासन के संचालन में जनमत के किस भाग को लेना चाहिए। इसी प्रकार विल्सन तकनीकी रूप से शिक्षित सिविल सेवा की वकालत करते हैं। प्रशासन के अध्ययन की विधियों की चर्चा करते हुए विल्सन तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक पद्धतियों की उपादेयता स्पष्ट करते हैं तथा दार्शनिक पद्धति को अस्वीकार करते हैं। निःसन्देह विल्सन के पथ-प्रदर्शक योगदान के लिए लोक प्रशासन सदैव उनका ऋणी रहेगा।

2.5 शब्दावली

द्वैतभाव- दो तरह के भाव, जनमत- जनता का मत, लोकतंत्र- जनता के द्वारा चुने गये लोग, आरूढ़- बैठकर, अभिष्ठ- चाहना, सन्निहित- शामिल, जब्ब- विलीन होना या मिल जाना, उपादेयता- उपयोगिता

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. लोक प्रशासन के जनक वुडरो विल्सन थे। इनका जन्म अमेरिका के वर्जनिया राज्य में हुआ था।
2. रचनाओं वाले शीर्षक के अन्तर्गत अध्ययन करें।
3. योगदान वाले शीर्षक में उत्तर निहित है।
4. लोक सेवा नामक शीर्षक में उत्तर समाहित है।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रशासनिक विचारक- श्री राम माहेश्वरी।
2. द गैलेक्सी आफ एडमिनिस्ट्रेटिव थिंकर्स- पी0 बी0 राठौर।
3. प्रशासनिक एवं प्रबन्ध चिंतक- एस0 एल0 गोयल।
4. लोक प्रशासन- डॉ0 बी0एल0 फड़िया।

5. प्रमुख प्रशासनिक विचारक- नरेन्द्र कुमार थोरी।

2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रमुख प्रशासनिक विचारक- नरेन्द्र कुमार थोरी, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स।
2. प्रशासनिक विचारक, आर0 पी0 जोशी एवं अंजु पारीक, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. विल्सन द्वारा लोक प्रशासन के क्षेत्र में योगदान की समीक्षा कीजिए।
2. विल्सन के मुख्य विचारों की विवेचना कीजिए।

इकाई- 3 हेनरी फेयोल

इकाई की संरचना

3.0 प्रस्तावना
3.1 उद्देश्य
3.2 हेनरी फेयोल- एक परिचय
3.3 प्रबन्धन बनाम प्रशासन
3.4 हेनरी फेयोल: प्रबन्धन और औद्योगिक उपक्रम
3.5 प्रबन्धन के तत्व
3.6 प्रशासन के सिद्धान्त
3.7 वैज्ञानिक प्रबन्धन और फेयोल
3.8 फेयोल और प्रकार्यात्मकावाद
3.9 फेयोल के सिद्धान्तों में सार्वभौमिकता
3.10 सारांश
3.11 शब्दावली
3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.14 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.15 निबन्धात्मक प्रश्न

3.0 प्रस्तावना

प्रबन्धन विचारधारा पश्चिम की देन है। इसकी जड़ें यूनान तक फैली हुई हैं। प्लेटो और अरस्तु ने वैज्ञानिक पद्धति की नींव डाली। 19वीं सदी के दौरान यूरोप और अमेरिका में प्रशासन के अध्ययन के क्षेत्र में क्रान्ति की एक बाढ़ आ गई। यह क्रान्ति थी प्रबन्धन या प्रशासन को वैज्ञानिकता प्रदान करने की और इस क्रान्ति के अगुआ थे फ्रेडरिक टेलर (1856-1915) और हेनरी फेयोल (1841-1925)। यहाँ हमारा विषय है- हेनरी फेयोल के प्रशासनिक सिद्धान्त।

आप पढेंगे कि किस तरह एक खनन कम्पनी के इन्जीनियर की हैसियत से फेयोल ने अपना कैरियर आरम्भ किया और अपनी प्रशासकीय दक्षता से एक जर्जर कम्पनी को सफलता की ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया। यह कमाल था, नये नजरिये का और गहरी सोच का। हेनरी फेयोल कम्पनी से एम0डी0 की हैसियत से रिटायर हुये। लेकिन जीवन के अन्त तक उसके निदेशक बने रहे। रिटायरमेंट के बाद अब आराम का समय था, लेकिन फेओल ने जो कुछ अनुभव लिया था, उस पर चिन्तन करना आरम्भ किया।

इस चिन्तन का नतीजा है उनका महान ग्रन्थ 'जनरल एण्ड इण्डस्ट्रियल मैनेजमैन्ट।' इस ग्रन्थ ने प्रबन्धन/प्रशासन को वैज्ञानिक बना दिया, उसको सार्वभौमिकता प्रदान की और ऐसे सिद्धान्त प्रतिपादित किये जिनसे छुटकारा पाना कठिन है।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- एक प्रबन्धक निदेशक (फेयोल) किस तरह एक प्रशासनिक चिन्तक बना, इसे जान पायेंगे।
- अनुभवात्मक पद्धति ने किस तरह प्रबन्धन की अवधारणा को वैज्ञानिकता प्रदान की, इसे समझ पायेंगे।
- प्रबन्धन और प्रशासन में अन्तर क्या है, इसे जान पायेंगे।
- प्रबन्धन /प्रशासन के तत्व क्या हैं और प्रशासन किन सिद्धान्तों पर टिका है, इसे समझ पायेंगे।

3.2 हेनरी फेयोल- एक परिचय

निजी उद्यमों पर सरकारी कार्यालयों को चलाने के लिए पश्चिमी जगत में प्रबधन (Management) पर बहुत कुछ लिखा गया है। फ्रेडरिक टेलर तथा हेनरी फेयोल ऐसे दो विचारक हैं, जिन्होंने प्रबन्धन के अनुभावात्मक अध्ययन के लिये वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर जोर दिया है। हेनरी फेयोल को प्रबन्धन प्रक्रिया विचारधारा (Management process school) का प्रतिपादक माना जाता है। इसलिये आपको यह समझना है कि प्रशासन के क्षेत्र में वैज्ञानिक प्रबन्धन एक क्रान्ति है और इस क्रान्ति का अगुआ फेयोल हैं।

हेनरी फेयोल ने तुर्की के प्रसिद्ध नगर कुसतुनतुनिया में सन् 1841 को जन्म लिया। लेकिन फेयोल तुर्कीस नहीं था, फ्रान्सीसी था। उसने खादानों के स्कूलों में शिक्षा प्राप्त की। 19 वर्ष की आयु में वह एक खदान कम्पनी में इन्जीनियर हो गया। सन् 1888 में वह अपनी प्रतिभा के बल-बूते पदोन्नति पाकर इसी कम्पनी का मैनेजिंग डायरेक्टर बन गया। 30 वर्ष तक वह इस पद पर बना रहा। दिसम्बर 1925 में उसका देहान्त हुआ। कम्पनी में एम0डी0 की हैसियत से जिस तरह उसने काम किया वह फ्रान्स के उद्योग इतिहास में वह अमर हो गया। जिस बात के लिये उसे याद किया जाता रहेगा वह उसकी योग्यता, कर्मठता या दक्षता नहीं है बल्कि प्रबन्धन की वह व्यवस्था है, जिसको उसने विकसित किया और लागू किया।

सेवानिवृत्त होने के बाद उसने अपना सारा समय प्रबन्धन और प्रशासन के सैद्धान्तिक पहलुओं के अध्ययन पर लगा दिया। उसने ‘सेन्टर फॉर एडमिनिस्ट्रेटिव स्टडीज’ की फ्रान्स में स्थापना की। इस संस्था का गहरा प्रभाव फ्रान्स के वाणिज्य, सेना और नेवी पर पड़ा। फ्रान्सीसी शासन द्वारा प्रशासन के सिद्धान्तों पर ध्यान देने के पीछे फेयोल का बड़ा हाथ था।

फेयोल तकनीकी, वैज्ञानिक और प्रबन्धकीय विषयों पर लिखने वाला बड़ा निर्णायक लेखक था। उसकी सबसे महत्वपूर्ण पुस्तक ‘जनरल एण्ड इण्डिस्ट्रियल मेनेजमैन्ट’ है जो सन् 1916 में प्रकाशित हुई। फेयोल का एक शोध-पत्र ‘दि थ्योरी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दि स्टेट’ जो सन् 1923 में प्रशासनिक विज्ञान की दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस में फेयोल ने प्रस्तुत किया, उसे लोक प्रशासन के सिद्धान्त में एक बड़ा योगदान माना गया है।

3.3 प्रबन्धन बनाम प्रशासन

‘प्रबन्धन’ और ‘प्रशासन’ जैसी शब्दावली पर तब विवाद छिड़ गया, जब फेयोल ने अपनी पहली रचना के लिये ‘प्रशासन’ शब्द का प्रयोग किया, लेकिन जब इस ग्रन्थ (Administration Industrielle et Générale) का अंग्रेजी में अनुवाद किया गया तो शब्द ‘प्रबन्धन’ का प्रयोग हुआ। ब्राडी के अनुसार ‘प्रबन्धन’ के स्थान पर ‘प्रशासन’ शब्द का प्रयोग करना अधिक उचित है। लेकिन आपको एक बात याद रखना होगी कि फेयोल ने व्यापार प्रबन्धन और लोक प्रशासन में कहीं भी कोई अन्तर नहीं बताया है।

आमतौर पर अंग्रेजी भाषाई देशों में प्रबन्धन का सम्बन्ध औद्योगिक और वाणिज्य सम्बन्धी उद्यमों की गतिविधियों से जोड़ा जाता है। जबकि लोक प्रशासन का सम्बन्ध शासकीय क्रिया-कलापों से बताया जाता है। लेकिन फेयोल का तर्क है कि प्रबन्धन और लोक प्रशासन में भेद करना अनुचित है। उसने अपने शोध पत्र में लिखा, ''मैंने 'प्रशासन' शब्द को जो अर्थ दिया है, वह प्रशासनिक विज्ञान के क्षेत्र को विस्तृत करता है। इसमें लोक सेवाऐं भी शामिल हैं। सभी प्रकार के उपक्रमों को योजना, संगठन, आदेश, समन्वय और नियंत्रण की आवश्यकता होती है। प्रशासनिक विज्ञान के अनेक प्रकार नहीं हो सकते। केवल एक ही विज्ञान है जो निजी और लोक मामलों पर समान रूप से लागू होता है।

फेयोल का मानना था कि प्रबन्धन या प्रशासन के अध्ययन को उपभागों में विभाजित करना कठिन है। कुछ विद्वानों का मानना है कि फेयोल केवल औद्योगिक प्रबन्धन को अपना विश्लेषण क्षेत्र बनाना चाहता था। लेकिन प्रबन्धन के बारे में उसके विचारों में सार्वभौमिकता है। यह बात उसके इस कथन से सिद्ध होती है कि ''प्रबन्धन सरकारी उपक्रमों(Undertakings) में एक महत्वपूर्ण भाग अदा करता है, चाहे वे उपक्रम छोटे हों या बड़े, औद्योगिक हो या व्यापार सम्बन्धी, राजनीतिक हों या धार्मिक।''

3.4 हेनरी फेयोल: प्रबन्धन और औद्योगिक उपक्रम

अब तक हमने आपको यह समझाने का प्रयास किया है कि लोक प्रशासन के क्षेत्र में वैज्ञानिक प्रबन्धन की अवधारणा ने वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था को बहुत प्रभावित किया है और इसका बहुत कुछ श्रेय फेयोल को जाता है। वह प्रबन्धन और प्रशासन को दो अलग-अलग शास्त्र नहीं मानता है। यहाँ यह भी याद रखना चाहिए कि क्योंकि फेयोल ने खनन से सम्बन्धित एक व्यवसायिक कम्पनी में इंजीनियर से लेकर महाप्रबन्धक(एम0डी0) की हैसियत से काम किया था, इसलिये वह औद्योगिक उपक्रमों से सम्बन्धित प्रबन्धन का माहिर था। उसके अनुसार एक औद्योगिक उपक्रम की सम्पूर्ण गतिविधियों को छः भागों में बांटा जा सकता है, वे इस प्रकार से हैं-

1. **तकनीकी गतिविधियां-** इनमें उत्पादन और निर्माण कार्य इत्यादि आते हैं। प्रगति और विकास के लक्ष्य को पाने के लिये यह गतिविधियां बहुत महत्वपूर्ण हैं।
2. **वाणिज्य सम्बन्धी गतिविधियां-** क्रय, विक्रय और वस्तु विनिमय इनमें आती हैं। व्यापार क्रियाओं का ज्ञान बहुत अनिवार्य है। व्यापार से सम्बन्धित अध्ययन बाजार पर, माँग और पूर्ति पर, प्रतियोगिता और वित्त की स्थिति पर नजर रखता है।
3. **वित्तीय गतिविधियां-** यहाँ पूँजी महत्वपूर्ण विषय है। पूँजी जुटाना और उसका अधिकतम उपयोग करना वित्तीय गतिविधि का महत्वपूर्ण पहलू है। कर्मचारियों, मशीनों, कच्चे माल इत्यादि के लिये पूँजी अनिवार्य हैं। यह तभी सम्भव है, जब वित्तीय प्रबन्धन चुस्त-दुरूस्त हो।
4. **सुरक्षा गतिविधियां-** इसमें सम्पत्ति और व्यक्तियों की सुरक्षा आती है। चोरी, आग, बाढ़ और ऐसे समस्त सामाजिक परेशानियां, जैसे- दंगे, उत्पात और हड़तालें औद्योगिक उत्पादन को प्रभावित करते हैं। इनसे गतिविधियों को सुरक्षित रखना अनिवार्य है।
5. **लेखा-जोखा गतिविधियां-** एक प्रभावशाली लेखा-व्यवस्था(Accounting) जिससे संगठन की वित्तीय स्थिति का सही आंकलन किया जा सके। प्रबन्धनकीय उपकरण का एक महत्वपूर्ण अंग होता है।
6. **प्रबन्धकीय गतिविधियां-** फेयोल प्रबन्धन को एक कार्य या क्रिया मानता है। प्रबन्धन में लगे लोगों पर वह अधिक ध्यान नहीं देता है। उसका विषय केवल क्रियाएँ हैं। लेकिन वह स्वीकार करता है कि जो उच्चतर पदों पर काम करते हैं और पद-सोपानीय व्यवस्था में ऊपरी स्तर पर होते हैं, वे अपना समय

कार्यों में अधिक लगाते हैं। प्रबन्धकीय क्रियाएँ पांच प्रकार की होती हैं- योजना, संगठन, आदेश, समन्वय और नियंत्रण।

फेयोल का मानना है कि भले ही संगठन की प्रकृति कैसी भी हो चाहे बड़ा हो या छोटा, सरल हो या जटिल, औद्योगिक विहीन अथवा लाभ विहीन, औद्योगिक प्रबन्धन की छ: गतिविधियां सदा बनी रहेंगी। यह फेयोल का ही आग्रह है कि प्रबन्धन को शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन का विषय होना चाहिए। वह इस बात से दु:खी था कि उसके समय तक प्रबन्धन का कोई सिद्धान्त नहीं था। इसीलिये उसने ''जनरल और इण्डस्ट्रियल मैनेजमैन्ट'' जैसे महान ग्रन्थ की रचना की।

3.5 प्रबन्धन के तत्व

हमने अभी आपको यह बताया कि फेयोल ने प्रबन्धकीय गतिविधियों को पांच तत्वों में विभक्त किया था। यहाँ आप 'प्रबन्धन' के स्थान पर 'प्रशासन' शब्द का भी प्रयोग कर सकते हैं, क्योंकि फेयोल दोनों में कोई अन्तर नहीं मानता है। इस कारण हम संक्षेप में इन पांच तत्वों- योजना, संगठन, आदेश, समन्वय और नियंत्रण का संक्षेप में वर्णन करेंगे-

1. **योजना-** योजना से फेयोल का अभिप्राय है कि पहले से किसी बात का ज्ञात होना, किसी बात को पहले से मान लेना, एक खाका तैयार करना। फेयोल की नजर में प्रशासन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात है, आगे बढ़ना या काम की योजना तैयार करना। योजना एक स्पष्ट तस्वीर सामने लाती है। उसमें समीपीय और दूरगामी रास्ते निश्चित किये जाते हैं। अनुभव यर्थाथवादी योजना की पूँजी है। फेयोल के अनुसार एकता, निरन्तरता, लचीलापन और संक्षिप्तता अच्छी योजना की विशेषताऐं हैं।
2. **संगठन-** फेयोल की नजर में संगठन, प्रबन्धन या प्रशासन का एक महत्वपूर्ण पहलू है। एक औद्योगिक संस्थान या सरकारी एजेन्सी को संगठित करने के लिए कच्चे माल, उपकरण, पूँजी, कर्मचारी इत्यादि सभी की आवश्यकता होती है। ऐसी गतिविधियां दो प्रकार की होती हैं- भौतिक संगठन तथा मानव संगठन। मानव संगठन में कर्मचारी, नेतृत्व और संगठन संरचना जैसे तत्व आते हैं। प्रत्येक संगठन में निम्न प्रबन्धकीय कार्य किये जाते हैं-
    - योजना की तर्कपूर्ण तैयारी और क्रियान्वयन;
    - मानवीय और भौतिक संगठन का स्रोतों, संसाधनों और लक्ष्यों के अनुरूप होना;
    - एक योग्य सत्ता की स्थापना;
    - क्रियाओं में समन्वय पैदा करना;
    - स्पष्ट, निश्चित और संक्षिप्त निर्णय;
    - योग्य, कर्मठ, निष्ठावान कर्मचारियों की भर्ती;
    - कत्तव्यों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना;
    - कर्मचारियों को उत्तरदायित्व निभाने के लिये प्रेरित और प्रोत्साहित करना;
    - सेवा के लिये कर्मचारियों को पुरस्कृत करना;
    - अनैतिक और अनुशासन आचरण के विरूद्ध प्रतिबंध लगाना;
    - अनुशासन के लिये माहौल तैयार करना;

- निश्चित करना कि व्यक्ति हित सामान्य हितों के अधीन है;
- आदेश की एकता पर ध्यान देना;
- मानव और भौतिक संगठन का निरीक्षण करना;
- नियंत्रण रखना तथा
- नियमों, लाल फीताशाही और कागजी कामों से बचना।

3. **आदेश-** हम पहले लिख चुके हैं कि किसी संगठन में आदेश ऊपर से नीचे की ओर आते हैं। आदेश देना एक कला है। फेयोल के अनुसार यह कला व्यक्तिगत गुणों और प्रबन्धन के सिद्धान्तों के ज्ञान पर निर्भर करती है। फेयोल के अनुसार एक प्रबन्धक जो आदेश देता है, उसमें निम्नलिखित विशेषताऐं होनी चाहिए-
   - सेवीवर्ग का उसे पूरा ज्ञान हो;
   - आयोग्य व्यक्तियों को वह हटाए;
   - प्रबन्धन के सिद्धान्तों का उसे पूरा ज्ञान हो;
   - स्वयं अच्छे उदाहरण प्रस्तुत करे;
   - संगठन का समय-समय पर आडिट करे;
   - अधीनस्थ अधिकारियों की बैठकें ले;
   - विस्तार का शिकार ना बने तथा
   - ऐसा प्रयास करे, जिससे कर्मचारियों में समर्पण की भावना पैदा हो।
4. **समन्वय-** संगठन में भौतिक संरचनाओं के साथ-साथ व्यक्तियों का बहुत महत्व होता है। व्यक्ति या कर्मचारी मशीन नहीं होते हैं। उनमें भावनाएँ और संवेदनशीलता होती हैं। मुख्य कार्यपालक का यह उत्तरदायित्व है कि वह इन मनोवैज्ञानिक तत्वों को समझ कर संगठन की गतिविधियों में समरसता लाये। प्रयास यह करे कि संगठन की एक इकाई दूसरी इकाई की पूरक हो और सब इस तरह काम करें कि संगठन का लक्ष्य पूरा हो जाये।
5. **नियंत्रण-** समन्वय तभी सम्भव है, जब मुख्य कार्यपालक का संगठन की समस्त गतिविधियों पर प्रभावशाली नियंत्रण हो। योजना के अनुसार कार्य होना चाहिए। प्रशासन के सिद्धान्तों को नजर में रखना चाहिए। निर्देशों तथा समादेशों के माध्यम से नियंत्रण प्रभावशाली हो सकता है। नियंत्रण का एक लक्ष्य अनुशासन और सदाचार को बनाये रखना है। मुख्य कार्यपालक की नजर पैनी होनी चाहिए। वह देखे, परखे, निरीक्षण करता रहे। जो सही करता है उसे प्रोत्साहित करे और जो गलत करता है उसे दण्डित करे। वह एहसास कराये कि वह जाग रहा है और सबको देख रहा है।

3.6 प्रशासन के सिद्धान्त

हम पहले आपको बता चुके है कि फेयोल की दृष्टि में प्रबन्धन और प्रशासन में कोई अन्तर नहीं है। हाँ इतना जरूर है कि जब आप औद्योगिक उपक्रम की बात करें तो प्रबन्धन शब्द का प्रयोग कर सकते हैं और जब सरकारी विभागों की बात करें तो प्रशासन शब्द का प्रयोग करना उचित होगा। दोनों सिद्धान्तों में कोई अन्तर नहीं है। वास्तव मे फेयोल प्रशासन शब्द का प्रयोग करना पसन्द करता है।

आप यहाँ पढेंगे कि जब प्रशासन या प्रबन्धन के सिद्धान्तों पर नजर डाली जाती है तो लौट-फेरकर हम वहीं आते हैं, जिनका वर्णन किसी ना किसी रूप में पहले किया जा चुका है। वास्तव में फेयोल यह समझाना चाहता है कि प्रशासन के सिद्धान्त कोई अन्तिम कानून नहीं है, उनमें लचीलापन है और वे समय और परिस्थितियों के अनुसार संगठन में लागू होते हैं। फेयोल ने प्रशासन के 14 सिद्धान्तों की ओर इशारा किया है। इनमें श्रम विभाजन या विशेषज्ञता, प्राधिकार या सत्ता, अनुशासन, आदेश की एकता, निर्देश की एकता, सामान्य हित को सर्वोच्चता, कर्मचारियों के मेहनताना की तार्किकता, केन्द्रीकरण, पदसोपानीय व्यवस्था, पद व्यवस्था, न्यायसगंत आचरण, स्थायित्व, पहल और एकता एवं समरसता आती है। संक्षेप में-

1. श्रम विभाजन का अर्थ है कि लोगों को उनकी योग्यता के अनुसार काम दिया जाये, ताकि कार्यों में तीव्रता और निपुणता आये।
2. प्राधिकार या सत्ता का अर्थ यह है कि संगठन में प्रत्येक स्तर पर अधिकारियों को निर्णय लेने और उन्हें लागू करने का अधिकार मिलना चाहिए। कार्य की तत्परता के लिये यह अनिवार्य है।
3. अनुशासन किसी संस्थान के लक्ष्यों की प्राप्ति की एक अनिवार्य शर्त है। यहाँ अनुशासन से अभिप्राय संगठन में लगे लोगों के मध्य मधुर और समरस रिश्तों से है।
4. आदेश की एकता प्रशासन का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है, जिसका अर्थ है कि अधीनस्थों का अपने क्षेत्र में एक ही साहब(मुख्य अधिकारी जो आदेश देता है) हो। अनेक साहब होने से असमंजस की स्थिति पैदा होती है।
5. निर्देशन की एकता भी अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि प्रत्येक योजना का एक अलग प्रमुख होना चाहिए। इससे कार्य की पूर्ति में उलझाव नहीं होता है।
6. सामान्य हित एक लक्ष्य है, यहाँ व्यक्तित्व हितों को त्यागना होगा।
7. मेहनताने में तार्किकता होनी चाहिए। कर्मचारियों को कम से कम इतना मेहनताना दिया जाये जिससे वे संतुष्ट हों।
8. केन्द्रीकरण भी अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि निर्णय लेने या पहल करने का अधिकार संगठन के प्रमुख का होना चाहिए। प्रमुख अपनी इस शक्ति को परिस्थितियों के अनुसार हस्तान्तरित कर सकता है।
9. पद-सोपानीय व्यवस्था, प्रशासन का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। इसका अर्थ है कि संगठन में आदेश और अनुपालन ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर प्रत्येक स्तर (चैनल) से होकर गुजरे। इससे किसी स्तर पर मनोवैज्ञानिक तनाव नहीं पैदा होगा।
10. व्यवस्था का अर्थ है कि संगठन की संरचना के बाद व्यक्तियों को उनकी योग्यतानुसार उचित पद पर नियुक्ति मिले ताकि वे अपनी प्रतिभा के अनुसार संगठन को अपना अधिकतम योगदान दे सकें।
11. न्यायसंगत आचरण संगठन की सफलता के लिये बहुत अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि कर्मचारियों या अधिकारियों को कार्यों के प्रति निष्ठावान बनाये रखने के लिये उनके साथ न्याय-संगत व्यवहार करना चाहिए। सहानुभूति, संवेदनशीलता और विनम्रता के द्वारा ऐसा किया जा सकता है।
12. स्थायित्व का अर्थ है कि कर्मचारियों की नौकरियां स्थायी हों। हर समय उन के सिर पर नौकरी की अनिश्चितता की तलवार ना लटकती रहे। सेवा की शर्तें तार्किक होनी चाहिए।
13. पहल का अर्थ है कि संगठन के बारे में नई-नई बातें सोची जायें। जो तर्क-संगत हो उस पर निर्णय लेने में देर ना की जाये। पहल (इनीशिएटिव) में प्रशासन की सफलता का रहस्य छिपा होता है।
14. सद्-भावना का प्रशासन में अर्थ यह है कि एक संगठन के कर्मचारियों/अधिकारियों के मध्य बहुत मधुर सम्बन्ध हों। रिश्तों की समरसता और एकता संगठन की सफलता की कुंजी है।

15. प्रबन्धन या प्रशासन के सिद्धान्तों के प्रतिपादन के बाद हैनरी फयोल सेवीवर्ग या कर्मचारियों को अपने-अपने क्षेत्र में दक्षता प्रदान करने के लिये प्रशिक्षण के महत्व पर बल देता है। उसका मानना है कि कर्मचारियों को सतत् और निरन्तर प्रशिक्षण की प्रक्रिया से गुजरते रहना चाहिए। वह शिक्षा संस्थाओं में प्रबन्धन की शिक्षा का हामी है। प्रत्येक स्तर पर पाठ्य-क्रम में प्रबन्धन को शामिल करना चाहिये। इसका एक कारण है कि व्यक्ति को हर कदम पर घर से लेकर व्यवसाय या नौकरी पेशे तक प्रशासन की आवश्यकता होती है। इसलिये प्रशासन या प्रबन्धन का ज्ञान होना और उसमें माहिर होना आज की जरूरत है। अतः प्रशिक्षण को भी प्रशासन का एक सिद्धान्त ही मानना चाहिये।

3.7 वैज्ञानिक प्रबन्धन और फेयोल

अगर आप यूनानी दार्शनिक अरस्तु को पढ़ें तो आपको पता चलेगा कि उसने यर्थाथ और अनुभव को अपने अध्ययन का माध्यम बनाया था। इसीलिये कहा जाता है कि अरस्तू का दृष्टिकोण या अध्ययन पद्धति वैज्ञानिक थी। वर्तमान में फ्रेडरिक टेलर और हैनरी फयोल ये दो ऐसे चिन्तक हैं, जिन्होंने प्रबन्धन के अध्ययन के लिये बहुत सुधरी हुई वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया। फेयोल ने वैज्ञानिकता के आधार पर प्रबन्धन की एक निश्चित अवधारणा का प्रतिपादन किया और इसीलिये उसे 'प्रबन्धन प्रक्रिया विचारधारा' (Management process school) का जनक माना जाता है। फ्रेडरिक टेलर एक अमेरीकी चिन्तक था और उसका नाम पहले ही वैज्ञानिक प्रबन्धन से जुड़ा हुआ था। लेकिन फेयोल की विशेषता यह है कि उसने प्रबन्धन की अवधारणा को पारम्परिक सीमा से निकाल कर एक नया आयाम दिया। अनेक विचारक यह मानते हैं कि वैज्ञानिक प्रबन्धन की पहल वास्तव में फेयोल ने ही की है। उसका ग्रन्थ 'जनरल एण्ड इन्डस्टियल मैनेजमेन्ट' उत्कृष्ट श्रेणी का एक महत्वपूर्ण अध्ययन और शास्त्रीय प्रबन्धन का एक प्रशंसनीय नमूना माना जाता है। यह पुस्तक प्रबन्धन के सिद्धान्तों को प्रस्तुत करती है।

फेयोल द्वारा प्रस्तुत की गई प्रकार्यात्मकतावाद (Functionalism) की अवधारणा पर एडम स्मिथ के 'श्रम विभाजन के सिद्धान्त' का गहरा प्रभाव पड़ा है, क्योंकि फेयोल स्वंय एक कार्यपालक था, इसलिये उसकी प्रबन्धन के बारे में विचारधारा उसके अनुभव का परिणाम थी। उसका दृष्टिकोण पूरी तरह वैज्ञानिक और तकनीकी था।

यहाँ एक बात और याद रखना है कि हेनरी फेयोल और फ्रडरिक टेलर दोनों की तुलना करना आसान है, क्योंकि दोनों ही वैज्ञानिक प्रबन्धन के अगुआ माने जा सकते हैं। दोनों का सम्बन्ध उद्योग क्षेत्र से था, इसलिये उनका अध्ययन और सिद्धान्त उनके अनुभव और व्यवहारिकता का परिणाम है। फेयोल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसके अध्ययन में सार्वभौमिकता है। प्रबन्धन से सम्बन्धित उसके सिद्धान्त किसी भी प्रकार के कार्यो और संगठन पर लागू किये जा सकते हैं। वह किसी भी कार्य की संरचना की बात करता है। यहाँ वह तीन बातों को महत्वपूर्ण मानता है- प्राक्रयाऐं, भौतिक संसाधन और व्यक्ति। इन तीन तत्वों में ताल-मेल बैठना प्रबन्धन के क्षेत्र में आता है। यह एक यांत्रिकी दृष्टिकोण है, लेकिन किसी भी प्रकार के संगठन या कार्यों पर लागू किया जा सकता है।

3.8 फेयोल और प्रकार्यात्मकतावाद

फेयोल ने प्रकार्यात्मकतावाद की ओर इशारा किया गया था। यहाँ हम आपको यह समझायेंगे कि प्रकार्यात्मकतावाद है क्या? और इस बारे में फेयोल की राय क्या थी?

संगठन के निर्माण के दो सिद्धान्त हो सकते हैं। पहला- पारम्परिक या प्रकार्यात्मक सिद्धान्त, यह सिद्धान्त समझाता है कि सगंठन की एक संरचना है जो कुछ सिद्धान्तों पर टिकी है। निरन्तर उन्हीं सिद्धान्तों का प्रयोग करके संगठन का निर्माण होता रहता है। दूसरा दृष्टिकोण यह है कि जिस प्रकार के कार्य हों, उसी प्रकार से संगठन का निर्माण

होता है। इस दूसरे दृष्टिकोण का प्रतिपादन फेयोल ने किया है। उसने प्रकार्यात्मक वर्गीकरण पर बहुत जोर दिया है। फेयोल का मानना है कि प्रत्येक संगठन के उसके लक्ष्य के अनुसार कार्य होते हैं। उसका कहना है कि एक संरचनात्मक पदसोपानीय व्यवस्था में जो लगभग स्थायी होती है प्रक्रियाओं, भौतिक संसाधनों और लोगों को इस तरह से तैयार करना या उनका प्रबन्ध करना कि लक्ष्य की अधिकतम पूर्ति हो सके, प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण है। यह एक यांत्रिकी (Mechanistic) दृष्टिकोण है। इसके माध्यम से संगठनों और उनके व्यवहारों (क्रियात्मकता) को समझना आसान हो जाता है। एक तरह से फेयोल के प्रकार्यात्मक सिद्धान्त को व्यवहारवादी विज्ञानों की श्रेणी में लाया जा सकता है।

फेयोल का प्रकार्यात्मकतावाद इतना प्रसिद्ध हुआ कि उसे फेयोलवाद भी कहा जाने लगा और इसी के साथ फेयोलवाद की आलोचना भी शुरू हो गयी। एक ओर जहाँ उर्विक ने फेयोल के प्रकार्यात्मकवाद की प्रशंसा की, वहीं पीटर ड्रकर ने फेयोल के दृष्टिकोण पर कड़ा हमला किया। ड्रकर का कहना है कि फेयोल ने संरचनात्मक पहलू की अवहेलना करके और एक आदेश या 'सार्वभौम्य' यांत्रिकी मॉडल का विचार रखकर संगठन की अवधारणा को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किया है।

प्रकार्यात्मकता, जिस पर फेयोल ने जोर दिया है अनुभववाद पर आधारित है। अर्थात् संगठन की गतिविधियों का अध्ययन प्रयोग पर आधारित अनुभव के निष्कर्षों के अनुसार किया जा सकता है। फेयोल ने एक औद्योगिक कम्पनी में होने वाले कार्यों के आधार पर प्रकार्यात्मकतावाद का प्रतिपादन किया और वह इस नतीजे पर पहुँचा कि जिस कम्पनी में वह काम कर रहा था, वहाँ से प्राप्त तथ्य और उन तथ्यों पर आधारित निष्कर्ष की बुनियाद पर उसने जिन सामान्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, वे सभी प्रकार के संगठनों की आवश्यकताओं को पूरा करेंगे और चुनौतियों का सामना कर सकेंगे।

अनेक ऐसे प्रशासनिक विचारक हैं जो फेयोल के प्रकार्यात्मकता सिद्धान्त में झोल (गड़बड़ी) देखते हैं। जैसा कि हम पहले लिख चुके है कि पीटर ड्रकर उनमें से एक है। वह कहता है कि प्रकार्यात्मकता सिद्धान्त को सार्वभौम्य बताना फेयोल की गलती है। फेयोल खनन की जिस कम्पनी में काम कर रहा था, वह उसके समय में बहुत महत्वपूर्ण और बड़ी हो सकती है, लेकिन आज के सन्दर्भ में नये औद्योगिक संगठन अपने आकार में बहुत बड़े और जटिल हैं। इसलिए ड्रकर का कहना है कि अधिक विषम, अधिक जटिल, अधिक गतिशील और अधिक उद्यमी संगठन या गतिविधियां ऐसे कार्यों की मांग करते हैं, जो संगठन को चलाने में अत्यधिक सक्षम हों। प्रकार्यात्मक सिद्धान्त की यह विशेषता नहीं है। ड्रकर के अनुसार प्रकार्यात्मक सिद्धान्त की एक सीमा है और इसलिये वह छोटे आकार के संगठनों पर लागू हो सकता है। वह मात्र एक सिद्धान्त है, सर्वोच्च सिद्धान्त नहीं है।

बनार्ड चेस्टर और हर्बट साइमन ऐसे प्रशासनिक चिंतक हैं, जो फेयोल के सिद्धान्तों में अन्तर- द्वन्द देखते हैं। उनके अनुसार एक औपचारिक संगठनात्मक संरचना के बारे में कोरे सिद्धान्त अर्थहीन हैं। इन सिद्धान्तों के माध्यम से संगठनात्मक संरचना को समझा नहीं जा सकता। उनका तर्क यह है कि एक कार्यपालक के द्वारा जिस व्यवहार की योजना तैयार की जाती है, वह उस व्यवहार से अलग होती है जो बाद में यर्थात् में सामने आता है। फेयोल ने वास्तव में मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक बातों को जिनसे कर्मचारियों का व्यवहार प्रभावित होता है, अधिक महत्व नहीं दिया है।

3.9 फेयोल के सिद्धान्तों मे सार्वभौमिकता

लोक प्रशासन को विज्ञान का रूप देने के लिये फेयोल दो दिशाओं की ओर जाने का प्रयास करता है- सामान्य वक्तव्यों (Generalization) की ओर तथा अनुभववाद की ओर। इन दोनों विशेषताओं को मिलाकर वह प्रबन्धन

का एक सिद्धान्त तैयार करता है। निःसन्देह उसने प्रबन्धन का एक सार्वभौमिक सिद्धान्त प्रतिपादित किया है जो वाणिज्य, उद्योग, राजनीति, धर्म, युद्ध या समाज सेवा सब पर एक समान लागू होता है।

फेयोल ने लोक प्रशासन की समस्याओं पर खूब लिखा है। उसने टेलर की अनुभववादी पद्धति को स्वीकार करते हुये यह बताने का प्रयास किया है कि किसी उद्यम की सफलता सरल क्रमबद्धता (Method) के तार्किक ढंग से प्रस्तुत करने और लागू करने पर टिकी होती है। फेयोल ने प्रबन्धन की प्रक्रिया का एक क्रमबद्ध विश्लेषण किया और इस बात पर जोर दिया कि प्रशासन या प्रबन्धन को शिक्षा संस्थाओं या प्रतिष्ठानों में अध्ययन का विषय बनाना चाहिए।

फेयोल की एक और विशेषता यह है कि उसने संगठन की एक तार्किक पद्धति तैयार करने का प्रयास किया, ताकि उद्यम का मौलिक उद्देश्य पूरा हो सके। उसके अनुसार एक उद्यम अपने अस्तित्व के औचित्य को तभी सिद्ध कर सकता है, जब वह उपभोक्ताओं को उनकी अपेक्षाओं के अनुसार वस्तुऐं (माल) या सेवाऐं प्रदान कर सके। यदि यह लक्ष्य प्राप्त हो जाता है तो प्रबन्धकों और कर्मचारियों को उचित पुरस्कार देना चाहिए।

हम जैसा पहले आपको बता चुके है कि फेयोल प्रबन्धन को क्रियाओं (Functions) द्वारा निर्मित घटक मानता है, वह इन अवधारणों का अगुआ है। उसने प्रबन्धन की एक विस्तृत रूपरेखा तैयार की और एक ऐसा ढाँचा विकसित किया, जिससे लोक प्रशासन और प्रबन्धन के सिद्धान्तों को सार्वभौमिकता हासिल हो गयी। उसकी अवधारणा की एक और विशेषता यह है कि वह यह दावा करता है कि उच्च स्तर पर तकनीकी ज्ञान लुप्त हो जाता है, लेकिन प्रशासकीय दक्षता और ज्ञान का महत्व बना रहता है।

फेयोल के सिद्धान्तों की सार्थकता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि संगठन की संरचना करते समय एक प्रबन्धक योजनाओं में उसके सिद्धान्तों का सहारा लिये बिना नहीं रह सकता। विशेष रूप से निर्देशन की एकता का सिद्धान्त (प्रत्येक क्रिया के लिये एक प्रमुख और एक योजना) तथा आदेश की एकता का सिद्धान्त (एक व्यक्ति का एक साहब) हो। एक और सिद्धान्त जिसको आज लागू किया जाता है वह है- उत्तरादायित्व और सत्ता में समानता हो। इसका अर्थ है कि संगठन में लगे प्रत्येक व्यक्ति को उत्तरदायित्व के साथ सत्ता भी मिलनी चाहिए। अनेक विद्वान फेयोल के प्रकार्यात्मक संगठन को सर्वोत्तम मानते हैं। इसी तरह उसका पदसोपान का सिद्धान्त, जिसमें सत्ता के विभिन्न स्तर(चैनल) हैं, एक सर्वमान्य सिद्धान्त है।

कुछ आलोचकों का यह मानना है कि फेयोल अपने लेखों में मानवीय पहलू से बेखबर था। लेकिन ऐसा नहीं है। अल्बर्स के अनुसार फेयोल मानव पहलू के महत्व से अनभिज्ञ नहीं था। स्वयं फेयोल ने लिखा कि प्रत्येक ऐसा प्रशासनिक सिद्धान्त जो संगठन के मानवीय पहलू को मजबूती देता है, सिद्धान्त की श्रेणी में आता है।

संक्षेप में सिद्धान्तों की सार्वभौमिकता के सम्बन्ध में आप जिन निष्कर्षों पर पहुँच सकते हैं वे इस प्रकार हैं -

1. सामान्यीकरण अर्थात प्रशासन या प्रबन्धन के बारे में सामान्य वक्तव्य देना।
2. अनुभववादी पद्धति का प्रयोग करना अर्थात अनुभव या व्यवहारिक ज्ञान के आधार पर सिद्धान्त प्रतिपादित करना। अंग्रेजी में इसे 'Empirical study' कहा जाता है।
3. सरल क्रमबद्धता (Method) का प्रयोग संगठन की सफलता की गारन्टी है। अतः क्रमबद्ध विश्लेषण जरूरी है।
4. संगठन की एक तार्किक पद्धति हो, ताकि लक्ष्य प्राप्त किया जा सके।
5. प्रबन्धन का सम्बन्ध क्रियाओं (Functions) से है, जो उसका निर्माण करती है।
6. उच्च स्तर पर तकनीकी ज्ञान लुप्त हो जाता है, लेकिन प्रशासकीय दक्षता और ज्ञान जीवित रहता है।
7. निर्देशन की एकता (Unity of direction) और समादेश की एकता (Unity of command) ऐसे दो सिद्धान्त हैं, जिनकी सार्वभौमिकता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

8. पद-सोपान का सिद्धान्त अद्वितीय है। इसकी सार्थकता से इन्कार नहीं किया जा सकता है।
9. संगठन में मानवीय पहलू का बहुत महत्व है।

अभ्यास प्रश्न-

1. हेनरी फेयोल की सबसे प्रसिद्ध पुस्तक का नाम क्या है?
   क. मेनेजमैन्ट थ्रू आउट हिस्ट्री ख. प्रिन्सपिल्स ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट
   ग. जनरल एण्ड इस्डसट्रियल मैनेजमैन्ट घ. दि मेकिंग ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट
2. प्रशासन या प्रबन्धन के सम्बन्ध में फेयोल का दृष्टिकोण क्या था?
   क. मनोवैज्ञानिक ख. काल्पनिक ग. तकनीकी घ. वैज्ञानिक
3. फेयोलवाद का कटु आलोचक कौन है?
   क. फ्रेडरिक टेलर ख. उर्विक ग. पीटर ड्रकर घ. जॉन ब्रीज
4. फेयोल ने प्रबन्ध का एक सार्वभौमिक सिद्धान्त प्रतिपादित किया। सत्य/असत्य
5. फेयोल क्रमबद्ध विश्लेषण में विश्वास नहीं करता था। सत्य/असत्य
6. प्रबन्धन का सम्बन्ध क्रियाओं से है। सत्य/असत्य
7. ‘निर्देशन की एकता’ के सिद्धान्त का प्रतिपादन टेलर ने किया। सत्य/असत्य

3.10 सारांश

आपने हेनरी फेयोल के प्रशासनिक विचारों का अध्ययन कर लिया होगा। इस अध्ययन के बाद आप जिस नतीजे पर पहुँचेंगे, वे निश्चित रूप से इस प्रकार हैं-

1. हेनरी फेयोल एक खनन कम्पनी का एक सफल कार्यपालक था और इस हैसियत से उसने प्रबन्धन की अवधारणा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किया।
2. फेयोल को ‘प्रबन्धन प्रक्रिया विचारधारा’ का जनक माना जाता है।
3. उसने प्रबन्धन को एक विज्ञान माना जो अध्ययन का विषय बन सकता है और जिसे निजी और लोक प्रशासन पर समान रूप से लागू किया जा सकता है।
4. उसने प्रबन्धन की प्रक्रियाओं की सार्वभौमिकता को दर्शाया है।
5. यद्यपि अक्सर उसने प्रबन्धन और प्रशासन में अन्तर नहीं किया है, लेकिन कहीं-कहीं वह इस अन्तर में स्वंय को उलझा लेता है।
6. संगठन के वह पांच तत्व बताता है- योजना, संगठन, समादेश, समन्वय और नियंत्रण।
7. उसने प्रशासन के 14 सिद्धान्त बताऐ हैं जो किसी उद्यम, संस्थान या संगठन पर लागू होते हैं।
8. फेयोल ने औपचारिक संगठन पर जोर दिया है, लेकिन पदसोपानीय व्यवस्था में वह औपचारिकताओं की सीमाओं को स्वीकार करके ‘गैंगप्लेक’ की योजना रखता है।
9. फेयोल के प्रकार्यात्मकतवाद की आलोचना की गई है। उस पर आरोप है कि उसने यांत्रिकी उपागम को अपनाकर संकीर्णता का परिचय दिया है। उसने मानव आचरण की अवहेलना की है। ड्रकर उसका सबसे बड़ा आलोचक है।
10. लेकिन जिस तरह उसने प्रशासनिक प्रक्रियाओं का क्रमबद्ध विश्लेषण किया है, उससे अनेक चिन्तक प्रभावित हुये हैं। प्रशासन सम्बन्धी उसके सिद्धान्तों को आधुनिक संगठनों के क्रियान्वन के लिये एक वरदान माना गया है।

3.11 शब्दावली

अनुभववाद- अनुभववाद को प्रयोगवाद भी कहा जाता है अंग्रेजी में इसे ‘Empiricion’ कहते हैं। अनुभव या प्रयोग से जो ज्ञान प्राप्त होता है वह अनुभववाद है। अरस्तू अनुभववाद पर बहुत बल देता था। आधुनिक राजनीतिशास्त्री अनुभववाद पर जोर देते हैं। यह एक वैज्ञानिक पद्धति है और कल्पनावाद के विपरीत है।

सामान्यनीकरण- अंग्रेजी में इसे ‘Generalisation’ कहा जाता है। इसका अर्थ है, सीमित सूचना के आधार पर राय बनाना या व्यक्तव्य देना। सिद्धान्तकार ज्ञान के आधार पर एक ऐसा सिद्धान्त प्रतिपादित करता है जो सामान्य रूप से सब पर लागू होता है। प्रबन्धन के क्षेत्र में यह निजी प्रशासन या लोक प्रशासन के किसी संगठन पर लागू होता है।

पदसोपनीय व्यवस्था- अंग्रेजी में इसे ‘Hierarchy’ कहा जाता है। यह एक त्रिकोणीय व्यवस्था है।

3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग, **2.** घ, **3.** ग, **4.** सत्य, **5.** असत्य, **6.** सत्य, **7 .** असत्य

3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सी0 वी0 राघावल, बी0 पी0 सी0 बोसः हेनरी फेयोल, सम्पादन ऐडमिनिस्ट्रेटिव थिंकर्स द्वारा डॉ0 रविन्द्र प्रसाद, स्टरलिग।
2. पीटर ऑफ ड्रकरः मैनेजमेन्ट फॉर दि फ्यूचर, ट्रमैन ट्रैली बुक्स, न्यूयार्क।
3. अवस्थी एण्ड अवस्थी: लोक प्रशासन, लक्ष्मी नारायण, आगरा।
4. जार्ज जूसीएस, दि हिस्ट्री ऑफ मैनेजमेन्ट, प्रिनटिक हाल, न्यू दिल्ली।

3.14 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 अशोक कुमार, प्रकाशन- लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
2. प्रशासनिक विचारक, आर0 पी0 जोशी और अंजु पारीक, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
3. प्रमुख प्रशासनिक विचारक, नरेन्द्र कुमार थोरी, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स।

3.15 निबन्धात्मक प्रश्न

1. क्या प्रबन्धन और प्रशासन में कोई अन्तर है? फेयोल के इस सम्बन्ध में क्या विचार थे?
2. वैज्ञानिक प्रबन्धन पर फेयोल के विचारों को स्पष्ट कीजिए।
3. प्रबन्धन के तत्वों पर प्रकाश डालिए।

इकाई- 4 फ्रेडरिक विन्सलो टेलर

इकाई की संरचना

4.0 प्रस्तावना
4.1 उद्देश्य
4.2 फ्रेडरिक टेलर- एक परिचय
4.3 सोलजरिंग
4.4 वैज्ञानिक प्रबन्धन का विकास
4.5 फ्रेडरिक टेलर का लक्ष्य
4.6 वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त
4.7 प्रकार्यात्मक फोरमैनशिप
4.8 टेलरवाद का विरोध
4.9 मूल्यांकन
4.10 सारांश
4.11शब्दावली
4.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.14 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.15 निबन्धात्मक प्रश्न

4.0 प्रस्तावना

प्रबन्धन अथवा प्रशासन के अध्ययन के क्षेत्र में हैनरी फेयोल का समकालीन फ्रेडरिक विन्सलो टेलर (1856-1915) है। उसने तत्कालीन अमरीकी औद्योगिक प्रबन्धन पर गहन शोधों के माध्यम में जो निष्कर्ष सामने रखे, उनके कारण वह वैज्ञानिक प्रबन्धन का अगुआ बन गया। उसने कहा कि 'सर्वोत्तम प्रबन्ध' ही वास्तविक विज्ञान है। उसने प्रबन्धन के नये उपागम और नई तकनीकें खोजी और दावा किया कि उसके सिद्धान्त सभी प्रकार की गतिविधियों पर लागू होते हैं। यह सब कुछ उसने अपने विश्व विख्यात ग्रन्थ ''दि प्रन्सीपिल्स ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट'' में लिखा।

उसने समझाने का प्रयास किया है कि श्रमिक जान बूझकर काम करने से कतराते हैं, ताकि कम उत्पादन हो और वे सेवा में बने रहें। इसे टेलर ने 'सोलजरिंग' कहा। इस मानसिकता से लड़ने के लिए उसने प्रबन्धन के एक विज्ञान की वकालत की। कार्यक्षमता और निपुणता, उत्पादन बढाने के लिए जरूरी है। यह तभी सम्भव है, जब यह स्वीकार कर लिया जाये कि मालिक और श्रमिक दोनों की अधिकतम खुशहाली अन्तिम ध्येय होना चाहिए। दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं। दोनों के अपने-अपने उत्तरदायित्व हैं। इस ध्येय को पाने के लिए टेलर ने वैज्ञानिक अध्ययन के सिद्धान्त प्रतिपादित किये और 'प्रकार्यात्मक फोरमैनशिप' का विचार रखा। उसने दावा किया। वैज्ञानिक प्रबन्धन ने मालिकों और श्रमिकों की एक-दूसरे के प्रति और काम के प्रति सोच में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन किया है। वह इस परिवर्तन को मानसिक क्रान्ति कहता है।

टेलर की वैज्ञानिक प्रबन्धन की अवधारणा की जहाँ जबरदस्त प्रशंसा हुई है, वहीं उसकी आलोचना भी की गई है। उसके विचारों के विरोध में ट्रेड यूनियनें और प्रबन्धन बहुत आगे हैं। आरोप यह है कि टेलरवाद ने यांत्रिकी दृष्टिकोण को महत्व देकर मानवीय पहलू की अवहेलना की है।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- समझ सकेंगे कि किस तरह फ्रेडरिक टेलर ने प्रबन्धन के पारम्परिक विषय को विज्ञान बनाया और वह स्वंय वैज्ञानिक प्रबन्धन का अगुआ बन गया।
- श्रमिकों की उदासीन मानसिकता को उसने सोलजरिंग या कामचोरी क्यों कहा, इसे समझ पाओगे।
- वैज्ञानिक प्रबन्धन का विकास कैसे हुआ और टेलर ने अपने ग्रन्थ '' दि प्रन्सीपिल्स ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट'' में प्रबन्धन को विज्ञान बनाने में क्या तर्क दिये, इसे जान पाओगे।
- प्रबन्धन को वैज्ञानिकता प्रदान करने में टेलर का ध्येय क्या था, इसे समझ पाओगे।
- उसने वैज्ञानिक प्रबन्धन के कौन से सिद्धान्त प्रतिपादित किये, इसे जान पाओगे।
- टेलर ने वैज्ञानिक प्रबन्धन को मानसिक क्रान्ति क्यों कहा, इस बारे में जान पाओगे।
- टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्तों की आलोचना किन लोगों ने की और क्यों की तथा वर्तमान समय में टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्धन की सार्थकता और सामयिकता क्यों बनी हुई है और क्यों उसकी अवधारणा को शिक्षा संस्थाओं ने अपने पाठ्यक्रम में एक विषय के रूप में चुना है? इस सम्बन्ध में विस्तार से जान पाओगे।

4.2 फ्रेडरिक टेलर- एक परिचय

20वीं सदी के आते-आते संयुक्त राज्य अमेरिका के औद्योगिक जगत में उथल-पुथल आरम्भ हो गयी थी। उद्योग अव्यवस्थित हो गये थे। उत्पादन गिरने लगा था। पूँजीवादी व्यवस्था डगमगाने लगी थी। समाजवादी हमले तेज होने लगे थे। ऐसे में एक ऐसे मसीहा की आवश्यकता थी जो इस अव्यवस्था का कारण बता सके और उसका समाधान भी खोज सके। फ्रेडरिक टेलर ने ऐसे मसीहा की भूमिका को बहुत खूबसूरती से निभाया।

टेलर ने समझाया कि औद्योगिक अव्यवस्था का कारण था, कुप्रबन्धन या प्रबन्धन से अनभिज्ञ होना या फिर प्रशासन का सिद्धान्त विहीन होना। वह पहला व्यक्ति था जिसने अमरीका के उद्योग प्रबन्धन के बारे में गम्भीरता से शोधों पर जोर दिया। इस तरह वह पहला प्रभावशाली व्यक्ति बन गया जिसने प्रबन्धन विज्ञान और चिन्तन पर गहरी छाप छोड़ी।

पेशे से टेलर एक इन्जीनियर था। उसका उद्देश्य था, उद्योगों की निपुणता को बढ़ाना। उसको वैज्ञानिक प्रबन्धन का जनक माना जाता है। निपुणता आन्दोलन उसकी देन है। उसकी अवधारणा बहुत तार्किक और सामयिक है। उसको आधुनिक प्रबन्धन उपागम और तकनीकों का अगुआ भी माना जाता है। उसका कहना था कि सर्वोत्तम प्रबन्धन वास्तविक विज्ञान है। फेयोल के समान टेलर का भी यह मानना था कि प्रशासन सम्बन्धी उसके सिद्धान्त समस्त सामाजिक गतिविधियों पर एक समान लागू को सकते हैं। यह सच है कि आज तक टेलर के विचारों की सामयिकता बनी हुई है।

अब आप फ्रेडरिक टेलर के जीवन-वृत्त को समझिए। वह जर्मनी में 20 मार्च 1856 को पैदा हुआ। हावर्ड लॉ स्कूल से उसने इण्टर पास किया, लेकिन आर्थिक कमजोरी जिसके कारण वह मिट्टी के तेल की रोशनी में पढ़ा करता था, जिस कारण उसकी नजरें इतनी कमजोर हो गयी थी कि उसे पढाई बन्द करनी पड़ी। 18 वर्ष की आयु में वह एक कम्पनी में अवैतनिक 'ऐपरेनटिस' बन गया। चार साल तक कम्पनी में रहा। सन् 1878 में एक स्टील कम्पनी में वह मजदूर बन गया। कुछ साल बाद वह गैंग-बास, फिर फोरमैन फिर शोध निदेशक। अन्तः मजदूर से चला सफर चीफ इन्जीनियर तक पहुँच गया, लेकिन उसका सफर अभी समाप्त नहीं हुआ था। वह दिन में काम करता और रात को पढ़ता। नतीजा यह निकला कि उसने पत्राचार के माध्यम से मैकेनिकल इन्जीनियरिंग में मास्टर डिग्री हासिल कर ली। सन् 1906 में 'ऑनरेरी डाक्ट्रेट' की डिग्री प्रदान की गई। फिर वह जनरल मैनेजर की सीढ़ी पार करके प्रोफेसर बन गया। उसने यह सारा काम फिलाडेलफिया में किया।

यह सब कुछ लिखने का उद्देश्य यह है कि अगर इच्छा-शक्ति हो तो एक मजदूर भी बौद्धिक जगत का सरताज बन सकता है। तकनीक जगत में उसके कौन से अविष्कार थे, यह किसी सन्दर्भ पुस्तक से पाठकों को पढना चाहिए। यहाँ हमारा विषय प्रशासन और प्रबन्धन है और हम यह कह सकते हैं कि वह प्रबन्धन के क्षेत्र का एक महान शोधकर्ता था। वह निपुणता (efficiency) का मतवाला था। उसमें काम करने की क्षमता असीमित थी। वह कर्मठ था, ईमानदार और श्रमशील था। टेलर के महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं- 'शाप मैनेजमैन्ट' और 'दि प्रिंसिपल्स ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट' (वर्ष 1911)।

4.3 सोलजरिंग

फ्रेडरिक टेलर ने कामचोरों के लिये 'सोलजरिंग' या 'स्काईविंग' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है। जिनका हिन्दी में सटीक पयार्यवाची या समानार्थक शब्द तलाशना कठिन है। हमने बात समझाने के लिये 'कामचोर' या 'कामचोरी' शब्द को अधिक उपर्युक्त समझा है। टेलर का मानना था कि एक कर्मचारी जानबूझ कर अपनी क्षमता से कम काम करना चाहता है। ऐसा हर क्षेत्र में होता है। उसका विश्वास था कि उसके समय का औद्योगिक प्रबन्धन अनाड़ीपन के दौर से गुजर रहा था, प्रबन्धक नौसिखिये थे। उसके अनुसार सोलजरिंग के तीन कारण थे-

पहला- श्रमिक कम से कम कार्य इसलिये करते हैं, क्योंकि उनका विश्वास है कि यदि वह अधिक उत्पादन करेंगे तो उनमें से कुछ आवश्यकता से अधिक हो जायेंगे और उन्हें निकाल दिया जायेगा। दूसरा- प्रोत्साहन विहिन मजदूरी व्यवस्था कम उत्पादकता का कारण है। कर्मचारी महसूस करते हैं कि अधिक उत्पादन होने पर भी उन्हें अधिक मजदूरी नहीं मिलेगी। तब अधिक काम क्यों किया जाये, तथा तीसरा- औपचारिक (लकीर का फकीर) और गैर-वैज्ञानिक पद्धतियों पर भरोसा करके श्रमिक अपना समय बर्बाद करते हैं।

टेलर क्रिया के सर्वोत्तम प्रतिमान की बात करता है। ऐसा प्रतिमान तय करना होगा जो निपुणता को सुधार सके। यह निर्धारित करना होगा कि मजदूर को एक घण्टे में कितना काम करना चाहिए। (काम की मात्रा तय की जाये) यदि श्रमिक मानक के अनुसार काम करता है तो यह कार्य कुशलता का सर्वोत्तम स्तर होगा। इस मानक के अनुसार 500 कर्मचारी जितना काम करते हैं, वो 140 कर सकते हैं। ऐसा प्रयोग करके उसने लोगों को हैरत में डाल दिया। पैसा भी बचा और उत्पादन भी नहीं घटा। 'सोलजरिंग' से मुकाबला करने का यह सर्वोत्तम तरीका था।

4.4 वैज्ञानिक प्रबन्धन का विकास

हुआ यह कि सन् 1910 में एक कम्पनी के मुकदमे में लुइस ब्रेन्डीज (वकील) ने बहस के दौरान अदालत में कहा कि वैज्ञानिक प्रबन्धन पद्धति का प्रयोग करके रेलवे एक दिन में एक मिलियन डालर बचा सकती थी। टेलर यह वक्तव्य सुनकर हैरत में पड़ गया। वैज्ञानिक पद्धति और प्रबन्धन! कैसे? यह तो बहुत ही शैक्षिक बात थी। यह

विषय तो विद्वानों का था। लेकिन बाद में उसे विश्वास हो गया कि ब्रेन्डीज का तर्क सही था। इसलिये उसने अपनी पुस्तक का नाम 'दि प्रिसिंपल्स ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट' रखा। इस तरह आपको याद रखना है कि शब्द- 'वैज्ञानिक प्रबन्धन' का सबसे पहले प्रयोग लुइस ब्रेन्डीज ने किया, जो बाद में सर्वोच्च न्यायालय का जज बना। लेकिन ब्रेन्डीज को विद्वान भूल गये और वैज्ञानिक प्रबन्धन का नाम फ्रेडरिक टेलर से जुड़ गया।

टेलर के विचारों पर सबसे अधिक प्रभाव 'हेनरी टोने' का पड़ा था। उसने अमेरिका की औद्योगिक उथल-पुथल का गहनता से जायजा लिया था और अपने एक शोध-पत्र में सुझाव दिया कि किसी उद्यम में प्रबन्धन की एक सयुक्त व्यवस्था होनी चाहिए। टेलर इस बात से प्रभावित हुआ और उसने उद्यम के तमाम तथ्यों और पहलुओं को जानने का प्रयास किया और उनके आधार पर वैज्ञानिक प्रबन्धन का विकास किया।

टेलर ने दो शोध-पत्र प्रस्तुत किये 'ए पीस रेट सिस्टम' और 'शाप मैनेजमेंट'। इन शोध पत्रों में उसने प्रबन्धन के दर्शन को दर्शाया है। औद्योगिक कौशलता उसका लक्ष्य था। यह कैसे प्राप्त हो उसने बताया कि-

- प्रबन्धकीय समस्याओं के समाधान के लिये वैज्ञानिक पद्धतियों (शोध में) और अनुभव का प्रयोग किया जाये।
- कार्य स्थिति स्तरीय हो और कर्मचारियों की भर्ती वैज्ञानिक मानकों के अनुसार हो।
- कर्मचारियों को औपचारिक प्रशिक्षण दिया जाये ताकि वे निर्धारित कार्यों को दक्षता से पूरा कर सकें।
- आश्वस्त किया जाये कि कर्मचारियों और प्रबन्धन में सहयोग बना रहे।
- प्रबन्धकों को पारम्परिक निरंकुश आचरण छोड़कर उदारवादी रवय्या(आचरण) अपनाना चाहिए। उनमें योजना बनाने, संगठित करने और नियंत्रित करने की क्षमता होनी चाहिए।

4.5 फ्रेडरिक टेलर का लक्ष्य

पहले लिखा जा चुका है कि टेलर का वास्तविक लक्ष्य था, क्षमता को प्राप्त करना। अच्छा प्रबन्धन लक्ष्य की प्राप्ति का एक सटीक माध्यम था। उसने तत्कालीन प्रबन्धन व्यवस्था का गहन अध्ययन किया और निम्न कमियां देखी-

1. कार्य प्रबन्धन, उत्तरदायित्व से और प्रबन्धन से अनभिज्ञ था;
2. कार्य स्तरीय नहीं था;
3. उत्पादन सीमित था;
4. श्रमिकों के लिये कोई प्रोत्साहन नहीं था;
5. निर्णय अवैज्ञानिक थे;
6. कार्यशैली के उचित अध्ययन की कमी थी तथा कर्मचारियों की भर्ती का आधार योग्यता के अनुरूप और दिलचस्प नहीं था।

टेलर का दूसरा लक्ष्य यह भी था कि वह कार्य का एक विज्ञान खोजे। इसके लिये उसने औद्योगिक क्षेत्र में 20 वर्षों में 30 हजार से लेकर 50 हजार तक प्रयोग किये जो उसने अपने शोध पत्र 'दि आर्ट ऑफ कटिंग मेटल्स' में प्रस्तुत किये। उद्देश्य था इस सवाल का उत्तर देना कि कौन से उपकरणों का प्रयोग किया जाये ताकि कम व्यय पर अधिकतम उत्पादन हो सके।

प्रबन्धन की वैज्ञानिकता प्रदान करने में उसका उद्देश्य इस बात की भी खोज करना था कि कैसे एक निर्धारित काम को पूरा करने में एक व्यक्ति या मशीन निश्चित समय सीमा का लक्ष्य पूरा करेगी। इस बात को खोजने के लिये सन् 1903 में एक शोध पत्र 'शाप मैनेजमैन्ट' प्रस्तुत किया। यहाँ उसने अनुभववादी पद्धति का प्रयोग किया। उसने लिखा उचित काम के लिये उचित लोग रखे जायें। इनका चयन वैज्ञानिक पद्धति द्वारा होना चाहिए। कर्मचारी को

उसकी योग्यता के अनुसार तैनात किया जाये, उस पर प्रभावशाली नियंत्रण हो। उसका और उसके काम का निरीक्षण होता रहे। तैनाती की शर्तें तय की जायें।

टेलर ने प्रबन्धन का उद्देश्य भी समझाने का प्रयास किया। सम्पन्नता अन्तिम ध्येय है। अधिकतम सम्पन्नता नियोजक की और अधिकतम सम्पन्नता कर्मचारी की, प्रबन्धन का यह उद्देश्य होना चाहिए। वैज्ञानिक प्रबन्धन की अवधारणा यह है कि नियोजक और कर्मचारी हितों में कोई टकराव ना हो। उपभोक्ता के हितों का भी ध्यान रखा जाये। प्रबन्धक स्वामी नहीं है और कर्मचारी दास नहीं है कि एक मात्र आदेश दे और दूसरा उसका पालन करे। नियोजन, संगठन, नियंत्रण, निरीक्षण और प्रोत्साहन का उत्तरदायित्व नियोजक का होगा और क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व कर्मचारी का होगा। यही वैज्ञानिक प्रबन्धन है।

4.6 वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त

अब आपकी समझ में यह तो आ गया होगा कि फ्रेडरिक टेलर वैज्ञानिक प्रबन्धन का अगुआ क्यों था? अब आप यह समझिये कि वैज्ञानिक प्रबन्धन के टेलर की नजर में सिद्धान्त हैं क्या?

टेलर सामाजिक खुशहाली का हामी था। इसके लिये पहले जरूरी था, कर्मचारियों और प्रबन्धन के मध्य सहयोग और सहमति का होना। वैज्ञानिक पद्धति के क्रियान्वयन के लिये यह जरूरी था। वैज्ञानिकता का दूसरा नाम सिद्धान्त है। टेलर ने ऐसे चार सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं-

1. एक वास्तविक विज्ञान का विकास,
2. कर्मचारियों का वैज्ञानिक चयन,
3. कर्मचारियों को वैज्ञानिक शिक्षा देना, तथा
4. कर्मचारियों और प्रबन्धन के मध्य मित्रतापूर्ण सम्बन्ध।

जहाँ तक वास्तविक विज्ञान का प्रश्न है, टेलर का मानना था कि यदि संगठित ज्ञान का सहारा लिया जाये तो कम से कम समय में अधिकतम काम हो सकता है। यह तभी हो सकता है जब वैज्ञानिक खोज के द्वारा परिणाम खोजे जायें। इस तरीके से संगठन उत्पादन अधिक करता है, कर्मचारियों को वेतन अधिक मिलता है और कम्पनी को लाभ अधिक मिलता है।

अब सवाल उठता है कर्मचारियों के वैज्ञानिक चयन का। कर्मचारियों में शारीरिक और बौद्धिक क्षमता होनी चाहिए। इस क्षमता का मापदण्ड वैज्ञानिक होना चाहिए। इस तरह चयनित व्यक्ति वैज्ञानिक विधि द्वारा विकसित कार्य को करने में सक्षम होंगे। टेलर के अनुसार कर्मचारियों का व्यवस्थित रूप से प्रशिक्षण होना चाहिए। प्रबन्धन की यह जिम्मेदारी है कि वह कर्मचारियों में क्षमता विकास के लिये अवसर प्रदान करें।

कर्मचारियों या श्रमिकों का विकास तब सम्भव है, जब वैज्ञानिक क्रिया को वैज्ञानिक आधार पर चयनित लोगों के साथ जोड़ दिया जाये। प्रबन्धन सदा उनको प्रोत्साहन देता रहे। टेलर ने कहा कि कर्मचारी सदा प्रबन्धन के साथ सहयोग करना चाहते हैं, लेकिन प्रबन्धन की ओर से उन्हें विरोध तो मिलता है, प्रोत्साहन नहीं मिलता। सहयोग के लिये अनिवार्य है, मानसिक शिक्षा।

पारम्परिक प्रबन्धन सिद्धान्त के अनुसार प्रबन्धन बॉस(स्वामी) है, जिसके पास अधिकतम सत्ता और निम्नतम उत्तरदायित्व है। जबकि कर्मचारी नौकर है और सारे काम के लिये वे जिम्मेदार हैं। लेकिन टेलर का वैज्ञानिक प्रबन्धन यह सलाह देता है कि प्रबन्धन और कर्मचारियों की जिम्मेदारियां समान हैं। उनके मध्य श्रम-विभाजन है, जो यह सिखाता है कि दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं। दोनों में तालमेल है। इस विश्वास से टकराव समाप्त होगा और हड़तालें नहीं होंगी।

वैज्ञानिक प्रबन्धन का कोई भी सिद्धान्त अपने में वैज्ञानिक नहीं है। चारों सिद्धान्त सयुंक्त रूप से वैज्ञानिक सिद्धान्त की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं। सार यह है कि-

- विज्ञानिकता हो, ना कि लकीर का फकीर सिद्धान्त;
- समरसता हो ना कि वैमन्स्य;
- सहयोग हो ना कि व्यक्तिवाद;
- अधिकतम उत्पादन हो; तथा
- प्रत्येक का उसकी क्षमता के अनुसार विकास हो।

4.7 प्रकार्यात्मक फोरमैनशिप

यहाँ आपको यह समझाना है कि संगठन की अनेक व्यवस्थाऐं प्रचलित हैं। उनमें से एक सैनिक या रेखीय व्यवस्था है। इसमें प्रत्येक सैनिक या श्रमिक एक साहब (बॉस) का अधीनस्थ होता है। टेलर ने संगठन की एक नई व्यवस्था की वकालत की, जिसमें एक कर्मचारी आठ विशिष्ठ निरीक्षकों से आदेश प्राप्त करते हैं। इस व्यवस्था को टेलर ने प्रकार्यात्मक संगठनात्मकता (फंकशनल फोरमैनशीप) कहा। इस तरह उसने कार्य को कर्मचारियों के मध्य भी बांटा और निरीक्षकों के मध्य भी। आठ प्रकार्यात्मक प्रमुखों में से चार को प्रयोजन का उत्तरदायित्व सौंपा अन्य चार को क्रियान्वयन का। यहाँ यह याद रखिये कि जिसे हमने साहब, बॉस, या प्रमुख कहा टेलर उसे फोरमैन (कर्मचारियों के समूह का प्रमुख) कहता है। इस तरह टेलर ने कार्यों को प्रयोजन(योजना) और क्रियान्वयन में विभाजित कर दिया। उसके अनुसार एक फोरमैन में निम्न विशेषताऐं होनी चाहिये- शिक्षा, तकनीकी ज्ञान, शारीरिक क्षमता, कौशल, मेहनती प्रकृति, निष्ठा, साहस और निर्णय लेने की क्षमता।

इस तरह टेलर प्रबन्धन को वैज्ञानिकता प्रदान करने में हर उस यांत्रिकी को अपनाने पर बल देता है, जो सम्भव है। यहाँ यह याद रखना कि वह जो कुछ लिखना चाहता है उसका सम्बन्ध किसी कम्पनी या उद्यम से है ना कि किसी सेवा सम्बन्धी कार्यालय से। हाँ, इतना अवश्य है कि उसके सिद्धान्त लोक प्रशासन पर भी लागू हो सकते हैं।

4.8 टेलरवाद का विरोध

टेलर के प्रबन्धन और प्रशासन से सम्बन्धित सिद्धान्तों ने उसके विचारों को टेलरवाद बना दिया। टेलरवाद एक ऐसा आन्दोलन बन गया जिसने उद्योगों, मजदूरों और प्रबन्धकों में आशा की एक किरण जगा दी। लेकिन ज्यों ही टेलरवाद ने अपने पांव पसारे और पूरे उद्योग-तंत्र को प्रभावित करना आरम्भ किया, निहित हितों में एक खलवली मच गई। इसका खुलकर विरोध भी आरम्भ हो गया। जिन लोगों या संस्थाओं ने इसका विरोध किया उनमें निम्न सगंठन या विचारक थे:

1. **ट्रेड यूनियनें-** ट्रेड यूनियनों ने अनेक आधारों पर टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्धन का विरोध करना आरम्भ किया। किस्त लाभ व्यवस्था (प्रीमियम बोनस सिस्टम) का विरोध इसलिये किया कि प्रबन्धन का उद्देश्य उत्पादन बढ़ाना है, ना कि मजदूर की मजदूरी। ट्रेड यूनियनवाद के लिये टेलरवाद घातक है। वह संयुक्त सौदेबाजी के सिद्धान्त के भी विरूद्ध है।
2. **अधिक यांत्रिकी-** एक आरोप यह लगा कि टेलरवाद यांत्रिकी (मेकेनिकल) अधिक है और पूर्ण कार्य स्थिति की उसे कोई परवाह नहीं है।
3. **नीरसता-** वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्त पूरे औद्योगिक पर्यावरण को नीरस बना देते हैं और कौशलता के लिये दरवाजे बन्द कर देते हैं।

4. **सहृदयताविहीन दृष्टिकोण-** विरोध इस बात पर भी हुआ कि टेलर के दृष्टिकोण में मानव का कोई मूल्य नहीं था, जबकि सब कुछ मानवों के लिये ही होता है। आरोप यह लगा कि टेलर की नजर में मशीन का महत्व अधिक था, मनुष्य का कम।
5. **प्रबन्धन विरोधी-** प्रबन्धकों का मानना था कि टेलर का सिद्धान्त उनकी प्रोन्नति में आड़े आता है। टेलर चाहता था कि योग्य और प्रशिक्षित प्रबन्धकों की प्रोन्नति हो। लेकिन प्रबन्धक चाहते थे कि मात्र वरीयता प्रोन्नति का आधार बने।
6. **प्रशासनिक चिन्तकों द्वारा विरोध-** ऐसे चिन्तकों में मैरी पार्कर फालेट, एल्टन मयो, ओलिवर शैल्डन, पीटर ड्रकर आदि हैं। इनका आरोप भी यही है कि टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्धन का सिद्धान्त व्यक्ति विहीन है। उसने मानव पहलू को महत्व नहीं दिया है। मयो का कहना है कि उत्पादक क्षमता बढ़ाने के लिये संरचनात्मक प्रक्रियाओं का उतना महत्व नहीं है, जितना कि कर्मचारियों के भावनात्मक रूख का। यदि उनका यह रूख (एटीट्यूड) अपने काम और अपने साथियों के प्रति अच्छा है तो उत्पादन क्षमता बढ़ेगी।
7. **व्यवहारवादियों का तर्क-** व्यवहारवादियों या व्यवहारपरकतावादियों का तर्क यह है कि टेलर के सिद्धान्त अथवा पद्धतियाँ श्रमिकों में पहल करने की शक्ति को कम कर देती है। उनकी व्यक्तिक आजादी छीन लेती है। वे अधिक बुद्धि का प्रयोग करने में अक्षम हो जाते हैं। वे उत्तररदायित्व से बचते हैं।

संक्षेप में टेलरवाद पर जो आरोप लगे, उनका सार एक पंक्ति में यह है कि पूरी औद्योगिक व्यवस्था एक मशीन है और मनुष्य उसका एक पुर्जा।

4.9 मूल्यांकन

यह सही है कि फ्रेडरिक टेलर का वैज्ञानिक प्रबन्धन का सिद्धान्त सीमाओं से घिरा हुआ है। वह पूरी तरह मानव मनोवृत्ति को समझने में अपर्याप्त है। कार्य की समाजशास्त्रीयता (Sociology) और बनावट को समझने में उसकी सीमाएँ हैं। लेकिन फिर भी उसका महत्व कम नहीं है। सच तो यह है कि उसने मानवों का, जब वे काम पर होते हैं अध्ययन किया है। इस अध्ययन का वह अगुआ है।

उसने औद्योगिक प्रबन्धन के अध्ययन के लिये परिमाणात्मक तकनीकों का प्रयोग किया। उसके वैज्ञानिक प्रबन्धन में जो बातें शामिल हैं उनमें क्रियात्मक शोध, उपागम अध्ययन और प्रबन्धन महत्वपूर्ण है। उसकी प्रकार्यात्मक अवधारणा ने उद्योगों के स्वरूप और स्वभाव को परिवर्तित कर दिया।

टेलर का वैज्ञानिक प्रबन्धन एक आन्दोलन बन गया। उसने अनुभवात्मक उपागम का प्रयोग करके जो सिद्धान्त तैयार किये हैं, उन्होंने औद्योगिक वृद्धि के लिये एक जमीन तैयार कर दी है। यह आन्दोलन अमरीका की सीमाओं से निकलकर पूरे यूरोप और सेन्ट्रल ऐशिया तक पहुँच चुका है। टेलर के विचारों को विश्वविद्यालयों और अन्य शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन का विषय बनाया गया है।

संक्षेप में टेलर ने अपने सिद्धान्तों के माध्यम से सिद्धान्त और व्यवहार को, विचार और अनुभव को और क्रिया तथा शिक्षा को एक सूत्र में बांध दिया है। उसके वैज्ञानिक प्रबन्धन की अवधारणा ने लोक प्रशासन के विकास में बड़ा योगदान किया है।

अभ्यास प्रश्न-

1. फ्रेडरिक टेलर की पुस्तक का नाम क्या है?
   क. दि प्रिस्पिल्स आफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट   ख. दि हिस्ट्री आफ मैनेजमैन्ट थॉट
   ग. दि मेकिंग ऑफ साइन्टीफिक मैनेजमैन्ट   घ. इनमें से कोई नहीं

2. वैज्ञानिक प्रबन्धन के कितने सिद्धान्त हैं?
   क. 7 ख. 5 ग. 4 घ. 8
3. वैज्ञानिक प्रबन्धन नाम किसने दिया?
   क. फ्रेडरिक टेलर ख. हेनरी फेयोल ग. लुइस ब्रेन्डीज घ. वुडरो विल्सन

4.10 सारांश

औद्योगिक प्रबन्धन से चलकर टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्धन का सिद्धान्त लोक प्रशासन तक और फिर सैनिक प्रशासन तक आता है। वह प्रत्येक उस घटक को प्रभावित करता है, जो उसके दायरे में आता है- लेखा, शिक्षा, स्वास्थ्य, कम्प्यूटर विज्ञान, बैकिंग इत्यादि। फ्रेडरिक टेलर के प्रबन्धन और लोक प्रशासन के क्षेत्रों में योगदान को संक्षेप में निम्न बिन्दुओं में समेटा जा सकता है।

1. फ्रेडरिक विन्सलो टेलर को ''वैज्ञानिक प्रबन्धन विज्ञान का जनक'' माना जाता है।
2. यद्यपि वह पेशे से एक मैकेनिकल इन्जीनियर था, लेकिन उसने काम में लगे लोगों के अध्ययन को अपना लक्ष्य चुना।
3. टेलर ने औद्योगिक कार्य स्थिति का गहनता से अध्ययन किया और औद्योगिक प्रबन्धन में उपस्थित खामियों को तलाशा।
4. अपनी खोजों के आधार पर उसने प्रबन्धन का जो दर्शन सामने रखा उसका मुख्य विषय था, औद्योगिक क्षमता।
5. औद्योगिक क्षमता के लिये पहली बार लुइस ब्रेन्डीज ने ''वैज्ञानिक प्रबन्धन'' शब्द का प्रयोग किया जो अन्ततः टेलर का विषय बन गया।
6. टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्धन का दार्शनिक आधार यह है कि मालिकों, कर्मचारियों और उपभोक्ताओं के हित समान हैं, उनमें कोई टकराव नहीं है।
7. समान हितों की मान्यता के आधार पर उसने वैज्ञानिक प्रबन्धन के चार सिद्धान्त प्रतिपादित किये, पहला- कार्य का एक वास्तविक विज्ञान विकसित करना; दूसरा- कर्मचारियों का वैज्ञानिक आधार पर चयन; तीसरा- कर्मचारियों या श्रमिकों को वैज्ञानिक शिक्षा या प्रशिक्षण देना; तथा चौथा- प्रबन्धन और कर्मचारियों के मध्य मधुर और मित्रतापूर्ण सम्बन्ध।
8. टेलर ने प्रबन्धन की बहुत सी तकनीकों का विकास किया, जिनमें प्रकार्यात्मक नेतृत्व (फोरमैनशिप) बहुत महत्वपूर्ण है। उसने उपकरणों को वृद्धि और निपुणता का एक बड़ा माध्यम बताया और स्वयं नवीन उपकरणों का अविष्कार किया।
9. मानसिक आन्दोलन को टेलर वैज्ञानिक प्रबन्धन का सार मानता है।
10. मानसिक आन्दोलन का अर्थ है, प्रबन्धन का कर्मचारियों के प्रति और कर्मचारियों का अपने काम के प्रति परिवर्तित रूख, अर्थात यह स्वीकार करना कि दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं और यह कि यदि क्षमता का अभाव होगा तो उत्पादन गिरेगा और सब के हित प्रभावित होंगे।
11. टेलरवाद मात्र एक विज्ञान नहीं है। यह एक दर्शन है और एक अवधारणा है। इस दर्शन का सार यह है कि प्रबन्धक को वैज्ञानिक होना चाहिए ना कि लकीर का फकीर बनना। समरसता होनी चाहिये ना कि वैमनस्य। सामूहिकता होनी चाहिए ना कि व्यक्तिवाद। अधिक उत्पादन के साथ-साथ सबका अधिकतम विकास भी हो।

12. ट्रेड यूनियनें वैज्ञानिक प्रबन्धन की विरोधी बन गयी। वह इसे श्रम विरोधी और ट्रेड यूनियन विरोधी समझने लगी।

13. आरोप यह भी लगा कि वैज्ञानिक प्रबन्धन यांत्रिकी अधिक है और मानवीय पहलुओं की अनदेखी करता है।

14. प्रबन्धकों ने भी टेलरवाद की आलोचना इस आधार पर की कि यह सिद्धान्त प्रबन्धकों की शिक्षा, प्रशिक्षण और निपुणता पर बहुत अधिक जोर देता है, जो प्रोन्नति में रूकावट है।

15. टेलरवाद संरचनात्मक प्रक्रियाओं पर अधिक बल देता है और श्रमिकों की भावनात्मक प्रकृति पर कम।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि टेलर की वैज्ञानिक प्रबन्धन की अवधारणा अपनी कमियों के बाद भी वर्तमान में विकसित आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था में सामयिक बनी हुई है।

4.11 शब्दावली

सोलजरिंग- हिन्दी में इसका कोई पयार्यवाची शब्द नहीं है। जब श्रमिक जान बूझकर अपनी क्षमता से कम काम करते हैं तो इस स्थिति को टेलर ने ‘सोलजरिंग’ या ‘स्काइविंग’ कहा है। हिन्दी में ऐसे व्यक्तियों को कामचोर कहा जा सकता है। यह स्थिति तब पैदा होती है जब श्रमिक को यह विश्वास बन जाता है कि यदि मैं अधिक काम करूंगा तो अतिरिक्त उत्पादन होगा और वह निकाल बाहर कर दिया जायेगा।

प्रकार्यात्मक फोरमैनशिप- हमने यहाँ फोरमैनशिप को अंग्रेजी में प्रयोग करना अधिक उचित समझा है। प्रकार्यात्मक (फंकशनल) अर्थात् कार्य सम्बन्धी, जो किसी संगठन की पहली शर्त है। संगठन का स्वरूप संरचनात्मक भी है और प्रकार्यातमक भी। टेलर प्रकार्यात्मकता को अधिक महत्व देता है। फोरमैनशिप, फोरमैन से बना है अर्थात किसी कारखाने का वह प्रमुख जिसके अर्न्तगत श्रमिकों का एक समूह हो। यहाँ टेलर का सिद्धान्त यह है कि एक श्रमिक को आठ दक्ष निरीक्षकों से आदेश प्राप्त करना चाहिए।

मानसिक क्रान्ति- वैज्ञानिक प्रबन्धन एक ऐसी क्रान्तिकारी स्थिति पैदा करता है, जिससे श्रमिकों और प्रबन्धकों का अपने कर्तव्यों के प्रति, अपने काम के प्रति, अपने सहयोगियों के प्रति और अपने पर्यावरण के प्रति रूख में एक ऐसा बदलाव आता है, जिसे टेलर मानसिक क्रान्ति कहता है। सब महसूस करने लगते हैं कि वे सब पर निर्भर हैं। इस परिवर्तन से पारस्परिक सहयोग बढ़ता है, विश्वास का माहौल पैदा होता है और कार्य क्षमता में वृद्धि होती है।

4.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. क, **2.** ग, **3.** ग

4.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अवस्थी एवं माहेश्वरी: लोक प्रशासन के सिद्धान्त, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
2. फ्रेडरिक टेलर, प्रिन्सिपल्स आर्फ साइटीफिक मैनेजमैन्ट, हार्पर ब्रदर्स, न्यूयार्क, 1947
3. वी0 भास्कर रावः फ्रेडरिक टेलर, लेखः ऐडमिनिस्ट्रेटिव थींक्स, सम्पादन, डी0 रविन्द्र प्रसाद, वी0 प्रसाद, स्टलिंग, न्यू दिल्ली।

4.14 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 अशोक कुमार, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन।
2. प्रशासनिक विचारक, आर0 पी0 जोशी एवं अंजु पारीक, रावत पब्लिकेशन।

3. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 सुरेन्द्र कटारिया, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस।

4.15 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वैज्ञानिक प्रबन्धन का विकास कैसे हुआ?
2. वैज्ञानिक प्रबन्धन के सिद्धान्तों को समझाइये।
3. टेलरवाद का किस आधार पर विरोध हुआ?

इकाई- 5 मैक्स वेबर

इकाई की संरचना

5.0 प्रस्तावना
5.1 उद्देश्य
5.2 मैक्स वेबर- एक सिद्धान्तकार
5.3 सत्ता और वैधता
5.4 सत्ता का वर्गीकरण
    5.4.1 परम्परागत सत्ता
    5.4.2 करिश्माई सत्ता
    5.4.3 विधिक सत्ता
5.5 नौकरशाही: स्वरूप-चरित्र
5.6 मैक्स वेबर और नौकरशाही
5.7 मैक्स वेबर और नौकरशाही का प्रतिमान
5.8 मैक्स वेबर और आर्दश प्रकार की नौकरशाही
    5.8.1 वैयक्तिक विहीन व्यवस्था
    5.8.2 नियम
    5.8.3 पदसोपानीय व्यवस्था
    5.8.4 वैयक्तिक एवं लोक ध्येय
    5.8.5 लिखित दस्तावेज
    5.8.6 योग्य व्यक्तियों का चयन
5.9 वेबरवाद की आलोचना
5.10 समालोचना
5.11 सारांश
5.12 शब्दावली
5.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.16 निबन्धात्मक प्रश्न

5.0 प्रस्तावना

प्रशासनिक विचारकों में मैक्स वेबर को एक अद्वितीय विद्वान के रूप में जाना जाता है। वह पहला विचारक है जिसको नौकरशाही का पर्यायवाची माना गया है। उसने जर्मनी की परिस्थितियों से प्रभावित होकर नौकरशाही की रूपरेखा तैयार की। उसने सत्ता का विश्लेषण किया तथा सत्ता और वैधता का तार्किक सम्बन्ध स्थापित किया। इसी आधार पर वेबर ने सत्ता का वर्गीकरण किया, जिसके अनुसार पारम्परिक, करिश्माई और विधिक सत्ताऐं मुख्य हैं। वह विधिक सत्ता को मान्यता देता है और उसे तर्कसंगत-विधिक सत्ता का नाम देता है। विधिक-तर्कसंगत

के आधार पर वह नौकरशाही का एक प्रतिमान तैयार करता है और उसे 'आदर्श प्रकार' की नौकरशाही कहता है। आलोचनाओं के बावजूद वेबरवाद की आज भी सार्थकता बनी हुई है।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- मैक्स वेबर को प्रशासन के एक सिद्धान्तकार के रूप में समझ पायेंगे।
- क्यों मैक्स वेबर और नौकरशाही एक-दूसरे के पर्यायवाची बन गये, इस सम्बन्ध में जान पायेंगे।
- नौकरशाही का अर्थ और वेबर द्वारा नौकरशाही की अवधारणा को समझ पायेंगे।
- वेबर द्वारा तैयार किये गये नौकरशाही के प्रतिमान के सम्बन्ध में जान पायेंगे।
- विधिक-तर्कसंगत सत्ता का विचार और सत्ता के विभिन्न स्वरूप के बारे में जान पायेंगे।
- वेबर द्वारा प्रस्तुत 'आर्दश प्रकार' की नौकरशाही की अवधारणा को समझ पायेंगे।
- क्यों वेबरवाद आज भी प्रांसागिक है और आधुनिक प्रशासकीय व्यवस्था में वेबरवादी नौकरशाही को अपरिहार्य माना जाता है, इस सम्बन्ध में जान पायेंगे।
- वेबरवाद में क्या कमियाँ हैं, इसे जान पायेंगे।

5.2 मैक्स वेबर- एक सिद्धान्तकार

पिछले पन्नों में आपने पढ़ा कि हेनरी फेयोल को प्रबन्धन प्रक्रिया विचारधारा का जनक माना गया है। उसने वास्तव में शास्त्रीय प्रबन्धन सिद्धान्त की नींव डाली। फेयोल के बाद फ्रेडरिक टेलर 'वैज्ञानिक प्रबन्धन' का दृष्टिकोण लेकर सामने आया। उसने तो प्रबन्धन और प्रशासन के क्षेत्र में वैज्ञानिकता लाकर एक क्रान्ति को जन्म दिया। इस तरह इन दोनों चिन्तकों ने अपने सिद्धान्तों के माध्यम से भावी चिन्तकों के लिये जमीन तैयार कर दी। अब इसी क्रम में आप पढ़ेगें एक ऐसे विचारक या सिद्धान्तकार को जिसने अनुमानों के संसार से निकलकर यथार्थ के मैदान में पदार्पण किया। वह ना केवल प्रशासन बल्कि राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, विधिशास्त्र और इतिहास जैसे क्षेत्रों में भी एक बहुआयामी व्यक्तित्व बन गया।

एक सिद्धान्तकार था मैक्स वेबर(1864-1920), जो दूसरे शब्दों में नौकरशाही (Bureaucracy) का पर्यायवाची बन गया। वेबर सही अर्थ में एक समाजशास्त्री था। उसने पहली बार नौकरशाही की अवधारणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया। उसके लेखों से पहले नौकरशाही मात्र एक क्रिया समझी जाती थी। लेकिन वेबर ने नौकरशाही को अवधारणात्मकता प्रदान करके अध्ययन का एक विषय बना दिया। इसी के साथ वेबर ने वैधता और आधिपत्य (Legitmacy and Demination) के बारे में भी सिद्धान्त प्रतिपादित किये।

वेबर ने कानून, इतिहास और अर्थशास्त्र का गहन अध्ययन किया था। राजनीतिक-अर्थशास्त्र वेबर का प्रिय विषय था। इसी विषय में उसने अध्यापन से अपना जीवन आरम्भ किया, लेकिन हताशा और निराशा ने उसका रूख समाजशास्त्र की ओर मोड़ दिया। आज वह समाजशास्त्र का महान लेखक माना जाता है।

लेकिन यहाँ प्रश्न यह है कि मैक्स वेबर का प्रबन्धन या प्रशासन से क्या सम्बन्ध था? यहाँ हम यह बता दें कि वेबर का रूझान 18 वर्ष की आयु से विश्लेषण और क्रमबद्ध अध्ययन की ओर अधिक था। वह पुस्तकालय में बैठकर पुस्तकों के पन्नों से निष्कर्ष नहीं निकालता था, वह वास्तविकताओं का अध्ययन करके अनुभव के आधार पर अपने सिद्धान्तों का समर्थक था। इस तरह वह अनुभववादी भी था और यथार्थवादी भी था। वह जर्मनी की

सामाजिक परिस्थितियों से अधिक प्रभावित था। उसको सबसे बड़ा डर यह था कि समाज का नौकरशाहीकरण व्यक्ति के स्वतंत्र अस्तित्व के लिये एक चुनौती बन सकता है। इसलिये उसने जिन विषयों पर लिखना आरम्भ किया उनमें सत्ता, संगठन, वैधता और नौकरशाही महत्वपूर्ण है। यहाँ यह बात स्पष्ट कर दें कि वेबर ने जो कुछ भी लिखा उसका लक्ष्य एक सर्वोत्तम प्रशासन की नींव डालना था। उसके सिद्धान्त शासन के इर्द-गिर्द ही घूमते नजर आते हैं।

5.3 सत्ता और वैधता

सत्ता, शक्ति, प्रभाव और नियत्रंण जैसे शब्द लगभग एक-दूसरे के पर्यायवाची है। यह सम्बन्धात्मक शब्द है। अर्थात् एक ओर वो एक ऐसा व्यक्ति या समूह है, जिसके पास सत्ता या शक्ति है और दूसरी ओर ऐसा व्यक्ति या समूह है, जिस पर सत्ता या शक्ति का प्रयोग होना है। सत्ता या शक्ति के प्रयोग का लक्ष्य है, दूसरे के आचरण को अपनी इच्छानुसार प्रभावित या नियंत्रित करना।

दूसरी ओर वैधता है। वैधता (Legitineacy)का अर्थ है, किसी कृत (कार्य) के औचित्य को स्वीकार कर लेना। वैधता, कृत का कानूनी स्वरूप है। जनता ने एक सरकार चुनी उस सरकार को वैद्यता मिल गयी। अब उस सरकार को उसके कार्यकाल से पहले चुनौती नहीं दी जा सकती।

सम्भवत: आप सत्ता (Authority) और वैधता का अर्थ समझ गये होंगे। अब हमें यह समझाना है कि सत्ता और वैधता को मैक्स वेबर ने क्या नये आयाम दिये और किस तरह उसने इन दोनों अवधारणाओं का सम्बन्ध प्रशासन और नौकरशाही से जोड़ा?

मैक्स वेबर ने आधिपत्य (Domination), नेतृत्व (Leadership) और वैधता (Legitineacy) पर सर्वप्रथम अपने सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं। नेतृत्व उसका यहाँ मुख्य विषय है। धर्म और समाज, नेतृत्व के स्वरूप को ढालते हैं। इस सन्दर्भ में उसने सत्ता, शक्ति और नियंत्रण को एक-दूसरे से पृथक करने का प्रयास किया है। उसने धर्म और समाज के प्रभावों को भी समझने का प्रयास किया है।

शक्ति सम्पन्न व्यक्ति कौन है? मैक्स वेबर का उत्तर है, वह व्यक्ति जो दूसरे व्यक्ति या समूह पर अपनी इच्छा थोप सकने में सक्षम है और जिस पर वह इच्छा थोपी गयी है, उसमें विरोध की शक्ति नहीं है। जो शक्ति सम्पन्न है वह प्रभावशाली है और सामाजिक सम्बन्धों में जो प्रभावशाली है, उसके नियंत्रण में पूरा समाज है। जब इस नियंत्रण को वैधता मिल जाती है तो वह सत्ता कहलाती है। सत्ता में ही लोगों का अस्तित्व बना रहता है। सत्ताधारी आदेश देता है और लोग उस आदेश का पालन करते हैं। अर्थात् शासक और शासित की अवधारणा यहीं से आरम्भ होती है। वेबर के अनुसार आदेश की एकाधिकारवादी शक्ति, सत्ता है। उसके अनुसार सत्ता के पांच तत्व या विशेषताऐं हैं-

1. एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह जो शासन करते हैं।
2. एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह जो शासित होते हैं।
3. शासकों की वह इच्छा जो शासितों के आचरण को प्रभावित करें और जिसमें आदेश की शक्ति छिपी हो।
4. शासकों के प्रभाव सर्वविदित हों।
5. शासितों द्वारा आदेश का पालन या प्रभाव की स्वीकृति सर्वविदित हो। उसके सर्वविदित साक्ष्य हों।

सत्ता और वैधता का गहरा सम्बन्ध है। शक्ति या प्रभाव के लिये वैधता अनिवार्य नहीं है। लेकिन सत्ता का अस्तित्व वैधता पर टिका होता है। वैधता शासितों की ओर से स्वीकृत होती है। सत्ताधारी तब तक शासन करता है, जब तक उसे वैधता प्राप्त होती रहती है। प्रशासन या संगठन के पीछे भी वैधता छिपी होती है। वेबर के अनुसार संगठन का का अर्थ है ''अधिपत्य'' जो सत्ता से प्राप्त होता है। इस तरह सत्ता, वैधता, आधिपत्य, नियंत्रण, प्रभाव, संगठन,

शासक, शासित इत्यादि इन सबका चोली-दामन का साथ है। शासित अपने स्वभाव से आज्ञाकारी होते हैं, ऐसे चार प्रकार के शासित होते हैं-

1. जो आदेशों का पालन करने के आदी होते हैं।
2. जो तत्कालीन अधिपत्य को अपने हित में जारी रखना चाहते हैं।
3. वे स्वयं अधिपत्य का एक हिस्सा बने रहना चाहते हैं।
4. सत्ताधारी संगठन द्वारा दिये गये कार्यों को बड़ी तत्परता से स्वीकार करते हैं।

यहाँ हम यह बता दें कि सत्ता इन्हीं चार प्रकार के व्यक्तियों पर टिकी होती हैं। ये 4 प्रकार के व्यक्ति सत्ता या अधिपत्य के प्राण कहे जा सकते हैं। इन व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूह का अपना अस्तित्व केवल इसलिये होता है कि वे शासक के अस्तित्व को बनाये रखें, क्योंकि मैक्स वेबर एक प्रशासनिक चिन्तक है, इसलिये उसने अधिपत्य का दूसरा नाम प्रशासन रखा है। उसकी दृष्टि में शासक और प्रशासक में या शासन और प्रशासन में कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनों का लक्ष्य अधिपत्य है।

5.4 सत्ता का वर्गीकरण

अब आप समझ गये होंगे कि सत्ता, वैधता और अधिपत्य का अर्थ क्या है? यह सम्बन्धात्मक क्यों है? और प्रशासन से इसका सम्बन्ध क्या है? वेबर के अनुसार प्रशासन एक अधिपत्य है या फिर प्रशासन सत्ता का क्रियान्वयन है। कुछ चिन्तक प्रशासन को एक सेवा मानते हैं, लेकिन वेबर ऐसा नहीं मानता है। वह प्रशासन के पीछे आदेश देखता है। आदेश की वैधता और आज्ञापालन महत्वपूर्ण घटक है। उसने सत्ता को तीन वर्गों में विभाजित किया है जो इस प्रकार हैं-

5.4.1 परम्परागत सत्ता

अब यह तय है कि सत्ता और वैधता का गहरा सम्बन्ध है। परम्परागत सत्ता की जड़ें अतीत में फैली होती हैं। अतीत को लेकर जो वर्तमान में चलता रहता है, उन्हें परम्परा कहते हैं। वेबर की दृष्टि में जब यही परम्पराऐं सत्ता के लिये वैधता का स्रोत बन जाती हैं तो ऐसी सत्ता परम्परागत सत्ता कही जाती है। राजतंत्र और कुलीनतंत्र परम्परागत सत्ता के उदाहरण हैं। यहाँ सत्ता नितान्त वैयक्तिक होती है। यह व्यक्ति को विरासत में मिली होती है। शासक की प्रकृति में शासन होता है। वह स्वाभाविक रूप से शासन करने का आदि होता है।

अब आप प्रश्न करेंगे कि ऐसे शासक की सत्ता को वैधता कैसे मिलती है? उत्तर सरल है- होता यह है कि शासित सदियों से चली आ रही वंशानुगत सत्ता के आदेशों के पालन करने के अभ्यस्त हो जाते हैं। उन्हें ऐसे अनुपालन में बड़ा आनन्द आता है। अर्थात् वे परम्परावादी बन जाते हैं। उनका यही स्वभाव तत्कालीन सत्ता को वैधता प्रदान करता है। मैक्स वेबर के अनुसार शासक ‘स्वामी’ कहलाऐ जाते हैं और शासित ‘अनुयायी’। सत्ताधारी में परम्परा के आधार पर इतनी क्षमता होती है कि वह आदेश देता है और अनुयायियों या प्रजा में इतनी विनम्रता होती है कि वे स्वाभाविक रूप से आदेश का पालन करते हैं। वे सत्ताधारी के वफादार होते हैं और वफादारी को वे अपना धर्म समझते हैं।

परम्परावादी सत्ता की एक और विशेषता यह है कि वे लोग जो सत्ताधारी के आदेशों को पालन करवाते हैं वे सत्ताधारी के सगे-सम्बन्धी होते हैं या फिर वे स्वामी के पसंदीदा लोग होते हैं। वे स्वामी के वफादार सहयोगी होते हैं। जहाँ सत्ता का यह चरित्र होता है, वहाँ प्रशासन एक बकवास बन जाता है, क्योंकि जिनके हाथ में प्रशासन होता है वे प्रायः अक्षम और अयोग्य होते हैं। वे केवल राजा या स्वामी की सनक और कल्पनाओं के अनुसार काम करते

हैं। यहाँ यह बात याद रखनी होगी कि सत्ताधारी का प्रत्येक कृत परम्पराओं के द्वारा वैध बन जाता है। यहाँ तक कि शासक की निरंकुशता और एकाधिकार भी रूढ़ियों के बल पर वैधता प्राप्त कर लेते हैं।

5.4.2 करिश्माई सत्ता

मैक्स वेबर के अनुसार जब कोई सत्ताधारी या शासक अपने असाधारण कृत्यों के माध्यम से कोई करिश्मा या चमत्कार कर दिखाता है, तो उसके अनुयायी अथवा प्रजा उसके मुरीद हो जाते हैं। वे भावनात्मक तौर से करिश्माई नेता से जुड़ जाते हैं। इस तरह चमत्कार या करिश्मा, वैधता का आधार बन जाता है। वेबर के अनुसार चमत्कारी व्यक्ति साधारण व्यक्ति से पृथक हो जाता है। लोग उसमें दैवी शक्ति के दर्शन करने लगते हैं। वे उसे महाशक्ति, पराप्रकृति और परामानव मानते हैं।

यहाँ हम यह बतालाना चाहते हैं कि वेबर ने करिश्माई सत्ता को प्रशासन के साथ कैसे जोड़ा। वेबर के अनुसार, करिश्माई नेता जब शासक बन जाता है तो वह केवल उन्हीं लोगों पर भरोसा करता है जो उसकी चमत्कारी शक्ति में अथाह विश्वास रखते हैं। वे उसके अन्ध अनुयायी होते हैं। उसे भगवान मानते हैं। उसमें वे दैवी शक्ति देखते हैं और उसकी पूजा करते हैं। शासक ऐसे ही व्यक्तियों को अधिकारी बनाता है और उन्हें प्रशासन सौंपता है। वह अपने अधिकारियों का चयन उनकी योग्यता के आधार पर नहीं करता है बल्कि वफादारी, समर्पण, श्रद्धा और निष्ठा चयन के मापदण्ड होते हैं। उसके प्रशासक, भक्त अधिकारी कहे जा सकते हैं। यही प्रशासकीय संगठन की रचना करते हैं। उनकी समस्त क्रियाएँ शासक या नेता की पसन्द और नापसन्द के अनुसार चलती हैं। यहाँ आप प्रश्न कर सकते हो कि ऐसे करिश्माई सत्ताधारियों को शासन की किस श्रेणी में रखा जा सकता है? मैक्स वेबर का उत्तर है, ऐसे नेता प्रायः तानाशाह बन जाते हैं। वे देश को विनाश के रास्ते पर ले जा सकते हैं, क्योंकि वे अनुयायियों की अन्धभक्ति का लाभ उठाते हैं।

5.4.3 विधिक सत्ता

विधिक (Legal) सत्ता के स्रोत तत्कालीन कानून होते हैं। जब समाज में एक संविधान सर्वोपरि माना जाता है तो व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये कानून उसी संविधान के अनुसार होते हैं। प्रशासकीय संगठन इसी संवैधानिक या कानूनी सत्ता की अभिव्यक्ति होते हैं। कानून का शासन सब लोगों पर समान रूप से लागू होता है। सत्ताधारी व्यक्ति (प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति) की सत्ता का स्रोत संविधान और कानून ही होते हैं। प्रशासकीय संगठन जिन लोगों पर निर्भर करता है, उनका चयन और नियुक्ति कानून के अनुसार होती है। प्रशासकों का ध्येय कानून और विधिक व्यवस्था को बनाये रखना होता है। ऐसी स्थिति में कानून का शासन होता है। कानून की दृष्टि में सब बराबर हैं। अधिकारी और सामान्य लोगों के मध्य में आदेश और अनुपालन का रिश्ता तो होता है, लेकिन दोनों का आचरण कानून के अनुसार होता है। अधिकारी मनमानी नहीं कर सकते, क्योंकि वे कानूनी सीमाओं से बंधे हुये होते हैं। विधिक सत्ता की यह स्थिति एकाधिकारवाद को पनपने नहीं देती।

इस तरह आप देखेगें कि सत्ता का चाहे जो भी स्वरूप हो उसको अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए शासितों से वैधता प्राप्त करनी ही होती है। अर्थात् वैधता का वास्तविक स्रोत शासित होते हैं। शासितों का ध्येय होता है, अपेक्षानुसार सुशासन और उनकी अपनी समृद्धि और राज्य का समग्र विकास। यदि शासक इन अपेक्षाओं के विपरीत चलता है, निजी हितों को सर्वोपरि समझता है, अपने स्वभाव में सनक को जगह देता है, गैर-कानूनी और अनैतिक हरकतें करता है, वर्ग-विभेद में विश्वास करना, भावनात्मक मुद्दों का सहारा लेता है तो निश्चित तौर पर वह स्वस्थ परम्पराओं से भी हटता है। कानून भी तोड़ता है और अपने करिश्मे को भी खो देता है।

यहाँ वेबर का सुझाव यह है कि सर्वोत्तम सत्ता की स्थापना के लिये तीनों प्रकार की सत्ताओं, पारम्परिक, करिश्माई और विधिक का मिश्रण अनिवार्य है, क्योंकि प्रत्येक सत्ता में बहुत सी कमियां होती हैं। मिश्रित सत्ता शुद्ध सत्ता होती है, लेकिन वेबर के अनुसार तीनों प्रकार की सत्ताओं का अलग-अलग विश्लेषण होना चाहिए।

आप यहाँ सवाल कर सकते है कि तीनों प्रकार की सत्ताओं में सर्वोत्तम कौन सी है? मैक्स वेबर का उत्तर है- 'विधिक सत्ता'। क्यों? क्योंकि यह तार्किक है। यह लोकतांत्रिक विचारधारा के अनुरूप है। यह आधुनिक सरकारों का आधार है। इसके समय के साथ बदलने की सम्भावना बहुत कम है। विधिक तार्किकता को दृष्टि में रखकर ही वेबर ने अपने नौकरशाही के प्रतिमान (Model) को तैयार किया है, क्योंकि वेबर जानता है कि आधुनिक सरकारों का सबसे अधिक वासता (काम) नौकरशाही ही से पड़ता है।

5.5 नौकरशाही का स्वरूप या चरित्र

पहले हम आपको यह बता दें कि नौकरशाही है क्या? नौकरशाही का अंग्रेजी अनुवाद है 'Bureaucracy'। ब्यूरो अलमारी को कहते हैं। प्रशासन में अलमारी से अभिप्राय है, आफिस या कार्यालय। आगे चलकर कार्यालय से अर्थ निकाला गया अधिकारी और उनके अधीनस्थ। अन्ततः अधिकारी-तंत्र प्रशासकीय व्यवस्था को नाम दिया गया। 20वीं सदी में अधिकारी-तंत्र नौकरशाही कहलाने लगी। कारण था एक मानसिकता का पनपना। मानसिकता यह थी कि अधिकारी थे तो नौकर, लेकिन दिमगा था शाहो जैसा। इसलिये इस व्यवस्था को हिन्दी में नौकरशाही कहते हैं। आज विश्व का पूरा प्रशासन इसकी पकड़ में है।

नौकरशाही की जड़ें अतीत में भी देखी जा सकती हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी नौकरशाह जैसे अधिकारियों का वर्णन मिलता है। आधुनिक समय में कल्याणकारी राज्य की स्थापना के साथ ही लोक कार्यालयों की स्थापना होने लगी। धीरे-धीरे लोक कार्यालय एक संगठन बन गये और नौकरशाही एक प्रशासकीय व्यवस्था बन गई।

'ब्यूरोक्रेसी' शब्द का सबसे पहले प्रयोग फ्रान्सीसी अर्थशास्त्री डी0 गोरने ने किया। फ्रान्स में 18वीं सदी में ही यह शब्द बहुत लोकप्रिय हो गया था। ब्रिटिश राजनीतिशास्त्रियों ने इस शब्द को 19वीं सदी में ग्रहण किया। जे0 एस0 मिल ने ब्यूरोक्रेसी को अपने विश्लेषण का विषय बनाया। आगे चलकर लगभग सभी समाजशास्त्रियों ने नौकरशाही के अध्ययन को महत्वपूर्ण स्थान दिया। लेकिन वह नाम जिसके बिना नौकरशाही की अवधारणा अधूरी है, वह निश्चित तौर पर मैक्स वेबर है।

5.6 मैक्स वेबर और नौकरशाही

आप को नौकरशाही के बारे में जो कुछ समझाया गया, वो विशेष रूप से 'मोस्का' और 'माइकेल्स' के विचार थे। अब यह समझना होगा कि नौकरशाही कोई 'वाद' या विचारधारा नहीं है, ना यह कोई चिन्तन है और ना ही कोई दर्शन। इसलिये मैक्स वेबर ने भी नौकरशाही को या उसके चरित्र को स्पष्ट तो किया है, उसे परिभाषित नहीं किया है। वह नौकरशाही को नियुक्त पदाधिकारियों का एक प्रशासनिक ढाँचा या समूह मानता है। उसके अनुसार निर्वाचित लोग नौकरशाही का अंग नहीं होते हैं। वेबर नौकरशाही की विशेषताओं के आधार पर उसको दो वर्गों में विभाजित करता है।

पहला- पुश्तैनी या पैतृक नौकरशाही, जिसका सम्बन्ध पारम्परिक और करिश्माई सत्ताओं से होता है तथा दूसरा- विधिक-तार्किक नौकरशाही, जिसका सम्बन्ध विधिक सत्ता से होता है।

यहाँ हमने यह देखा कि वेबर ने नौकरशाही का सम्बन्ध सत्ता से जोड़ा और फिर सत्ता के स्रोत के आधार पर उसने नौकरशाही को वैधता प्रदान करने का प्रयास किया। वेबर ने अनुसार नौकरशाही स्वंय में सत्ता है, जिसको कानूनी

मान्यता या वैधता प्राप्त होती है। इसलिये वह नौकरशाही को विधिक-तार्किक सत्ता कहता है। अनेक विद्वानों ने वेबर की नौकरशाही विश्लेषण को वेबरवादी प्रतिमान (वेबैरियन मॉडल) कहा है।

वेबर किसी भी प्रकार की सत्ता के लिये वैधता को अनिवार्य मानता है। उसके अनुसार सत्ता की वैधता पाँच स्पष्ट विश्वासों पर टिकी होती है-

1. एक कानूनी संहिता की स्थापना अनिवार्य है, जो संगठन या समूह से अनुपालन की अपेक्षा कर सकती है;
2. कानून नियमबद्ध नियमों की एक व्यवस्था है, जिनको विशिष्ट प्रकरण पर लागू किया जाता है। प्रशासन इन्हीं कानूनों की सीमाओं के भीतर संगठन के हितों की समीक्षा करता है;
3. वह व्यक्ति जो सत्ता का प्रयोग करता है, वह भी कानूनी व्यवस्था का पालन करता है;
4. केवल समान स्तर का सदस्य दूसरे सदस्य से अनुपालन करवा सकता है; तथा
5. अनुपालन सत्ताधारी व्यक्ति का नहीं होता है वरन् उस व्यवस्था का होता है, जिसने सत्ताधारी को वह पद दिया है।

वेबर द्वारा प्रस्तुत किये गये पांच तत्व यह सिद्ध करते हैं कि वह वैधता और व्यक्तित्व विहीन व्यवस्था के मध्य एक गहरा सम्बन्ध देखता था। उसने नौकरशाही पर खुलकर बहस की है और ऐसा लगता है कि नौकरशाही पर दिये गये उसके वक्तव्यों पर चार तथ्यों का गहरा प्रभाव पड़ा है जो इस प्रकार हैं-

- ऐतिहासिक, तकनीकी और प्रशासनिक कारण, जिन्होंने पश्चिमी जगत में नौकरशाहीकरण की प्रक्रिया को निर्णायक स्वरूप प्रदान किया है;
- नौकरशाही-तंत्र पर विधि के शासन का प्रभाव;
- नौकरशाही द्वारा ग्रहण पद के कारण उनमें पनपी मानसिकता; तथा
- आधुनिक जगत पर नौकरशाही व्यवस्था के परिणामों का प्रभाव।

वेबर का मानना है कि इन चार कारणों ने आधुनिक सरकारों को पूरी तरह अपने शिकंजे में ले लिया है।

5.7 वेबर और नौकरशाही का प्रतिमान

आपको यह याद रखना होगा कि वेबर द्वारा तैयार किया गया नौकरशाही का प्रतिमान या नमूना (मॉडल) दो शब्दों पर आधारित है- विधिक और तार्किक (Legal & Rational) अर्थात् कानूनी और तर्कसंगत। इस बहस को और आगे बढ़ाते हुये अब हम यह स्पष्ट करेंगे कि वेबर ने अपने प्रतिमान की क्या विशेषताएं बताई हैं? वेबर कानून, राजनीति, अर्थशास्त्र और मनोविज्ञान का अद्वितीय विद्वान था। अतः उसने इन अनुशासनों को दृष्टि में रखकर नौकरशाही से सम्बन्धित प्रभावों का विश्लेषण किया है और उसके आधार पर अपना नौकरशाही का प्रतिमान तैयार किया है, जिसकी विशेषताएं इस प्रकार हैं-

1. प्रशासन से सम्बन्धित कार्यकलाप दो भागों में विभक्त होते हैं, निजी और लोक या सरकारी। लोक या सरकारी कार्यों में निरन्तरता होती है, वे चलते रहते हैं।
2. कोई भी प्रशासनिक अभिकरण (संगठन या ऐजेन्सी) निश्चित नियमों के अनुसार कार्य करती है। इस सम्बन्ध में तीन बातों को ध्यान में रखना होगा, पहला- प्रत्येक अधिकारी की शक्तियां और कार्य जहाँ तक उसकी व्यक्तिगत हैसियत का सवाल है, असीमित होते हैं। इसका अर्थ है कि निर्णय लेते समय वह अपने औचित्य का प्रयोग करने का अधिकारी है, दूसरा- अधिकारी को उत्तरदायित्व के अनुरूप सत्ता प्रदान की जाती है तथा तीसरा- बाध्यकारी उपाय जो अधिकारी को प्रदत्त होते हैं, सीमित होते हैं और वे परिस्थितियां जिनके अन्तर्गत वह उनका प्रयोग कर सकता है और यह तभी सम्भव है जब वह वैधता की

सीमा में हो। अर्थात् मनमाने ढंग से वह बाध्यकारी शक्तियों का प्रयोग नहीं कर सकता। इस सम्बन्ध में स्पष्ट नियम हैं।

3. सत्ता की एक श्रेणीबद्धता (पदानुक्रम या हायरॉर्की) होती है। प्रत्येक पदाधिकारी इस व्यवस्था का एक भाग होता है। उच्चतर अधिकारियों का काम आदेश देना और निरीक्षण करना है। जबकि निम्न स्तर के अधिकारी या कर्मचारी उत्तरदायित्व को निभाते हैं और अनुपालन करते हैं। उनको याचना (अपील) करने का भी अधिकार होता है।
4. कर्त्तव्यों को निभाने के लिये पदाधिकरी संसाधनों के स्वामी नहीं होते हैं वरन् वे सरकारी संसाधनों के उपयोग कि लिये जवाबदेह होते हैं।
5. कार्यालय (विभाग, संगठन) निजी सम्पत्ति नहीं हैं। जिन्हें जब चाहें, मन चाहे अधिकारियों से भर दिया जाये। ना तो यह किसी की विरासत है और ना ही क्रय-विक्रय की वस्तु।
6. लिखित दस्तावेज प्रशासन के क्रियान्वयन का आधार होते हैं।

उक्त विशेषताओं के आधार पर प्रश्न किया जा सकता है कि सत्ता या प्रशासन के अधिकारियों या नौकरशाहों की विशेषता क्या होती है? वेबर ने इस विषय पर खुलकर बहस की है। उसके अनुसार अधिकारी-

- व्यक्तिगत तौर पर स्वतंत्र होता है अर्थात् व्यक्तिगत तौर पर वह किसी का मातहत नहीं होता है। उसकी नियुक्ति एक संस्था के द्वारा किसी सरकारी पद पर होती है। इस नियुक्ति की शर्त संविदा होती है;
- नियमों के अनुसार वह उस सत्ता का क्रियान्वयन करता है जो उसको प्रदत्त की जाती है और उसकी वफादारी का मापदण्ड उसके द्वारा निष्ठा से किये गये कार्य होते हैं;
- नियुक्ति का आधार उसकी प्रशासकीय महारत और योग्यता होती है;
- उस पद पर नियुक्त किया जाता है, जिसमें वह तकनीकी दृष्टि से दक्ष हो;
- प्रशासनिक कार्यों को पूरा करना उसकी जिम्मेदारी होती है। कार्य की समय सीमा उसके लिये नहीं है; तथा
- वेतन और प्रोन्नति के अवसर उसके पुरस्कार हैं।

वेबर के अनुसार अपनी प्रकृति, अपने चरित्र और अपनी हैसियत (Status) से विधिक-तर्कसंगत नौकरशाही अन्य प्रशासनिक व्यवस्थाओं की तुलना में तकनीकी आधार पर उच्चतर होती हैं। नौकरशाही द्वारा शासित लोग इस विशिष्ट प्रशासन के अभ्यस्त हो जाते हैं। वे सोच भी नहीं सकते कि कोई दूसरी प्रशासनिक व्यवस्था उनको संतुष्टि दे सकती है। अतः यह कहा जा सकता है कि नौकरशाही ने स्वयं को मजबूती से स्थापित किया है। वह स्थायी और अनिवार्य बन गई है। मैक्स वेबर का विधिक-तर्कसंगत नौकरशाही का प्रतिमान जिन अनिवार्यताओं की ओर इशारा करता है, उन्हें याद रखना जरूरी है, जिनका आगे चलकर विश्लेषण किया जायेगा।

5.8 वेबर और आदर्श प्रकार की नौकरशाही

जैसा कि आपको बताया गया कि वेबर ने नौकरशाही का एक प्रतिमान तैयार किया, जिसको वेबरवादी प्रतिमान भी कहा जाता है। इस प्रतिमान की मुख्य विशेषताऐं हैं- वैयक्तिक रहित व्यवस्था, नियम, दक्षता का क्षेत्र, पदसोपान, व्यक्तिक और लोक लक्ष्य, लिखित अभिलेख, और एकतंत्र। अब हम सब विशेषताओं पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

5.8.1 वैयक्तिक विहीन व्यवस्था

यहाँ दो बातें समझना है। वेबर का मानना यह है कि सत्ता का केन्द्र या तो व्यक्ति होगा या व्यवस्था होगी। यदि व्यक्ति सत्ताधारी होगा तो वैयक्तिक सत्ता होगी और यदि व्यवस्था सत्ता का केन्द्र होगी तो यह वैयक्तिक विहीन व्यवस्था (Impersonal order) कहलायेगी। वेबर का प्रतिमान वैयक्तिक विहीन व्यवस्था पर जोर देता है। उसका मानना है कि सत्ता या नियंत्रण की शक्ति का स्रोत व्यक्ति नहीं वरन् पद या वह स्थिति होती है, जिसको विधिक मान्यता मिली होती है। व्यक्ति हटते रहते हैं, लेकिन पद बना रहता है। स्थिति या कार्यालय व्यक्ति को एक हैसियत(Status) प्रदान करता है। व्यक्ति उस हैसियत के अनुसार मात्र एक भूमिका अदा करता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई भी व्यक्ति किसी पद पर फिट हो सकता है। नौकरशाही व्यवस्था में पद के अनुरूप प्रशिक्षण अनिवार्य है। योग्यता और दक्षता का यही मापदण्ड है।

5.8.2 नियम

क्या नौकरशाह एकाधिकारवादी होते हैं? या वे अपनी सनक के अनुसार काम करते हैं? मैक्स वेबर के अनुसार तर्कसंगत विधिक सत्ता की विशेषता यह है कि नौकरशाही के निर्णय लेने और क्रियान्वयन की शक्ति नियमों द्वारा प्रतिबन्धित होती है। नियम उनका क्षेत्राधिकार निश्चित करते हैं और वे नियमों का पालन करने के लिये बाध्य होते हैं। यह नियम तकनीकी भी होते हैं और औपचारिक भी। इन नियमों को तार्किकता के आधार पर क्रियान्वित किया जाता है। लेकिन यह तभी सम्भव होता है जब अधिकारी या संगठन को नियमों की जानकारी हो और उनके क्रियान्वयन के लिये प्रशिक्षण दिया जाये। वेबर के दृष्टिकोण को समझते हुए मर्टन ने लिखा है कि नियमों को वास्तव में साधन समझा जाता है और नौकरशाही में यह नियम स्वयं में साधन बन जाते हैं। स्थिति ऐसी उत्पन्न होने लगती है कि जो अन्तिम लक्ष्य है। (जैसे किसी योजना को पूरा करना) वह गौड़ हो जाता है और नियम अन्तिम लक्ष्य बन जाते हैं। नतीजा यह होता है कि अधिकारी लकीर के फकीर बन जाते हैं, पत्राचार में उलझ जाते हैं। अनौपचारिकता अर्थहीन हो जाती है और परिणाम स्वरूप बिलम्ब प्रशासनिक संकट पैदा करते हैं।

5.8.3 पदसोपानीय व्यवस्था

प्रशासन संगठन पर निर्भर होता है। संगठन की एक संरचना होती है। वह संरचना कुछ नियमों के अनुसार होती है। इन नियमों में वेबर की दृष्टि में सबसे अधिक तर्कसंगत नियम पदसोपान का है। पदसोपान के बारे में पहले भी लिखा जा चुका है। वेबर के अनुसार प्रत्येक निम्नस्तर कार्यालय अपने से उच्चतर कार्यालय के नियंत्रण और निरीक्षण के अधीन रहता है। उसका मानना है कि किसी संगठन के समस्त प्रशासनिक कर्मचारी एक परिभाषित पदसोपानीय व्यवस्था के द्वारा संगठित होते हैं। वेबर की दृष्टि में यह एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है कि आदेश ऊपर से आने चाहिए। संगठन के प्रत्येक स्तर पर यह सिद्धान्त लागू होना चाहिए।

5.8.4 वैयक्तिक और लोक ध्येय

प्रशासन का लक्ष्य जनहित होता है। लेकिन प्रशासन अधिकारियों के हाथ में होता है। इसलिये अक्सर प्रशासक वैयक्तिक हितों की पूर्ति की ओर भी मुड़ जाते हैं, यहाँ से आरम्भ होता है वैयक्तिक और लोकहितों के बीच टकराव। यहाँ वेबर का सुझाव यह है कि प्रशासकों का स्वामित्व किसी भी प्रकार से उत्पादन के संसाधनों या प्रशासन में नहीं होना चाहिए। यहाँ तक कि प्रशासन में प्रशासकों के किस स्थिति पद या स्थान पर तैनात किया जाये, यह अधिकार भी प्रशासकों को नहीं होना चाहिए। नौकरशाह अपने पद शक्ति और सत्ता का दुरूपयोग ना करें, इसलिये उन पर कुछ प्रतिबन्ध अनिवार्य हैं।

5.8.5 लिखित दस्तावेज

मैक्स वेबर ने अपने आदर्श प्रकार की सत्ता के लिये लिखित दस्तावेज को अनिवार्य बताया है। वह नौकरशाही में अनौपचारिकता को खतरनाक मानता है। उसका सुझाव है कि समस्त प्रशासनिक क्रियाओं, निर्णय और नियम लिखित रूप में तैयार किये जाये और उनको अभिलिखित(रिकार्ड) किया जाये। यहाँ तक कि किसी मीटिंग में यदि कुछ मौखिक फैसले हो तो उनको भी लिखा जाये। दस्तावेज अधिकारी को उत्तरदायी बनाते हैं। ये जनता के प्रति जबावदेह होते हैं। दस्तावेज भावी योजनाओं के लिये भी अनिवार्य होते हैं।

5.8.6 यौग्य व्यक्तियों का चयन

तकनीकी दृष्टि से प्रशासन के लिये योग्य व्यक्तियों का चयन मैक्स वेबर की तर्कसंगत-विधिक नौकरशाही की एक बड़ी विशेषता है। वह अपने प्रतिमान में योग्य, दक्ष, कर्मठ और समर्पित अधिकारियों के चयन पर बहुत जोर देता है। चयन के उपरान्त ऐसे अधिकारियों को वह प्रशिक्षण देने की सिफारिश करता है। ऐसे अधिकारियों के लिये वेबर एक निश्चित वेतन और एक निश्चित आय तक सेवा की गारन्टी देना चाहता है। अधिकारी अनिश्चय की स्थिति में ना रहे। आर्थिक दृष्टि से तनाव ना रहे। सेवा-शर्तों के कारण वह निराशा और हताशा की स्थिति में ना जाये, प्रोन्नति के उसे पूरे अवसर मिलें। लेकिन साथ ही कठोर अनुशासन और नियंत्रण का माहौल हो। यहाँ वेबर का दावा है कि एकल नौकरशाही संगठन (Monocrotic Bureaucratic) तकनीकी दृष्टि से सर्वाधिक निपुणता की गारन्टी देता है।

5.9 वेबरवाद की आलोचना

वेबर की नौकरशाही के प्रतिमान की प्रशंसा तो बहुत हुई है, किन्तु उसके आलोचक भी कम नहीं हैं। आलोचनाओं पर ध्यान देने से पहले हमें वेबरवादी प्रतिमानों से सम्बन्धित तीनों बातों पर ध्यान देना होगा: पहला- प्रतिमान की तार्किकता दूसरा- प्रतिमान की उपयुक्तता तथा तीसरा- प्रतिमान से प्राप्त अधिकतम क्षमता या कार्य कुशलता।

अब जहाँ तक पहली बात है, इस पर अनेक विद्वानों ने उंगली उठाई है। राबर्ट मर्टन का कहना है कि वेबर का विधिक-तर्किक प्रतिमान तर्कसंगत नहीं है। यह प्रतिमान अनेक अनचाहे परिणामों को पैदा करता है। उदाहरण के लिये पदसोपानीय संरचना और उससे सम्बन्धित नियम (जिनको वेबर तर्कसंगत मानता है) ऐसे अनैच्छिक परिणाम दे सकते हैं जो लक्ष्य की प्राप्ति में बांधा बन सकते हैं। विलम्ब और मनोवैज्ञानिक तनाव ऐसे दुष्परिणाम हैं। मर्टन नौकरशाही को अक्षमता की संज्ञा देता है।

जहाँ तक वेबर के प्रतिमान की दक्षता और उपयुक्तता का सवाल है, मर्टन का तर्क है कि एक युवा और ओजस्वी या उत्साही स्नातक बड़े जोश के साथ नौकरशाही में प्रवेश करता है। लेकिन नौकरशाही का चरित्र ऐसा है कि कुछ ही समय में ही नौकरशाही उस युवा अधिकारी को नौकरशाह बना देती है। अर्थात् निष्क्रिय, लापरवाह, लकीर का फकीर, नियमों का कीड़ा, विलम्बकारी और या तो अनुत्तरदायी या फिर अत्यन्त सतर्क। काम की नहीं केवल अपने अस्तित्व को परवाह करने वाला। मर्टन के अनुसार प्रशिक्षण अधिकारी को सक्षम नहीं अक्षम बना देती है। नौकरशाही, जिसकी वकालत वेबर ने की है, मर्टन की दृष्टि में 'अक्षमता का प्रशिक्षण स्थल' है।

अन्य विद्वानों ने भी वेबरवाद की आलोचना की है। जिसका सार है-

1. वेबर की आदर्श प्रकार की नौकरशाही में आन्तरिक विरोधाभास है। प्रशासक से दक्षता की आशा करना और दूसरी ओर उसे आदेश देने का अधिकार देना अर्न्तविरोध पैदा करता है। फिर अधीनस्थ किस का

अनुपालन करे? तकनीकी उच्चतर का या अधिकार सम्पन्न अधिकारी का? पार्सन्स ने यह प्रश्न उठाया है।

2. वेबर का दूसरा आलोचक है एलविन गउल्डनर। उसका कहना है कि प्रशासकों का रूख नियमों के प्रति कैसा होता है। अर्थात् वे नियमों को अपने ऊपर थोपा हुआ समझते हैं या वे नियमों को अनिवार्य समझकर अपना मार्गदर्शक समझते हैं। वेबर अपने सिद्धान्त में इन प्रश्नों को उत्तर नहीं देता है।
3. प्रशासकों पर पर्यावरण और परिस्थितियों का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। वे तथ्य संगठन के आचरण को परिस्थितियों के अनुसार ढालते हैं। वेबर इस तथ्य की अनदेखी करता है।
4. रडौल्फ का तर्क यह है कि प्रशासन ना तो एक तर्कसंगत मशीन है और ना ही अधिकारी मात्र है, तकनीकी प्रकार्यात्मक व्यक्ति (कार्य करने वाला व्यक्ति) है जैसा कि वेबर ने माना है। प्रशासन में भावनाऐं भी उतनी अहम भूमिका अदा करती हैं, जितने नियम।
5. वेबर पर यह भी आरोप है कि निर्णय लेने के मामले में अधिकारियों के व्यक्तित्व और आचरण को वह महत्व नहीं देता है। सच यह है कि सामान्य सामाजिक और राजनीतिक मूल्यों का गहरा प्रभाव प्रशासकों के आचरण और निर्णय शक्ति पर पड़ता है।
6. विभिन्न स्थानों और समयों में वेबरवादी प्रतिमान को प्रशासन पर लागू नहीं किया जा सकता है। पीटर ब्लाउ के अनुसार वेबर के तर्कसंगत प्रशासन पर पुनः विचार करना चाहिए। परिवर्तित परिस्थितियों में संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति नौकरशाह के बदलते हुये स्वरूपों पर निर्भर है, जिसको वेबर महत्व नहीं देता है।
7. वेबर निपुणता को बहुत महत्व देता है, लेकिन ब्लाउ का मानना है कि मात्र नियमों के अनुरूप काम करके निपुणता नहीं आ सकती। निपुणता तभी सम्भव है, जब प्रशासक संगठन के लक्ष्य को बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार पूरा करने का प्रयास करे तथा अपने आचरण को भी परिस्थितियों के अनुसार ढाले।
8. वेबर पर एक आरोप यह है कि उसकी विधिक तर्कसंगत सत्ता एकाधिकारवाद को बढावा देती है। प्रायःआदेश देने वाले अधिकारी स्वयं को अपरिहार्य समझने लगते हैं, यह मनोवृत्ति एकाधिकारवाद को जन्म देती है।

संक्षेप में वेबर के प्रतिमान की आलोचनाओं को तीन बिन्दुओं पर समेटा जा सकता है, पहला- वेबरवादी प्रतिमान में आन्तरिक विरोधाभास है, दूसरा- तर्कसंगत नौकरशाह को सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश से अलग करके नहीं देखा जा सकता है। तीसरा- शब्द 'आदर्श प्रकार' (Ideal type) स्वयं में उलझे हुये शब्द है। वह आदर्श ही नहीं कहता, उसमें प्रकार भी लगाकर गुमराह करता है। दूसरे जो आदर्श रूस के लिये है, वह जरूरी नहीं कि अमरीका के लिये भी हो।

5.10 समालोचना

नौकरशाही से सम्बन्धित मैक्स वेबर के दृष्टिकाण को आपने समझ लिया होगा। इस दृष्टिकोण की खुलकर आलोचना हुई जो हमने आप को समझाने का प्रयास किया है। वेबर के समालोचकों का तर्क है कि अनुभावात्मक आधार पर वेबरवादी नौकरशाही की सार्थकता नहीं है। यह आधुनिक प्रशासन में कही भी फिट नहीं बैठती है। लेकिन यहाँ एक बात याद रखना है कि कोई भी चिन्तक अपने समाज के परिवेश से प्रभावित होता है। उसके विचारों में उसके अपने देश की परिस्थितियों या संकटों की झलक होती है। वेबर ने जो कुछ लिखा उसमें तत्कालीन जर्मन परिस्थितियों की अभिव्यक्ति है। वह आने वाली भावी परिस्थितियों या परिवर्तनों से बेखबर था।

वह उनके बारे में क्यों और क्या लिखता? उसके समय में पारम्परिक और करिश्माई सत्ता या संगठन का बोलबाला था। उसने विधिक-तर्कसंगत प्रतिमान का विचार रखकर यह बताने का प्रयास किया कि उसका आदर्श प्रकार का प्रतिमान दूसरे प्रतिमानों से श्रेष्ठ है और उसमें स्थायित्व है।

यदि वेबर यह दावा करता है कि उसका विधिक-तर्कसंगत प्रतिमान दक्ष अधिकारियों के साथ अधिकतम क्षमता प्राप्त कर सकता है, तब इसमें दोष क्या है। यह एक सामान्य वक्तव्य है जो आधुनिक समय में भी लागू होता है।

मैक्स वेबर औपचारिकतावाद पर अधिक बल देता है। यहाँ भी वेबर गलत नहीं है। आज प्रबन्धन की तकनीकों का विकास हुआ है और प्रशासन को वैज्ञानिकता मिली है। इसलिये औपचारिकतावाद आधुनिक प्रशासन की विशेषता बन गई है। क्या आज नौकरशाही प्रशासन से पीछा छुड़ाया जा सकता है? वेबर का उत्तर है कभी नहीं। जो समाज एक बार नौकरशाही के चंगुल में फंस गया, वह उससे निकल नहीं सकता।

आधुनिक समाजों ने वेबरवादी नौकरशाही के प्रतिमान को अपनाया हुआ है। इसमें बहुत कुछ सकारात्मक है तो कुछ नकारात्मक भी। चयन का आधार योग्यता, दक्षता, नियम और प्रशिक्षण, ये सकारात्मक विशेषताऐं हैं। पदसोपान नियम, व्यवस्था, तकनीकी का क्षेत्र, लिखित दस्तावेज इत्यादि नकारात्मक विशेषताऐं है। लेकिन सकारात्मकता और नकारात्मकता में तालमेल होना वेबर के प्रतिमान की विशेषता है।

अभ्यास प्रश्न-

1. मैक्स वेबर को किस शब्द का पर्यायवाची कहा गया है?
   क. वैज्ञानिक प्रबन्धन ख. लोक प्रशासन ग. नौकरशाही घ. नियोजन
2. नौकरशाही (ब्यूरोक्रेसी) शब्द का सबसे पहले प्रयोग किया?
   क. मैक्स वेबर ने ख. कार्ल फ्रीडरिच ने ग. गुलिक एण्ड उर्विक ने घ. डी गोरने ने
3. 'दि थ्योरी ऑफ सोशल एण्ड इकोनामिक आरगनाईजेशन' का लेखक है?
   क. मैक्स वेबर ख. राबर्ट मर्टन ग. टैलकॉट पारसन्स घ. पीटर ब्लाउ
4. वेबर द्वारा तैयार किये गये नौकरशाही के प्रतिमान का सबसे बड़ा आलोचक था?
   क. फ्रेडरिक टेलर ख. टेलकाट पारसन्स ग. उर्विक घ. हेनरी फेयोल
5. वेबरवादी प्रतिमान की निम्न में से कौन सी विशेषता नहीं है?
   क. व्यैक्तिक विहीन व्यवस्था ख. प्रकार्यात्मक फोरमैनशिप
   ग. पदसोपान घ. लिखित दस्तावेज
6. मैक्स वेबर ने तर्कसंगत-विधिक नौकरशाही का विचार रखते समय ध्यान में रखा?
   क. इग्लैण्ड की परिस्थितियों को ख. विश्व की परिस्थितियों को
   ग. जर्मनी की परिस्थितियों को घ. अमेरिकी की परिस्थितियों को
7. वेबर समर्थक था?
   क. पारम्परिक सत्ता का ख. करिश्माई सत्ता का
   ग. विधिक सत्ता का घ. विधिक-तार्किक सत्ता का

5.11 सारांश

नौकरशाही के अध्ययन में मैक्स वेबर ने एक अहम भूमिका अदा की है। उसके योगदान को संक्षेप में इस प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है-

1. वेबर ने प्रशासन को सत्ता का क्रियान्वयन कहा है। वह व्यवस्था जिसमें अधिकारियों का समूह अपनी योग्यता, दक्षता और स्थिति (पद) के आधार पर सत्ता का निष्पादन करे, उसे नौकरशाही कहते हैं।
2. वेबर ने विधिक सत्ता को तर्कसंगत कहा है और उसको विधिक-तार्किक कहा है।
3. वेबर ने विधिक-तार्किक सत्ता के संस्थागत स्वरूप को नौकरशाही कहा है।
4. वेबर की विधिक-तार्किक सत्ता को वेबरवादी प्रतिमान कहा जाता है।
5. विधिक-तार्किक नौकरशाही को वैधता- वैयक्तिक विहीन व्यवस्था, नियमों, निपुणता के क्षेत्र, लिखित अभिलेखों, तकनीकी दृष्टि से योग्य व्यक्तियों से प्राप्त होती है।
6. नौकरशाही के वेबरवादी प्रतिमान की आलोचनाओं का आधार तीन मुद्दे हैं- तर्कसंगतता जिसको आलोचक एक मिथ्या मानते हैं, समय और परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार ना होना और आधुनिकतम कार्य क्षमता की मात्र परिकल्पना करना।
7. वेबरवादी प्रतिमान के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू हैं।
8. वेबरवादी प्रतिमान की सार्थकता आज भी बनी हुई है। आज की नौकरशाही इसी प्रतिमान पर टिकी हुई है। यह कहा जा सकता है कि आधुनिक प्रशासनिक व्यवस्था मैक्स वेबर की ऋणी है।

5.12 शब्दावली

वैधता- किसी कृत या संस्था को विधिसम्मत बनाना। वैधता एक आधार है जिसके द्वारा बल या सत्ता का प्रयोग होता है। चुनाव संसद को वैधता प्रदान करते हैं। जनता चुनावों को वैधता प्रदान करती है। संविधान जनता के मताधिकार को वैधता प्रदान करता है। वैधता की अन्तिम कुंजी जनता के हाथ में होती है। वैधता एक मोहर है, जिसको लगाकर व्यक्ति या संस्था अपने कृत के औचित्य को सिद्ध करती है।

वैयक्तिक विहीन व्यवस्था- जिस तरह कानून का अपना कोई व्यक्तित्व नहीं होता है और उसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से स्वार्थ अथवा भावनात्मकता का कोई पुट नहीं होता है। इसी तरह का चरित्र यदि व्यवस्था का भी हो तो उसे वैयक्तिक विहीन व्यवस्था कहा जायेगा। इसका अर्थ है- सत्ता का केन्द्र व्यक्ति ना होकर व्यवस्था है। जहाँ पद, पद की शक्ति या अधिकार और स्थिति स्थायी होती है, व्यवस्था बनी रहती है, व्यक्ति आते-जाते रहते हैं।

करिश्माई- इसका अर्थ है दैवी उपहार या प्रतिभा। वह क्षमता जिसके माध्यम से करिश्माई व्यक्ति अपने अनुयाइयों को प्रभावित करता है या प्रोत्साहित करता है। अक्सर ऐसा व्यक्ति आध्यात्मिकता सम्पन्न होता है, लेकिन यदि कोई सांसारिक वयक्ति(राजनेता) सत्ता के लिये अपनी प्रतिभा या क्षमता या चतुराई का प्रयोग करके अपने अनुयाइयों को लुभाता है तो वह भी करिश्माई व्यक्ति कहलाया जा सकता है। वेबर का इशारा इसी प्रकार की करिश्माई सत्ता की और है।

5.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग, **2.** घ, **3.** क, **4.** ख, **5.** ख, **6.** ग, **7.** घ

5.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अवस्थी एण्ड अवस्थी: लोक प्रशासन के सिद्धान्त, लक्ष्मी नारायण, आगरा।
2. अवस्थी, ऐ0 ऐ0: पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, लक्ष्मी नारायण, आगरा।
3. मैक्स वेबर: दि थ्योरी ऑफ सोशल एण्ड एकोनामिक आर्गनाइजेशन, न्यूयार्क, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

4. सी0 लक्षमन्ना: ऐ0 वी0 सत्यनारायण राओः लेख, मैक्स वेबर, ऐडमिनिस्ट्रेटिव थिन्कर्स, सम्पादन, डॉ0 रविन्द्र प्रसाद, वी0ए0 प्रसाद।

5.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 अशोक कुमार, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन।
2. प्रशासनिक विचारक, आर0 पी0 जोशी एवं अंजु पारीक, रावत पब्लिकेशन।

5.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सत्ता और वैधता का, वेबर के दृटिकोण में क्या सम्बन्ध है?
2. वेबर ने नौकरशाही की क्या विशेषताऐं बताई हैं?
3. वेबर द्वारा तैयार किए गये नौकरशाही के प्रतिमान की व्याख्या कीजिए।

इकाई- 6 कार्ल मार्क्स

इकाई की संरचना

6.0 प्रस्तावना
6.1 उद्देश्य
6.2 कार्ल मार्क्स- एक परिचय
6.3 मार्क्स का दर्शन और प्रशासन
6.4 नौकरशाही के स्रोत और मार्क्सवाद
6.5 नौकरशाही: शोषण का एक विचार
6.6 हीगेल के नौकरशाही पर विचार
6.7 मार्क्स द्वारा हीगेल को नकारना
6.8 नौकरशाही की परजीवी भूमिका
6.9 नौकरशाह का निजी लक्ष्य
6.10 रहस्यमय नौकरशाही
6.11 नौकरशाही की विशेषताऐं
    6.11.1 श्रम विभाजन
    6.11.2 पदसोपानियता
    6.11.3 भर्ती
    6.11.4 नियम
6.12 अलगाववाद का सिद्धान्त
    6.12.1 स्वतंत्रता की क्षति
    6.12.2 सृजनता की क्षति
    6.12.3 मानवीयता की क्षति
    6.12.4 नैतिकता की क्षति
6.13 वर्ग और नौकरशाही
6.14 नौकरशाही से सर्वहारा का अलगाव
    6.14.1 नौकरशाही का विलुप्त होना
    6.14.2 संक्रमण काल में नौकरशाही
6.15 मूल्यांकन
6.16 सारांश
6.17 शब्दावली
6.18 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.19 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.20 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.21 निबन्धात्मक प्रश्न

6.0 प्रस्तावना

एक दार्शनिक और समाजशास्त्री, जिसके विचारों ने 20वीं सदी में उथल-पुथल मचा दी, उसका नाम कार्ल मार्क्स है। साधारणतया यह समझा जाता है कि मार्क्स साम्यवादी विचारधारा का प्रर्वतक था, लेकिन वास्तविकता यह भी है कि उसने प्रत्येक समाज में विशिष्ट प्रशासकीय व्यवस्था को जिसकी अभिव्यक्ति नौकरशाही करती है, समाज के शोषण का स्रोत माना है। इस तरह मार्क्स ना केवल एक दार्शनिक है, वह एक ऐसा प्रशासनिक चिंतक है, जिसने राज्य को वर्ग-संघर्ष में कमजोर वर्ग को कुचलने का एक साधन और नौकरशाही को राज्य के लक्ष्य की प्रगति का एक उपकरण माना। एक ऐसा उपकरण जो रहस्यमयी है, जिसकी तकनीकें गोपनीय हैं, जो अलगाववाद को जन्म देता है। जिसके कारण स्वतंत्रता, रचनात्मकता, मानवीयता और नैतिकता की क्षति होती है। मार्क्स का दावा है कि पूँजीवादी व्यवस्था में समाजवादी क्रान्ति के बाद संक्रातिकाल में सर्वहारा अन्ततः राज्य और नौकरशाही की समाप्ति की प्रक्रिया आरम्भ करेगा।

6.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के आधार को समझ पायेंगे।
- प्रशासन के सम्बन्ध में मार्क्स के विचारों को जान पायेंगे।
- नौकरशाही के सम्बन्ध में मार्क्स के दृष्टिकोण को समझ पायेंगे।
- नौकरशाही के चरित्र, भूमिका और विशेषताओं के सम्बन्ध में जान पायेंगे।
- नौकरशाही और अलगाववाद के सिद्धान्त को समझ पायेंगे।
- संक्रांतिकाल में सर्वहारा और नौकरशाही के सम्बन्ध को जान पायेंगे।

6.2 कार्ल मार्क्स- एक परिचय

20वीं शताब्दी को यदि किसी चिन्तक ने सर्वाधिक प्रभावित करके आधुनिक विश्व को विचारात्मक आधार पर विभाजित किया है तो नि:संदेह वह कार्ल हीनरिच मार्क्स है। आमतौर पर मार्क्स को साम्यवादी अथवा मार्क्सवादी विचारधारा का व्याख्याता माना जाता है। यह सच है लेकिन सच यह भी है कि वह आधुनिक सामाजिक विज्ञानों का महानतम वास्तुकार है। उसकी छाप चिन्तन, दर्शन, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीतिक सिद्धान्त और इतिहास पर समान रूप से देखी जा सकती है।

आप प्रश्न करोगे कि मार्क्स का सम्बन्ध प्रशासन से क्या था? प्रशासनिक विचारकों के अध्ययन से आप को पता लगा होगा कि संगठन उनके प्रशासनिक अध्ययन की बुनियादी इकाई है। मार्क्स के सम्पूर्ण दर्शन का सार इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या में सिमटा हुआ है। ऐतिहासिक भौतिकवाद की अवधारणा के माध्यम से उसने समस्त सामाजिक विज्ञानों को समाज के एक सूत्री विज्ञान में एकबद्ध करने का प्रयास किया है। उसके अनुसार संगठन, समाज के अस्तित्व की बुनियादी इकाई है। राज्य, कानून, धर्म, विचारधारा, कला, नैतिकता सब संगठन पर टिके हुए हैं। इस तरह हम देखेंगे कि संगठनों का विश्लेषण करके किस तरह उसने स्वयं को प्रशासन से जोड़ लिया।

कार्ल मार्क्स (1818-1883) युवावस्था से ही क्रांतिकारी था। इसलिए उसने जब पेरिस को अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों का केन्द्र बनाना चाहा तो कुछ ही समय में उसे षड़यंत्रकारी घोषित करके फ्रान्स से निकाल बाहर कर दिया गया। उसने लंदन में शरण ली और अंतिम समय तक वहीं रहा। लंदन में ऐन्जेल्स उसका विचारात्मक मित्र

बन गया और ऐंजेल्स से मिलकर उसने अनेक विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की जिनमें 'दि होली फैमिली' 'दि कम्यूनिस्ट मैनिफैस्टो' और 'दास कैपिटल' का प्रभाव आधुनिक युग पर गहरा पड़ा है।

6.3 मार्क्स का दर्शन और प्रशासन

प्रशासनिक चिन्तक के रूप में मार्क्स को समझाने के लिए मार्क्स के बुनियादी विचारों या दर्शन को समझाना अनिवार्य है।

पहला, मार्क्स 'पदार्थ'(matter) को विश्व के सम्पूर्ण घटनाक्रम का कारण मानता है। पदार्थ, भौतिक होता है। अत: उसने विश्व के इतिहास को भौतिक दृष्टि से देखा है। इसलिए उसने इतिहास की जो व्याख्या की है, उसे भौतिकवादी व्याख्या कहा गया है। भौतिक को आर्थिक भी कहा जा सकता है।

दूसरे, मार्क्स ने 'वर्ग-संघर्ष' का विचार रखा है। उसके अनुसार सभी समाजों का इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है। यह वर्ग-संघर्ष समाजों के आन्तरिक अन्तर-द्वन्द्व का परिणाम होता है। उसके इस विचार को द्वन्दात्मक भौतिकवाद कहा जाता है। अर्थात पदार्थ में अन्तर-द्वन्द्व होता है। इस अन्तर-द्वन्द्व को दर्शाकर मार्क्स इस नतीजे पर पहुँचता है कि वर्ग-संघर्ष एक ऐसा घटनाक्रम है, जो तब से चल रहा है जब से दो वर्ग अस्तित्व में आये, एक काम करने वाले का दूसरा काम लेने वाले का। अर्थात एक शोषित वर्ग तथा दूसरा शोषणकर्ता का वर्ग।

अब यहाँ से मार्क्स का प्रशासनिक वर्ग (गुट) उभरता है। मार्क्स के अनुसार शोषणकर्ता-वर्ग जिस माध्यम से कामगार-वर्ग का शोषण करता है, वह माध्यम है राज्य। राज्य के अनेक आधार हैं- धर्म, पुलिस, नैतिक मूल्य। इनमें सबसे प्रभावशाली हथकण्डा है, नौकरशाही।

इस तरह मार्क्स के अनुसार वर्ग-संघर्ष में नौकरशाही एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। नौकरशाही प्रशासकीय संगठनों के संरचना का आधार है। अतः मार्क्स के प्रशासनिक विचार नौकरशाही के आस-पास घूमते हैं।

6.4 नौकरशाही के स्रोत और मार्क्सवाद

मार्क्सवाद का अर्थ है, मार्क्स और ऐन्जेल्स के विचार। दोनों ने मिलकर नौकरशाही पर अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। दोनों ने ऐतिहासिक भौतिकवाद के सिद्धान्त के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि नौकरशाही के चार स्रोत रहे हैं- धर्म, राज्य, वाणिज्य तथा प्रौद्योगिकी। जब धर्म पुजारियों का क्षेत्राधिकार था तो वे ही पदाधिकारी भी होते थे। रक्षा के अधिकार को पुजारियों या धर्म गुरूओं ने सैनिकों को हस्तान्तरित कर दिये थे। यह व्यवस्था नौकरशाही की सरलतम चरण थी और यह विशेषता पुरातन युग की थी।

पुरातन समाज जब सभ्य समाज में परिवर्तित होने लगा तो तत्कालीन समाज वर्गों में विभाजित हो गया। सत्ता का उदय हुआ और वह केन्द्रित हो गयी। सत्ता का अर्थ था, राज्य या रजवाड़ा। राज्य ने अपने उपकरणों (पुलिस, सैनिक) के माध्यम से सत्ता का प्रयोग करना आरम्भ किया। कानून बनाना, उन्हें लागू करना और कराधान का कार्य। इन कार्यों के लिये उन्हें अधिकारियों/कर्मचारियों की आवश्यकता हुई और इस तरह नौकरशाही को एक नया आयाम मिल गया।

समाज और आगे बढ़ा। आर्थिक गतिविधियों में तीव्रता आयी। व्यापार और वाणिज्य का विकास होने लगा। अब लेखा-जोखा तैयार करना, उसको बनाये रखना, आय-व्यय का ब्योरा तैयार करना और इन सबके लिये नियम बनाना, उनका क्रियान्वयन करना। अर्थात वाणिज्य से सम्बन्धित समस्त प्रक्रियाओं से गुजरना नये समाज की विशेषता हो गई। अतः नौकारशाही को अपने पांव पसारने का पूरा अवसर मिल गया। यह नौकरशाही का निजी स्वरूप था, जिसका आकार और कार्य-क्षेत्र सरकारी नौकरशाही से कहीं अधिक बन गया।

नौकरशाही का चौथा स्रोत प्रौद्योगिकी बनी। अधिकतम उत्पादन के लिये विकसित प्रौद्योगिकी एक अनिवार्य शर्त बन बयी। तकनीकों और प्रक्रियाओं का स्तरीय होना एक लक्ष्य बन गया। इसका अर्थ यह नहीं था कि मशीनों के विकास के साथ मनुष्य का महत्व कम हो गया। रूपरेखा तैयार करने, योजनाएँ बनाने, नियंत्रण करने, निरीक्षण करने और मशीनों को संचालित करने के लिये व्यक्तियों की आवश्यकता तो बनी ही रहती है। अतः प्रौद्योगिकी के दौर में भी नौकरशाही और शक्तिशाली हो जाती है। वह प्रौद्योगिकी पर नियंत्रण रखती है इसलिये उसे प्रौद्योगिकी का पूरा ज्ञान होता है। इस तरह आज ब्यूरोक्रेसी (नौकरशाही) टैक्नोक्रेसी (प्रौद्योगशाही) में बदल गयी है।

6.5 नौकरशाही: शोषण का एक उपकरण

मार्क्स ने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या के माध्यम से, आदिम युग से लेकर पूँजीवादी व्यवस्था तक नौकरशाही का समय के अनुसार विश्लेषण किया है। अब यहाँ आप प्रश्न कर सकते हो कि नौकरशाही का विश्लेषण करने का मार्क्स का उद्देश्य क्या था?

मार्क्स इस मूल धारणा के साथ इतिहास की व्याख्या करता है कि सभी समाजों का इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है। विस्तार में ना जाकर हम यह समझायेंगे कि मार्क्स की दृष्टि में प्रत्येक समाज में वर्ग-सघर्ष दो वर्गों के मध्य होता है। एक कमजोर लेकिन संख्या में अधिक और दूसरा शक्तिशाली लेकिन संख्या में कम। शक्तिशाली वर्ग कमजोर वर्ग का शोषण करता है और उसके शोषण का उपकरण है- नौकरशाही।

मार्क्स स्वयं अपने अनुभव से इन नतीजों पर पहुँचा कि एक ओर (पूँजीवादी व्यवस्था में) सामाजिक वर्ग है और दूसरी ओर नौकरशाही, जो सामाजिक वर्गों या गुटों को अपना अधीनस्थ मानती है। पूँजीवादी व्यवस्था में नौकरशाही की जड़ें बड़ी गहरी होती हैं और वह शोषण का एक सतत् स्रोत होती है।

मार्क्स के अनुसार, राज्य ने वर्ग-संघर्ष में दमन की एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। राज्य के चार दमनकारी उपकरण हैं- धर्म, सेना, पुलिस और नौकरशाही। राज्य के कानूनों का इन चारों उपकरणों को संरक्षण प्राप्त होता है। शोषण की क्रिया में ये चारों संगठित हैं, लेकिन इनमें सबसे महत्वपूर्ण भूमिका नौकरशाही की होती है। इसकी मानसिकता दमनकारी है। पूँजीवादी व्यवस्था में यह सत्ता पक्ष का और पूँजीपतियों का साथ देती है। यह राजनीति का एक अंग है और राजनीति की अभिव्यक्ति है।

मार्क्स, वेबर की तरह नौकरशाही पर कोई सिद्धान्त प्रतिपादित करना नहीं चाहता है। वह तो केवल यह बताना चाहता है कि नौकरशाही शोषणकर्ता का एक प्रभावशाली हथकण्डा है। वह राजनीतिक-वर्ग के हितों की रक्षा करता है। उसका चरित्र दमनकारी है। राज्य को नष्ट होना चाहिये, तब नौकरशाही स्वतः नष्ट हो जायेगी। मार्क्स ने अपने ग्रन्थ 'क्रीटीक ऑफ हीगेल्स फिलॉसफी आर्फ राइट' में लिखा 'नौकरशाही राजनीतिक अलगाव की संस्थागत प्रतिछाया है।' यह एक हित का समर्थन करती है। यह तभी समाप्त हो सकती है, जब सामान्य हित वास्तविक हो जाये।

6.6 हीगेल के नौकरशाही पर विचार

नौकरशाही के सन्दर्भ में मार्क्स, हीगेल से बहुत प्रभावित था। इसलिये उसने 'क्रीटिक ऑफ हीगेल्स फिलॉसफी' की रचना की। अतः अनिवार्य हो जाता है कि नौकरशाही पर हीगेल के विचारों को समझा जाये तो आप इस तरह समझिये कि-

हीगेल के अनुसार नौकरशाही मुख्य शासकीय संगठन है। राज्य विकास की अन्तिम कड़ी है। जैसे ही राज्य अस्तित्व में आता है, स्वतः प्रशासकीय गतिविधियां आरम्भ हो जाती हैं। राजा, नौकरशाह और रजवाड़ों के अधिकारी राजनीतिक अभिकर्ता (Actor) बन जाते हैं।

राज्य में तीन वर्ग होते हैं- कृषि वर्ग, व्यापारी वर्ग तथा सर्वजनीय वर्ग। तीनों वर्गों का सोचने का ढंग अलग होता है, अर्थात् अनुदारवादी, व्यक्तिवादी तथा सार्वजनिक। व्यवस्था के दो अंग होते हैं- नागरिक समाज और राज्य। पहला अंग विशिष्ट हितों का प्रतिनिधित्व करता है और दूसरा जनहित का। हीगेल के अनुसार नौकरशाही नागरिक समाज (Civil Society) और राज्य के मध्य एक कड़ी का काम करती है। नौकरशाही आम हितों की रक्षा करती है, इसलिये नौकरशाही का चरित्र सार्वभौमिक होता है। इससे आप देखेंगे कि हीगेल की दृष्टि में नौकरशाही एक अनिवार्य संस्था है जो सार्वजनिक हितों की पोषण है। सार्वजनिक हित नौकरशाही का लक्ष्य होता है।

हीगेल विनियमिकिय यांत्रिकी (Regulatory Mechanism) की बात करता है। इसका अर्थ यह है कि नौकरशाही एक व्यवस्था है। पदसोपानीय और विशिष्टीकरण इस व्यवस्था के ताने-बाने हैं। एक प्रकार की सम्बन्धात्मक व्यवस्था है। यहाँ जो दाखिल होता है, उसकी सोच वैसा ही बन जाती है। यह सोच है, सार्वजनिक हित और उन हितों का ज्ञान। आन्तरिक और बाहरी प्रभाव नौकरशाही की दिशा निश्चित करते हैं। व्यवस्था उनका एक निश्चित स्वभाव बना देती है। वे अपने कर्तव्यों को पहचानते हैं। बाहरी प्रभाव राजनीतिक व्यक्तियों से आता है। निचले स्तर पर कष्टदायक निवारण मागें आती हैं, यही विनियमिकीय यांत्रिकी है।

हीगेल नौकरशाही को अनिवार्य तो मानता है, लेकिन उसे बिल्कुल छूट देने का पक्षधर नहीं है। वह उस पर नियंत्रण रखकर सन्तुलन बनाये रखने की बात करता है। नौकरशाही राजनीतिक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है और समाज और राज्य के मध्य समन्जस्य बैठाना उसका कर्तव्य है।

6.7 मार्क्स द्वारा हीगेल को नकारना

अभी आपको बताया गया है कि हीगेल नौकरशाही को सर्वजन हितों का प्रतिनिधि मानता है। मार्क्स ने इस तर्क को स्वीकार नहीं किया है। उसके अनुसार राज्य दो प्रकार के होते हैं, तर्क-संगत राज्य(Rational State) और शोषक राज्य। तर्क-संगत राज्य सामान्य हितों का रक्षक हो सकता है, लेकिन वर्तमान राज्य शोषण का प्रतीक है और नौकरशाही इस शोषण का उपकरण है। वह हीगेल के इस विचार से सहमत है कि एक सर्वजनीय वर्ग होता है। इस वर्ग को उसने 'सर्वहारा' वर्ग कहा है। लेकिन उसे दु:ख है कि नौकरशाही इस वर्ग के हितों के विरूद्ध काम करती है। इसके साथ ही मार्क्स ने खुलकर नौकरशाही के विरूद्ध लिखना प्रारम्भ किया।

सन् 1843 में मार्क्स ने नौकरशाही पर खुलकर हमला बोलना आरम्भ किया। पहला आक्रमण सरकारी तंत्र की मानसिकता पर था। उसने आरोप लगाया कि नौकरशाह जिस संसार में रहते हैं, वह यथार्थ के संसार से भिन्न है। मार्क्स ने समझाया कि किस तरह उसने उत्पादन सम्बन्धों को निश्चित किया। वह नौकरशाही की संरचना के विरूद्ध नहीं था, बल्कि उसके चरित्र और नियत के विरूद्ध था। उसने नौकरशाही की जो विशेषताऐं बताई वह इस तरह हैं-

1. नौकरशाही राज्य के भीतर एक बन्द समाज है।
2. नौकरशाही राज्य का एक उपकरण है।
3. राज्य वर्ग आधिपत्य का एक अंग है।
4. राज्य का उद्देश्य एक ऐसी व्यवस्था पैदा करना है कि एक वर्ग दूसरे वर्ग को कुचलता रहे।
5. नौकरशाही राज्य के इस लक्ष्य को पूरा करने का साधन है।

मार्क्स पर हीगेल का एक प्रभाव अवश्य पड़ा। वह यह कि यदि हीगेल नौकरशाही पर कुछ नहीं लिखता तो मार्क्स भी इस विषय को नहीं छूता। यह एक तरह से नकारात्मक प्रभाव था। वह राज्य को एक ऐसी संस्था मानता है जो दमन, अत्याचार और उत्पीड़न के लिए एक कानून व्यवस्था विकसित करती है और उसको कानूनी हैसियत प्रदान करती है। मार्क्स के अनुसार इस उत्पीड़न में जो सर्वहारा वर्ग झेलता है, नौकरशाही अहम भूमिका अदा करती है। लेकिन मार्क्स का दावा है, बल्कि उसकी भविष्यवाणी भी है कि जब वर्ग-विहीन समाज अस्तित्व में आयेगा तो

राज्य स्वतः विलुप्त हो जायेगा और नौकरशाही अर्थहीन हो जायेगी। परन्तु यह मार्क्स की मात्र एक कल्पना थी। उसने स्वयं स्वीकार किया कि नौकरशाही एक वास्तविकता है। यह प्रशासन की एक व्यवस्था है, जो उसमें लगे व्यक्तियों पर आधारित है।

6.8 नौकरशाही की परजीवी भूमिका

नौकरशाही की परजीवी भूमिका मार्क्स का एक यथार्थवादी दृष्टिकोण है। वह नौकरशाही को एक ऐसा 'जन्तु' मानता है, जो अपनी खुराक के लिए दूसरे जन्तु पर निर्भर रहता है। इस सम्बन्ध में उसका दृष्टिकोण क्या है? वह राजनीतिक व्यवस्था को समाज के लोगों की एक सम्पूर्ण उत्पादक गतिविधि मानता है। उसने 'कन्ट्रीब्यूशन टू दि क्रीटीक ऑफ पोलिटिकल इकोनॉमी' की प्रस्तावना में लिखा कि 'राज्य और कानून स्वायत्त(आटोनोम्स) नहीं हैं और ना ही वे मानव मस्तिष्क का परिणाम है। यह जीवन की भौतिक परिस्थितयाँ होती हैं, जिनसे राज्य और कानून जन्म लेते हैं।' उत्पादन पद्धति मानव के सामाजिक जीवन का आधार है। उत्पादन पद्धति में मानव जीवन की झलक होती है। जैसा वे उत्पादन करते हैं, वैसे वे बन जाते हैं।

व्यक्तियों का स्वरूप क्या है? मार्क्स के अनुसार वे वैसे नहीं हैं जैसे दिखाई पड़ते हैं। उनकी वास्तविकता कुछ और है। सामाजिक-वर्ग उत्पादन के सम्बन्ध निश्चित करते हैं। उत्पादन पद्धति के भीतर दो वर्ग होते हैं, एक वह जो उत्पादन के साधनों का स्वामी होता है, दूसरा वह जो साधन विहीन होता है। नौकरशाही की स्थिति सावयवी (Organic) या आंगिक नहीं है। उसका सीधा सम्बन्ध उत्पादन प्रक्रिया से नहीं है। वह 'परजीवी' है और उसका काम समाज के दबंग-वर्ग के हितों की रक्षा करना और उनकी हैसियत को बनाये रखना है। ऐसा करके वह स्वयं को जीवित रखती है।

6.9 नौकरशाह का निजी लक्ष्य

नौकरशाही के दो रूप होते हैं: पहला- एक संस्था का रूप, दूसरा- व्यक्तिक नौकरशाहों का रूप। पहले रूप को राज्य पोषित करता है। राज्य नौकरशाही की निजी सम्पत्ति है। लेकिन जहाँ तक व्यक्तिक नौकरशाह का सवाल है, वहाँ राज्य का ध्येय नौकरशाह का निजी लक्ष्य बन जाता है। वह उच्च पदों के लिए भागता है, प्रोन्नति पर प्रोन्नति चाहता है, यही उसका निजी अन्तिम लक्ष्य होता है।

अब भले ही नौकरशाही का संस्थागत हैसियत से कोई सामान्य लक्ष्य हो या व्यक्तिक रूप से निजी लक्ष्य, शोषण समाज का ही होता है। मार्क्स राज्य को परिवार और नागरिक समाज की तुलना में महत्व नहीं देता है। राज्य समाज के घटकों में समरसता और सामन्जस्य पैदा नहीं करता है। उसका चरित्र नैतिक नहीं है। वह समाज के घटकों की गुणात्मक भलाई नहीं चाहता है। 'दि जर्मन आइडियोलॉजी' नामक अपने ग्रन्थ में मार्क्स ने राज्य के उदय के कारणों पर प्रकाश डालते हुए लिखा कि 'उत्पादन की प्रत्येक पद्धति ने एक विशिष्ट राजनीतिक संगठन को जन्म दिया, जिसने दबंग वर्ग के हितों की रक्षा की।' राज्य एक ऐसी संस्था है, जिसमें व्यक्ति (राजनीतिक व्यक्ति, पूँजीपति, धर्मगुरू) अपने सामान्य हितों को आगे बढ़ाते हैं और मार्क्स के अनुसार नौकरशाही राज्य में शोषण के एक उपकरण का काम करती है। वह समाज की आवश्यकताओं, कष्टों और समस्याओं को इस तरह संचित करती है कि अन्ततः निजी हितों की पूर्ति हो सके। यह नौकरशाही का सबसे घिनौना कृत (कार्य) होता है। नौकरशाही आत्माविहीन होती है। वह समाज की आत्मा (भावना, संवेदना, नैतिकता) का शोषण करती है। संक्षेप में नौकरशाह व्यक्तिगत रूप से शोषण में भागीदार बनकर, प्रगति और प्रोन्नति की अपेक्षा करता है और सामूहिक रूप से वह विशिष्ट वर्ग के हितों की रक्षा करता है।

6.10 रहस्यमय नौकरशाही

मार्क्स, नौकरशाही की एक और रोचक विशेषता बताता है। मार्क्स के अनुसार 'नौकरशाही की सामान्य भावना है, गोपनीयता और रहस्या' वह राज्य के मामलों को बाहरी लोगों से छिपा लेती है। उसमें खुलापन नहीं होता है। पारदर्शिता का तो सवाल ही नहीं उठता। वह जन-समाज से डरती है। वह सोचती है कि यदि समाज को पता लग गया (राजनीतिक सन्दर्भ में) तो यह रहस्य को धोखा देना होगा, यह गद्दारी होगी।

नौकरशाही के पीछे सत्ता होती है। सत्ता निरंकुशवाद को जन्म देती है। लोग नौकरशाही का आदर तो करते हैं, लेकिन डरकर। वह उसे पूजाभाव से देखते हैं, लेकिन सहमे रहते हैं। कारण नौकरशाही की रहस्यमयिता है। वह अलगाव पसंद है। नौकरशाही इस अलगाव और रहस्यमयिता को बनाये रखने का सतत् प्रयास करती है। आम लोग अलग-थलग पड़ जाते हैं। नौकरशाही यही चाहती है, ताकि उसकी परजीवी और दमनकारी प्रकृति का किसी को एहसास ना हो सके।

6.11 नौकरशाही की विशेषताऐं

मार्क्स ने विशेषताओं के आधार पर नौकरशाही को चार भागों में विभाजित किया है। श्रम विभाजन, पदसोपान, भर्ती और नियम। इन चार विशेषताओं के आधार पर उसने नौकरशाही की समीक्षा की है, जो इस प्रकार है-

6.11.1 श्रम विभाजन

मार्क्स के अनुसार, श्रम का विभाजन पूँजीवादी समाज के संगठन को पूरी तरह उत्पादकीय बना देता है, लेकिन मार्क्स की दृष्टि में मूल रूप से श्रम का विभाजन देखने को मिलता है। वह बौद्धिक और भौतिक गतिविधियों के माध्यम से क्रिया करते हैं। इस तरह इस श्रम विभाजन से कामगार पर उत्पादन का बोझ पड़ता है। लेकिन इस उत्पादकता का लाभ पूँजीपति को मिलता है और इस लाभ का एक भाग नौकरशाही को मिलता है। आश्चर्य यह है कि अधिक उत्पादकता कामगार को हानि पहुँचाती है। नवीन प्रोद्यौगिकी से उत्पादन बढ़ता है और लोग बेरोजगारी का शिकार होते हैं।

6.11.2 पदसोपानियता

नौकरशाही को अपने निजी हितों की पूर्ति से कोई नहीं रोक सकता, ना आन्तरिक प्रभाव ना बाहरी प्रभाव। व्यक्तिगत तौर पर नौकरशाही को प्रोन्नति चाहिये। मार्क्स नौकरशाही की पदसोपानियता को ज्ञान की पदसोपानियता कहता है। यह व्यवस्था ऐसी है कि उच्चतम बिन्दु (शिखर) वाला निचले वृत्तों (सरकिल) को उच्चतम वृत्त में पहुँचने का ज्ञान देता हैं, जबकि निचले वृत उच्चतर को बनाये रखने का गुण सिखाता है। मार्क्स के अनुसार नौकरशाही एक वृत्त है, जिससे कोई नहीं बच सकता। मार्क्स यहाँ यह कहना चाहता है कि पदसोपानियता मात्र श्रेणीबद्धता नहीं है। यह एक ऐसा वृत है, जिसमें ऊपर से लेकर नीचे तक सब फंसे हुये हैं। सबके पास ज्ञान है, सब परजीवी हैं। सब एक-दूसरे को धोखा देते हैं। लक्ष्य अपने निजी हितों की पूर्ति (करियर) है।

6.11.3 भर्ती

क्या उदार शिक्षा, सेवीवर्ग (नौकरशाह) को मानवीय बना सकती है? मार्क्स का कहना है, कभी नहीं। वास्तविकता यह है कि एक नौकरशाह के कार्य का यांत्रिकी चरित्र और उस पर कार्यालय के दबाव उसको अमानवीय बना देते हैं।

मार्क्स के अनुसार प्रतियोगितात्मक परीक्षा के माध्यम से नौकरशाही की भर्ती अनुचित है। नौकरशाह में एक राजनेता के गुण होने चाहिए, जिनका आंकलन परीक्षा से नहीं किया जा सकता। क्या महान शासकों ने कोइ परीक्षा पास की? परीक्षा से केवल उच्च-वर्ग के लोगों को लाभ मिलता है, क्योंकि वे उच्च शिक्षा प्राप्त होते हैं। उच्च शिक्षा उनको वे मूल्य और आचरण सिखाती है जो पूँजीवाद के लिये सहायक होते हैं। उच्च शिक्षा धनी और निर्धन की खाई को चौड़ा करती है। नौकरशाह आम लोगों से मेल नहीं खाते। उन्हें कामगार के शोषण का कोई दर्द नहीं होता है।

6.11.4 नियम

नौकरशाह नियमों के गुलाम होते हैं। नियम उनकी मौलिक सोच का ह्रास कर देते हैं। वे परिस्थितियों से बंधे हुए होते हैं। निष्क्रिय अनुपालन उनकी प्रकृति होती है। वह नियमों के पालन को साध्य मान लेते हैं। वे निष्ठुर हो जाते हैं। उनकी दृष्टि में मनुष्यों से अधिक नियमों का महत्व होता है। यह स्थिति मार्क्स की दृष्टि में घातक है।

6.12 अलगाववाद का सिद्धान्त

मार्क्स के अध्ययनकर्ताओं को 20वीं शताब्दी में पता लगा कि उसने सन् 1844 में एक और सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था, जिसे ‘अलगाववाद का सिद्धान्त’ कहा गया। इस सिद्धान्त के आधार पर मार्क्स यह समझाना चाहता है कि किस तरह पूँजीवादी औद्योगिक उत्पादन व्यवस्था में लोग स्वयं-अपने में और आपस में अजनबी बन जाते हैं। विद्वानों का विचार है कि मार्क्स का अलगाववाद का सिद्धान्त (Theory of Elienation) उसके पूँजीवादी व्यवस्था के विश्लेषण का आधार है।

मार्क्स के सिद्धान्त का सार यह है कि पूँजीवादी व्यवस्था में श्रमिक पहले अपने काम पर से नियंत्रण खो देते है; तत्पश्चात वे अपने जीवित रहने के अधिकार पर से अपना नियंत्रण खो देते हैं। श्रमिकों की अपनी कोई स्वायत्ता नहीं होती। वे अपनी आजादी खो देते हैं। उनके कार्य पर उनका स्वामित्व नहीं रहता है। वह एक मशीन (उत्पादन का उपकरण) का मात्र एक गुटका बन जाता है। श्रमिक नीरस काम करते हैं, उत्पादन की प्रक्रिया पर उनका नियंत्रण नहीं होता है, उत्पादन पर उनका स्वामित्व नहीं होता है और उन सम्बन्धों पर भी उनका नियंत्रण नहीं होता है जो उनके आपस में होते हैं।

नतीजा, वे अपनी मानवीय प्रकृति से अलग हो जाते हैं। आजादी खो देते हैं। वे स्वयं में अजनबी बन जाते हैं, उनमें अलगाव की प्रवृत्ति पनपती है, अपने अस्तित्व से अलगाव। इन परिस्थितियों में वे मानव प्राणी नहीं रह सकते। इस अलगाववाद को पूँजीवादी व्यवस्था में नौकरशाही और बदत्तर बना देती है।

मार्क्स के अनुसार अलगाववाद के चार मुख्य पहलू हैं- स्वतंत्रता खो देना, रचनात्मकता खो देना, मानवीयता खो देना तथा नैतिकता खो देना। यहाँ खो देने का अर्थ क्षति से है। इन चारों पहलुओं की व्याख्या इस प्रकार है-

6.12.1 स्वतंत्रता की क्षति

शोषण की स्थिति में अलगाव पनपता है। संगठन के सभी सदस्य अलगाव के शिकार हो जाते हैं। शोषणकर्ता भी और शोषित भी। दबाव श्रमिकों को नौकरी के लिये मजबूर करते हैं। वे स्वतंत्र होकर अपना पेशा नहीं चुन सकते। नौकरी करते ही वे प्रबन्धन के निरंकुश आदेश के नीचे दब जाते हैं। वे अपनी स्वतंत्रता खो देते हैं। प्रबन्धक भी अलगाववाद का शिकार होते हैं, क्योंकि वे भी नौकर ही होते हैं। वह अधिक से अधिक मुनाफे के पीछे भागता है। वह भी अपनी इच्छानुसार जीवन नहीं गुजारता है। कला, साहित्य, संगीत, आमोद-प्रमोद, सैर-सपाटा सब उससे दूर रहते हैं।

6.12.2 सृजनता की क्षति

नौकरशाही एक निर्जीव मानसिकता है। वह व्यवस्था के सदस्यों की रचनात्मकता या सृजनता में हस्तक्षेप करती है। हस्तक्षेप के कारण श्रमिक या कर्मचारी में नीरसता आ जाती है। उत्पादन घटने लगता है। असन्ष्ट कामगार अपनी रचनात्मकता की क्षमता खो देता है। वह स्वयं को एक उपकरण समझता है। प्रशासक भी सृजनता को खो देता है। उसकी कोई पहचान नहीं होती है। वह गुमनामी के गर्त में डूब जाता है, क्योंकि वह जो कुछ कहता है वह सामूहिक प्रयास का नतीजा होता है। नीति वह बनाता है, लेकिन श्रेय राजनेता को मिलता है। इसलिये वह निराश रहता है और अपनी रचनात्मकता को खो देता है।

6.12.3 मानवीयता की क्षति

श्रमिकों का लक्ष्य काम करना होता है, एक मशीन की तरह। परिणाम यह होता है कि वे अपनी मानवीयता खो देते है। श्रम-विभाजन के कारण श्रमिक नीति-निर्माण में भागीदार नहीं होते हैं। वे संगठन का लक्ष्य भी तय नहीं कर सकते। कार्यालय एक बड़ी मशीन बन जाता है। वहाँ भी कोई मानवीयता नहीं होती है। प्रशासक भी इसी मशीन का एक अंग है। मानवीय मूल्य नौकरशाही के लिये एक कोरी कल्पना होते हैं। मूल्यों की नौकरशाही में कोई भूमिका नहीं होती है।

6.12.4 नैतिकता की क्षति

मार्क्स के अनुसार जब स्वतंत्रता और मानवीयता क्षतिग्रस्त हो जाती है तो नैतिकता कहाँ रहती है। पूँजीवादी व्यवस्था में श्रमिकों से उनकी आजादी छीन लेना और उनको मात्र पशु समझना क्या नैतिक हो सकता है? सृजनता की क्षति से भी नैतिकता की क्षति होती है। पूँजीपति का केवल लाभ की ओर भागना और उसके लिये श्रमिकों का शोषण करना घोर अनैतिकता है। मार्क्स का दावा है कि नैतिकता के ह्रास में नौकरशाही भी भागीदार है। नौकरशाह अपनी पदोन्नति के लिये काम करता है।, क्या यह नैतिक है? मार्क्स पूछता है।

6.13 वर्ग और नौकरशाही

मैक्स वेबर ने नौकरशाही के औचित्य को तार्किकता के आधार पर स्वीकार किया है। वेबर को पढ़ने के बाद आपको पता लगा होगा कि वह नौकरशाही और तार्किकता को सिक्के के दो पहलू मानता है। वह नौकरशाही को सामाजिक योजना अथवा रचना का एक तार्किक उत्पादन मानता है। उसके अनुसार सामाजिक मांगों की पूर्ति और सामाजिक समस्याओं का समाधान तार्किकता के आधार पर किया जा सकता है और यह क्षमता केवल नौकरशाह में है।

मार्क्स, मैक्स वेबर के इन तर्कों से सहमत नहीं है। वह 'वर्ग' (वर्ग-संघर्ष) के दृष्टिकोण से नौकरशाही को देखता है। उसके अनुसार नौकरशाही का जन्म सामाजिक विभाजन के गर्भ में हुआ है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि मार्क्स नौकरशाही को एक वृत मानता है। जिससे कोई भी बच नहीं सकता। नौकरशाही एक श्रेणीबद्धता है। मार्क्स के अनुसार वास्तव में यह श्रेणीबद्धता ज्ञान की पदसोपानियता है। शिखर, नियमों और नीतियों से तल को ज्ञान देता है। शिखर, तल के सामान्य ज्ञान को देता है या फिर यूँ समझिये कि मुख्य कार्यपालक और दूसरे बड़े अधिकारी प्रत्येक स्तर पर अधीनस्थों को नीतियों, नियमों और निर्णयों से अवगत कराते हैं। जबकि अधीनस्थ मुख्य कार्यपालक को जनता की समस्याओं, परेशानियों और मांगों से अवगत कराते हैं।

6.14 नौकरशाही से सर्वहारा का अलगाव

सर्वहारा (मेहनतकश, मजदूर) पूँजीवादी व्यवस्था से आकार में एक बड़ा वर्ग है। नौकरशाही, दूसरा लेकिन एक छोटा वर्ग है। मार्क्स के अनुसार नौकरशाही अपनी प्रवृति से सर्वहारा (Proletariot) से अलग रहती है और सर्वहारा नौकरशाही से दूर रहता है। यह भौतिक और मानसिक द्वन्द्व के कारण होता है।

इस अलगाव के दो नतीजे निकलते हैं। पहला यह है कि राज्य के अन्त के साथ नौकरशाही भी धराशायी हो जाती है। मार्क्स के अनुसार सर्वहारा को चाहिए कि वह नौकरशाही की संस्था को स्वयं उखाड़ फैंके, ताकि राज्य स्वतः समाप्त हो जाये। ऐसा सर्वहारा कि क्रान्ति से हो सकता है। राज्य सर्वहारा के लिये किसी काम का नहीं है।

अलगाव का दूसरा नतीजा यह निकलता है कि राजनीतिक व्यवस्था को उखाड़ फैंकने के लिये उतनी हिंसा की आवश्यकता होती है, जितनी मजबूत नौकरशाही की पकड़ होती है। मार्क्स कहता है कि यूरोपीय नौकरशाही-तंत्र में सर्वहारा का काम नौकरशाही को अपने हित में प्रयोग करना नहीं, बल्कि नष्ट करना है। राज्य कैसे नष्ट होगा? मार्क्स कहता है-

6.14.1 नौकरशाही का विलुप्त होना

मार्क्स की दृष्टि में नौकरशाही-वर्ग समाज की विशेषता है। पूँजीवादी समाज राज्य का अन्तिम पड़ाव है। यहाँ सर्वहारा की क्रान्ति आवश्यगामी है। क्रान्ति के बाद जो समाज अस्तित्व में आयेगा उसे नौकरशाही की आवश्यकता नहीं होगी। पहले राज्य विलुप्त होगा। नई व्यवस्था में कार्यों (प्रशासन) की प्रकृति में परिवर्तन आयेगा। यह तभी सम्भव है कि जब सामान्य हित वास्तविक हित बन जायेंगे।

मार्क्स के अनुसार सर्वहारा क्रान्ति का लक्ष्य सर्वप्रथम वर्गों को समाप्त करना होता है। जब ऐसा हो जायेगा तो राज्य की शक्ति को कुचलना होगा। वैसे वर्ग-विहीन समाज में राज्य स्वतः ही विलुप्त हो जायेगा और सरकारी काम-काज का रूप बदल जायेगा। वे साधारण प्रशासकीय कार्यों में बदल जायेंगे।

मार्क्स यहाँ यह कहना चाहता है कि सर्वहारा की क्रान्ति के बाद पूँजीवादी राज्य और उसका उपकरण, नौकरशाही तो समाप्त हो जायेगी लेकिन उसके बाद सर्वाहारा राज्य अस्तित्व में आयेगा। केन्द्रीकरण नये राज्य की विशेषता होगी। सर्वहारा, बुर्जुआई (पूँजीपति, जमींदार तथा नौकरशाह) के हाथ से सत्ता छीन लेगा तथा नये राज्य में उत्पादन के समस्त साधनों को केन्द्रित कर देगा। ‘प्रशासन नये राज्य में भी होगा लेकिन उसमें तुच्छ नौकरशाही की दरिन्दगी नहीं होगी।’ राज्य के विलुप्त होने का अर्थ होगा, नौकरशाही का दम तोड़ना।

6.14.2 संक्रमण काल में नौकरशाही

पूँजीवादी राज्य और समाजवादी वर्ग-विहीन समाज के मध्य का काल(समय) मार्क्स की दृष्टि में संक्रमण या संक्राति काल (Transitional period) होगा। इस दौरान प्रशासकों के चरित्र और स्वभाव में आमूल परिवर्तन लाया जायेगा। सबसे पहले उन्हें सर्वहारा के नियंत्रण में लाना होगा। तत्पश्चात् वे पूरे समाज के नियंत्रण में होंगे।

मार्क्स ने अपने ग्रन्थ ‘दि सिविल वार इन फ्रान्स’ में संक्रान्ति काल का एक चित्रण प्रस्तुत किया है। उसके अनुसार, स्थानीय सरकार का स्वरूप कम्यून होगा। चाहे वह केन्द्रीय प्रशासन हो या गांव, केन्द्रीय शासन के महत्वपूर्ण कार्यों को दबाया नहीं जायेगा, लेकिन अब उनका निर्वहन कम्यून करेगा। कम्यून के सदस्य पूर्णतया उत्तरदायी होंगे। संक्रान्तिकाल में श्रमिक अधिकारी होंगे। प्रशासकों का चरित्र रहस्यमयी नहीं होगा; वे परजीवी नहीं होंगे। वे बड़े वेतन पाने वाले चापलूस नहीं होंगे; वे दम्भी और घमण्डी नहीं होंगे। वे समाज के उत्तरदायी प्रतिनिधि होगें, क्यों कि वे जनता के निरीक्षण मे रहेंगे। उनसे आशा की जायेगी कि वे संक्रन्तिकाल को समाजवाद की ओर ले जाये।

इस तरह मार्क्स के वैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुसार पूँजीवादी वर्ग में सर्वहारा की क्रान्ति होगी। क्रान्ति के बाद संक्रान्तिकाल आयेगा, वर्ग समाप्त होंगे, राज्य विलुप्त हो जायेगा, नौकरशाही धवस्त हो जायेगी, सर्वहारा की तानाशाही स्थापित होगी और अन्ततः समाजवाद के दर्शन होने लगेंगे।

6.15 मूल्यांकन

मार्क्स ने जिस दृष्टि से नौकरशाही का परीक्षण किया है उसका सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्तर पर असाधारण महत्व माना गया है। मार्क्स नौकरशाही को राज्य का एक अभिन्न अंग मानता है। मार्क्स से पहले नौकरशाही को एक अच्छी और कल्याणकारी संस्था माना जाता था। विशेष रूप से हीगेल ने नौकरशाही के औचित्य को प्रत्येक स्तर पर सिद्ध करने का प्रयास किया है। मार्क्स के लेखों के बाद नौकरशाही के बारे में विद्वानों का दृष्टिकोण पूरी तरह बदल गया। प्रसिद्ध विचारक 'अवीनेरी' ने तत्कालीन सामाजिक सत्ता की एक बिगड़ी हुई छाया को नौकरशाही कहा और 'हाल ड्रेपर' ने नौकरशाही को राज्य के स्वस्थ शरीर में एक ऐसा फोड़ा कहा, जिसे राज्य से प्रथक नहीं किया जा सकता है। मार्क्स इस संसार को बदलना चाहता था। यह लक्ष्य सर्वहारा के द्वारा पूरा किया जा सकता था। मार्क्स ने नौकरशाही का जो विश्लेषण किया है उसका राजनीतिक लक्ष्य था- राज्य के साथ नौकरशाही को भी धवस्त करना। मार्क्स हिंसा में विश्वास करता है और हिंसा के माध्यम से राज्य को उखाड़ फैंकने की वकालत करता है।

लेकिन यहाँ यह भी स्वीकार करना होगा कि मार्क्स ने नौकरशाही के सम्बन्ध में जो कुछ भी लिखा, वह सत्यता के समीप तो था लेकिन वर्ग-विहीन समाज की स्थापना, राज्य का विलुप्तीकरण और नौकरशाही का ध्वस्तीकरण इतना सरल नहीं है, जितना मार्क्स समझता था।

अभ्यास प्रश्न-

1. मार्क्स की प्रसिद्ध पुस्तक नाम क्या है?
   क. कार्ल मार्क्स सेलेक्टेड राइटिंग्स   ख. कम्यूनिस्ट मैनेफेस्टो
   ग. कैपिटलिज्म एण्ड माडरनिटी   घ. इन्साइड ब्यूरोक्रेसी
2. 'क्रीटीक ऑफ हीगेल्स फिलासफी ऑफ राइट' का लेखक कौन है?
   क. मार्क्स   ख. हीगेल   ग. हाल ड्रेपर   घ. कार्ल शां
3. कौन सा स्रोत नौकरशाही का नहीं है?
   क. धर्म   ख. राज्य   ग. वाणिज्य   घ. सेना
4. 'दि जर्मन आइडियोलाजी' का लेखक है:
   क. हीगेल   ख. ऐन्जेल्स   ग. मार्क्स   घ. ड्राकर
5. नौकरशाही के प्रश्न पर मार्क्स ने किसका विरोध किया?
   क. मैक्स वेबर का   ख. फयोरबाख का
   ग. हीगेल का   घ. ऐन्जेल्स का
6. मार्क्स की भविष्यवाणी है कि-
   क. राज्य विलुप्त हो जायेगा   ख. समाज विलुप्त हो जायेगा
   ग. नौकरशाही का अस्तित्व बना रहेगा   घ. सर्वहारा नष्ट हो जायेगा।

6.16 सारांश

1. विचारात्मक आधार पर आधुनिक समय को यदि किसी ने बदला है तो वह कार्ल मार्क्स है। वह एक क्रान्तिकारी दार्शनिक है और साम्यवादी क्रान्ति का अगुआ है।
2. मार्क्स ने नौकरशाही की प्रकृति का विश्लेषण, वर्ग और राज्य के सन्दर्भ में किया और उसे राज्य के भीतर एक बन्द समाज कहा।
3. मार्क्स ने नौकरशाही को राज्य द्वारा कमजोर वर्ग के शोषण का एक उपकरण बताया।
4. मार्क्स ने नौकरशाही को सामाजिक विभाजन का परिणाम बताया।
5. वर्ग-समाज में नौकरशाही पूँजीपतियों और राजनेताओं का पक्ष लेती है। मार्क्स की दृष्टि में नौकरशाही परजीवी होते हैं। उनका काम दबंग वर्गो की हैसियत और विशेषाधिकारों को बनाये रखना होता है।
6. मार्क्स के अनुसार, नौकरशाही जन-समूह के अलगाव का प्रतीक है। प्रशासन में पदसोपान और गोपनीयता की वह आलोचना करता है। पूँजीवादी प्रशासन शोषण और अयोग्यता का उपकरण है।
7. संक्रान्तिकाल में मार्क्स के अनुसार नौकरशाही सर्वहारा के नियंत्रण में होगी और उनको मजदूरों के बराबर मजदूरी मिलेगी।
8. यद्यपि मार्क्स स्वयं को सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में वैज्ञानिक मानता है, लेकिन अन्त में वह भी काल्पनिक बन जाता है। लोकतांत्रिक समाजों में नौकरशाही की भूमिका को नकारते हुए उसने जो भी कुछ लिखा है वह त्रुटिपूर्ण है।
9. फिर भी मार्क्स ने जिस तरह नौकरशाही का गहराई से विश्लेषण किया है, उससे प्रशासकीय व्यवस्था को समझाना सरल हो गया है।

6.17 शब्दावली

मार्क्सवाद- वे विचार या विश्वास जो मार्क्स और ऐन्जेल्स के लेखों पर आधारित हैं, मार्क्सवाद कहलाते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था में सर्वहारा द्वारा क्रान्ति लाना, पूँजीवादी व्यवस्था को उखाड़ फैकना, राज्य का विलुप्त होना, नौकरशाही का ध्वस्त होना और समाजवादी समाज की स्थापना मार्क्सवाद का सार है।

सर्वहारा- कारखानों में काम करने वाले मजदूर जो औद्योगिक उत्पादन का महत्वपूर्ण स्रोत हैं और जिनका पूँजीपति और नौकरशाह शोषण करते हैं।

बुर्जुआई- वह वर्ग जिसका उत्पादन, उत्पादन के संसाधनों और पूँजी पर अधिपत्य होता है। यही वर्ग शोषण करता है और नौकरशाही को अपने हितों की रक्षा के लिये एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल करता है।

नौकरशाही का मुर्झाना- मार्क्स के अनुसार नौकरशाही-वर्ग समाज की देन है। यह राज्य के शोषण के लिये उपकरण है। जब सर्वहारा, क्रान्ति के माध्यम से पूँजीवादी व्यवस्था को उखाड़ फैकेगा और सर्वहारा की तानाशाही स्थापित हो जायेगी, तब एक वर्ग-विहीन समाज उदित होगा। राज्य विलुप्त हो जायेगा और नौकरशाही अपनी सामयिकता खो देगी। परिणाम यह होगा कि नौकरशाही मुर्झा जायेगी।

6.18 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख, **2.** क, **3.** घ, **4.** ग, **5.** ग, **6.** क

6.19 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एस0 अधीनेरी: दि सोशल एण्ड पॉलिटिकल थॉट ऑफ कार्ल मार्क्स, लंदन केम्ब्रिज यूनिर्वस्टी प्रेस।
2. मैकलेलान: कार्ल मार्क्स, सेलेक्टेड राइटिंगस, आक्सफोर्ड यूनिर्वस्टी प्रेस।
3. प्रभाव कुमार दत्त: कार्ल मार्क्स, लेख (एडी) ऐडमिनिस्ट्रेटिव थिकंर्स 1991, स्ऱ्टलिंग पब्लिशर्स।
4. जाकिर हुसैन: राजनीतिक चिन्तक, प्रकाश पब्लिशर्स।

6.20 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 अशोक कुमार, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन।
2. प्रमुख प्रशासनिक चिंतक, डॉ0 नरेन्द्र कुमार थोरी, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स।

6.21 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नौकरशाही पर मार्क्स के विचारों की विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. मार्क्स की दृष्टि में नौकरशाही की विभिन्न समाजों में क्या भूमिका रही है?
3. मार्क्स के प्रशासनिक विचारों का आधार क्या है?

इकाई- 7 लूथर हैल्से गुलिक

इकाई की संरचना

7.0 प्रस्तावना
7.1 उद्देश्य
7.2 लूथर गुलिक- जीवन परिचय
7.3 लूथर गुलिक के प्रमुख विचार एवं योगदान
    7.3.1 संगठन के सिद्धान्त
    7.3.2 पोस्टकार्ब का सिद्धान्त
    7.3.3 विभागीकरण के आधार
    7.3.4 मुख्यालय-क्षेत्रीय कार्यालय सम्बन्ध
7.4 लोक प्रशासन पर लूथर गुलिक के विचार
7.5 सारांश
7.6 शब्दावली
7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
7.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

7.0 प्रस्तावना

लोक प्रशासन इतना ही पुराना है, जितना कि समाज व राज्य। परन्तु इसका सचेत शास्त्रीय अध्ययन आरम्भ हुए एक शताब्दी ही हुए हैं। राजनीति विज्ञान की तुलना में जहाँ प्लेटो का रिपब्लिक (Republic), अरस्तू की पालीटिक्स (Politics), हॉब्स का लेवियाथन (Leviathan) आदि महान ग्रन्थ हैं, वहीं लोक प्रशासन में ऐसा कोई प्राचीन ग्रन्थ नहीं है। अध्ययन और चिन्तन के विषय के रूप में लोक प्रशासन का देर से आरम्भ होने का कारण वुडरो विल्सन ने बताने का प्रयास किया। लोक प्रशासन की प्रकृति एवं उसके लक्ष्यों के विषय और चिन्तन की परम्परा अपेक्षाकृत नयी है। इसका प्रादुर्भाव वुडरो विल्सन के लेख 'प्रशासन का अध्ययन' (The Study of administration) से हुआ। इस लेख में राजनीति और प्रशासन के मध्य एक स्पष्ट रेखा खींची गयी थी। इस विचारधारा के समर्थन में अन्य प्रशासनिक चिंतक भी जुड़ गये। जैसे विलोबी, एल0 डी0 वाइट, लूथर गुलिक, हेनरी फेयोल तथा उर्विक। लूथर गुलिक लोक प्रशासन को अनुशासन के रूप में विकसित एवम् लोकप्रिय बनाने वाले विचारक के रूप में जाने जाते हैं। गुलिक लोक प्रशासन में शास्त्रीय विचारक भी माने जाते हैं। 1937 में लिंडल उर्विक के साथ मिलकर उन्होंने 'Papers on the Science of Administration' (पेपर्स ऑन दी साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन) लिखी। यह लोक प्रशासन के विकास में एक महत्वपूर्ण कड़ी थी।

7.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- लूथर गुलिक के जीवन के सम्बन्ध में जान पायेंगे।
- गुलिक के प्रशासनिक विचारों से अवगत हो पायेंगे।

- लोक प्रशासन के क्षेत्र में उसके योगदान से अवगत हो पायेंगे।

7.2 लूथर गुलिक- जीवन परिचय

लूथर हैल्से गुलिक का जन्म सन् 1892 में जापान में हुआ था। 28 वर्ष की आयु में उसने कोलम्बिया विश्वविद्यालय से 'डाक्टरेट' की उपाधि प्राप्त की। सन् 1939 में 'डाक्टर ऑफ लिटरेचर' (D.Lit.) की उपाधि से सुशोभित किये गये। शैक्षणिक कार्य में निरन्तर अध्ययन करते हुए सन् 1954 में पुन: 'डाक्टर ऑफ लॉ लेबर' की उपाधि प्राप्त की। गुलिक कई वर्षों तक विभिन्न विश्वविद्यालयों में प्रोफेसर रहे। साथ ही साथ उन्होंने बहुत से राष्ट्रों के प्रशासनिक प्रबन्ध समिति के सलाहकार के रूप में काफी योगदान प्रदान किया।

प्रथम विश्वयुद्ध के समय गुलिक राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद (National Defence Council) में कार्यरत थे। सन् 1920 से लगभग 40 वर्ष तक 'न्यूयार्क शहर शोध संस्थान' (New York City Research Institute) से जुड़े रहे। न्यूयार्क शहर के प्रशासक के पद पर सन् 1954 से लेकर 1956 तक कार्यरत थे। 'लोक प्रशासन संस्थान न्यूयार्क' के अध्यक्ष पद की भी गरिमा बनाये रखी और राष्ट्रपति के प्रशासनिक प्रबन्ध समिति के सदस्य के रूप में भी कार्य किया। इससे विदित होता है कि वे भिन्न-भिन्न समय पर विभिन्न संस्थानों एवं प्रशासनिक प्रबन्ध पर सदैव अपनी योग्यता एवं अनुभवों को बांटते रहे।

गुलिक लेखन शैली के क्षेत्र में भी धनी थे। इस क्षेत्र में उन्होंने महती योगदान प्रदान किया है।

1. पेपर्स आन द साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन
   Papers on the Science of Administration (1937)
2. एडमिनिस्ट्रेटिव रेफलेक्सन फ्राम वर्ल्ड वार- II
   Administrative Reflections from World War- II
3. मेट्रोपालीटन प्रबलम्स एण्ड अमेरिकन आइडियाज
   Metropolitan Problems and American Ideas.
4. मार्डन मैनेजमेन्ट फार द सिटी ऑफ न्यूयार्क
   Modern Management for the City of New York.

7.3 लूथर गुलिक के प्रमुख विचार एवम योगदान

संगठनों के प्रबन्ध की 'शास्त्रीय विचारधाराओं' को सर्वश्रेष्ठ तरीके से लोकप्रिय करने वाले लूथर गुलिक और लिंडल उर्विक हैं, जिनके कार्य इस विषय का परिचय कराते हैं। लूथर गुलिक औपचारिक संगठन के प्रबल समर्थक थे। इन्हें फ्रेडरिक विन्सलो टेलर और मैक्स वेबर के समान ही माना जाता है। गुलिक का विश्वास था कि प्रशासन के कतिपय सिद्धान्त हैं। गुलिक के योगदान को निम्नवत शीर्षकों के अन्तर्गत समझा जा सकता है-

7.3.1 संगठन के सिद्धान्त

पूर्व में बताया गया है कि लूथर गुलिक का सम्बन्ध औपचारिक संगठन विचारधारा से है। ये शास्त्रीय विचारक (Classical Thinker) माने जाते हैं। इनका विश्वास था कि संगठन के कुछ सामान्य सिद्धान्त होते हैं और इन सिद्धान्तों को लागू करने से संगठन की प्रभावशीलता में वृद्धि की जा सकती है। शास्त्रीय विचारकों का मुख्य ध्यान मितव्यता और दक्षता पर आधारित था। इनका मत है कि यदि प्रशासन के सामान्य सिद्धान्तों का अनुपालन सुनिश्चित किया जाये तो संगठन में अधिकतम मितव्यता और दक्षता प्राप्त की जा सकती है। लूथर गुलिक, हेनरी

फेयोल द्वारा प्रतिपादित प्रशासन के चौदह सिद्धान्त से काफी प्रभावित थे। इन्होंने संगठन के दस सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है।

1. **कार्य विभाजन या विशेषीकरण-** संगठन के 10 सिद्धान्तों में गुलिक कार्य के विभाजन या विशेषीकरण के सिद्धान्त को सर्वाधिक महत्व देते हैं। उनका मत है कि कार्य का विभाजन केवल संगठन का आधार ही नहीं, बल्कि कारण भी है। अन्य शास्त्रीय विचारक भी कार्य विभाजन को संगठन का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त मानते हैं। कार्य के विभाजन का आशय यह है कि कार्य को सर्वप्रथम छोटे-छोटे भागों में बांटा जाए और प्रत्येक भाग का कार्य विशिष्ट व्यक्ति ही करे। कार्य का विभाजन कर दिए जाने से ना केवल कार्य को करना आसान होगा, अपितु विशेषीकरण का लाभ भी उठाया जा सकेगा, क्योंकि एक-सा कार्य करते रहने से कर्मचारी उस कार्य में विशेष दक्षता प्राप्त कर लेता है।
2. **विभागीय संगठनों के** आधार- गुलिक, संगठन का दूसरा सिद्धान्त विभागीय संगठनों के आधार के रूप में पहचानते हैं। गुलिक ने इस पर काफी कुछ लिखा। उसने विभागीयकरण के चार आधारों की विवेचना की है, जिनका विस्तार से वर्णन अगले भाग में दिया जाएगा। संक्षेप में ये आधार हैं- पर्पज या प्रयोजन, प्रोसेज या प्रक्रिया, पर्सन या व्यक्ति तथा प्लेस या स्थान। गुलिक का विभागीयकरण का यह सिद्धान्त ''चार-पी'' (Four 'P') सिद्धान्त के नाम से अधिक लोकप्रिय है।
3. **पदसोपान द्वारा समन्वय-** समन्वय, संगठन के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों में से एक है। गुलिक भी समन्वय स्थापना के कई तरीके बताते हैं, जिनमें से एक है पदसोपान द्वारा समन्वय। यह संगठन में समन्वय स्थापना में सहायक होता है।
4. **सचेत समन्वय-** गुलिक संगठन में जान-बूझकर, सचेत प्रक्रिया द्वारा समन्वय स्थापना को संगठन का चौथा सिद्धान्त बताते हैं। वस्तुतः समन्वय स्थापना के लिए सचेत प्रयास किए जाने आवश्यक हैं।
5. **समितियों द्वारा समन्वय-** समितियों के माध्यम से समन्वय स्थापना को गुलिक संगठन का पांचवा सिद्धान्त बताते हैं। समन्वय की स्थापना के लिए समितियों का गठन भी किया जा सकता है। इनके माध्यम से औपचारिक व प्रभावी समन्वय स्थापना की जा सकती है।
6. **विकेन्द्रीकरण-** विकेन्द्रीकरण से आशय है, प्रशासनिक सत्ता का एक स्थान पर केन्द्रित ना होकर संगठन के विभिन्न स्तरों पर निहित होना। विकेन्द्रीकरण को गुलिक संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त मानते हैं, क्योंकि इसका सम्बन्ध कार्य-विभाजन से होता है।
7. आदेश **की एकता-** आदेश की एकता सिद्धान्त से आशय है कि प्रशासनिक संगठन में किसी कर्मचारी को अपने तुरन्त उच्च अधिकारी से ही आदेश ग्रहण करने चाहिए और केवल उसी के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। यह सिद्धान्त एक स्वामी एक अधीनस्थ के विचार पर बल देता है।
8. **स्टाफ एवं सूत्र-** गुलिक स्टाफ एवं सूत्र को संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त बताते हैं। स्टाफ परामर्शदात्री कार्य सम्पन्न करता है और सूत्र नीति बनाता है, निर्णय लेता है और उन्हें क्रियान्वित करता है।
9. **प्रत्यायोजन-** इसका आशय है, सत्ता सहित कार्यों का हस्तान्तरण। जब अधिकारी के पास कार्य-भार बढ़ जाता है या कार्य का तकनीकी पक्ष जटिल हो जाता है तो वह सत्ता सहित कार्यों को हस्तान्तरित करता है। उसे ही प्रत्यायोजन कहा जाता है।
10. **नियन्त्रण का क्षेत्र-** गुलिक, नियन्त्रण के क्षेत्र को संगठन का अन्तिम सिद्धान्त बताते हैं। इसका आशय यह होता है कि एक प्रशासनिक संगठन में एक उच्चाधिकारी अपने अधीन कितने कर्मचारियों के कार्यों का प्रभावशाली रूप से नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण कर सकता है। यह अवधारणा वी0 ए0 ग्रेक्यूनास के 'ध्यान के विस्तार क्षेत्र' के सिद्धान्त से सम्बन्धित है।

इस प्रकार अन्य शास्त्रीय विचारकों की तरह गुलिक भी संगठन के सिद्धान्तों की व्याख्या करते हुए उन्हें संगठन में लागू करने का आग्रह करते हैं।

7.3.2 पोस्टकार्ब विचार

लोक प्रशासन का शायद ही कोई विद्यार्थी होगा जो 'पोस्टकार्ब' के विचार से अनभिज्ञ हो। पोस्टकार्ब विचार के माध्यम से लूथर गुलिक ने कार्यपालिका के कार्यों को गिनाया है। पोस्टकार्ब सात अक्षरों से मिलकर बना शब्द है, जिसका प्रत्येक अक्षर एक विशिष्ट कार्य को दर्शाता है- P- प्लानिंग, O- ऑर्गेनाइजिंग, S- स्टाफिंग, D- डायरेक्टिंग, Co- कॉओर्डिनेटिंग, R- रिर्पोटिंग, B-बजटिंग।

इन सातों क्रियाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

1. **प्लानिंग या नियोजन-** नियोजन या आयोजन कार्यपालिका का प्रथम कार्य है या कहा जाय प्रशासन की प्रथम गतिविधि है। नियोजन का लक्ष्य निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न गतिविधियों की पहचान करना है। तथा साथ ही उस क्रम की भी पहचान करना है या प्राथमिकताऐं तय करनी हैं ताकि हम अपने निर्धारित लक्ष्यों तक प्रभावशाली रूप से पहुँच सकें। नियोजन का उद्देश्य संगठन के मानवीय तथा भौतिक साधनों का सही अनुमान लगाना है और उन साधनों की खोज करना है, ताकि अधिकतम मितव्ययता और न्यूनतम खर्चे पर दक्ष परिणाम प्राप्त हो सकें। नियोजन, संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति का सबसे महत्वपूर्ण उपाय है। बिना उचित नियोजन के संस्था के लक्ष्यों को प्राप्त करने में कठिनाई आती है। हेनरी फेयोल जो कि गुलिक के समान शास्त्रीय विचारक हैं, नियोजन को प्रथम प्रशासनिक क्रिया मानते हैं।
2. **ऑर्गेनाइजिंग या संगठित करना-** कार्यपालिका का दूसरा कार्य है। प्रशासन की गतिविधियों का नियोजन कर लेने के बाद हमें प्रशासन की संरचना के बारे में ध्यान रखना पड़ता है। अर्थात् संगठन की स्थापना करनी पड़ती है, ताकि इन गतिविधियों को लागू किया जा सके तथा संस्था के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। संगठन की स्थापना करने के लिए सत्ता की व्यवस्था की जाती है। सत्ता ही संगठन का हृदय होती है। बिना संगठन के प्रशासन अपना कोई भी लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता। गुलिक के अनुसार ''सत्ता की औपचारिक संरचना को संगठन कहते हैं। जिसके माध्यम से कार्य की उपशाखाओं को प्रबन्धित, सुनिश्चित तथा समन्वित किया जाता है, ताकि निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके।''
3. **स्टाफिंग-** स्टाफिंग या स्टाफ रखने से आशय संगठन के गतिशील पहलू से है। स्टाफिंग, कार्मिक प्रशासन के सभी आयामों से जुड़ा होता है। कर्मचारियों की भर्ती करना, उनकी नियुक्ति, पदोन्नति, वेतन, अनुशासन, सेवानिवृत्ति आदि ऐसे कार्य हैं, जिनका कि प्रबन्धकों को ध्यान रखना पड़ता है। चूंकि किसी भी संगठन की कार्यकुशलता उसके कार्मिकों की कार्यकुशलता से जुड़ी होती है, इसलिए कार्मिक प्रशासन पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। अभिप्रेरणा जो कि कार्मिक प्रशासन का एक अति महत्वपूर्ण सिद्धान्त है, को शास्त्रीय विचारकों ने प्रायः नजर-अन्दाज ही किया है।
4. **डायरेक्टिंग या निर्देशन-** डायरेक्टिंग या निर्देशन का आशय, प्रबन्धकों द्वारा प्रशासन की विभिन्न गतिविधियों को करने के लिए अधीनस्थों को आदेश, निर्देश देने से है। यह मुख्य कार्यपालिका का एक महत्वपूर्ण कार्य है कि वह अपने अधीनस्थों को कार्य के दौरान निर्देशित करें और उन्हें आवश्यक आदेश दें, ताकि कार्यों को प्रभावी ढंग से पूर्ण किया जा सके तथा लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर बढ़ा जा सके।
5. **कॉओर्डिनेटिंग या समन्वय स्थापित करना-** कॉओर्डिनेटिंग या समन्वय स्थापित करना भी कार्यपालिका का एक महत्वपूर्ण कार्य है। समन्वय से जहाँ कार्यों में दोहराव व टकराव को रोका जा

सकता है वहीं कार्य को व्यवस्थित रूप से सम्पन्न करने के लिए समन्वय आवश्यक है। अधिकांश शास्त्रीय विचारों के समन्वय को एक महत्वपूर्ण गतिविधि के रूप में पहचाना है।

6. **रिपोर्टिंग या रिपोर्ट देना-** गुलिक के अनुसार कार्यपालिका का छठा कार्य है। संगठन में क्या गतिविधियां चल रही हैं? कौन किस प्रकार कार्य कर रहा है? संगठन में क्या समस्याएँ हैं? आदि समस्त बातों की जानकारी रिपोर्ट के माध्यम से मिलती है। रिपोर्ट के माध्यम से ही प्रबन्धक संगठन की स्थिति और समस्याओं को जान पाते हैं और उनका सुधारने का कार्य करते हैं।
7. **बजटिंग या बजट बनाना-** गुलिक के मत से बजट बनाना, कार्यपालिका का सातवां कार्य है। इसका सम्बन्ध सम्पूर्ण वित्तीय प्रशासन से है। प्रशासन और वित्त चूँकि शरीर और छाया की भाँति जुड़े हुए हैं, अतः वित्तीय प्रशासन पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। इसमें बजट बनाना, वित्तीय प्रक्रियाएँ, लेखा, अंकेक्षण आदि गतिविधियां सम्मिलित हैं।

इस प्रकार लूथर गुलिक ने एक शब्द 'पोस्टकार्ब' में कार्यपालिका की गतिविधियों को समेट लिया। यद्यपि इसमें कार्यपालिका के कई अन्य महत्वपूर्ण कार्य छूट गए हैं।

7.3.3 विभागीकरण के आधार

विभागों के गठन का आधार क्या हो? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए लूथर गुलिक ने विभागीकरण के चार आधारों पर उल्लेख किया है। ये चारों ही आधार 'पी' अक्षर से शुरू होते हैं। अतः इसे 'चार-पी' (four 'P') विचार कहा जाता है। ये आधार हैं-

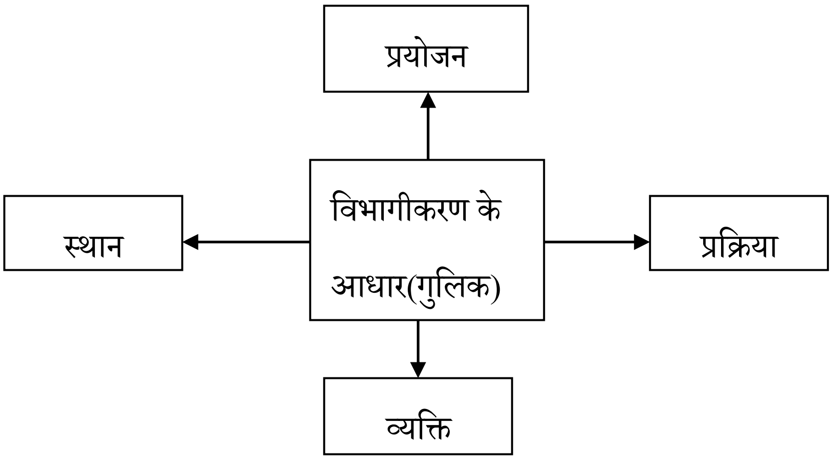

1. **प्रयोजन(Purpose)-** गुलिक के अनुसार विभागीकरण का प्रथम आधार है। यहाँ संगठन को सर्वप्रथम अपने मुख्य कार्यों और लक्ष्यों की पहचान करनी होती है और फिर प्रत्येक कार्य के लिए पृथक विभाग की स्थापना की जाती है। प्रयोजन के आधार पर विभागों का गठन सामान्य बात है। जैसे चिकित्सा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए चिकित्सालय, शिक्षा के लिए स्कूल और कॉलेज आदि होते हैं। इस प्रकार जब प्रयोजन का उद्देश्य के आधार पर विभाग का गठन किया जाता है तो गुलिक के मत में समन्वय की स्थापना आसानी से और कम खर्च पर हो जाती है। वे इसके कुछ नुकसान भी हैं।
2. **प्रक्रिया(Process)-** विभागीकरण का दूसरा आधार है। इस आधार पर एक समान प्रक्रिया का अनुसरण करने वाले व्यक्ति एक ही विभाग के अधीन रखे जाते हैं। चाहे उनके प्रयोजन भिन्न-भिन्न क्यों न हों। यहाँ प्रक्रिया से तात्पर्य कार्य करने की तकनीकी कौशल से है। इस आधार पर लाभ यह है कि इसमें

विशेषीकरण का लाभ लिया जा सकता है। परन्तु इसका एक प्रमुख दोष यह है कि इससे समन्वय स्थापना की प्रक्रिया में बांधा आती है।

3. **व्यक्ति(Person)-** व्यक्ति, विभागीकरण का तीसरा आधार है। इसका आशय यह है कि एक विशिष्ट विभाग व्यक्तियों के एक विशिष्ट समूह की सेवा करेगा। इस प्रकार एक ही समूह की सेवा करने तथा देखभाल करने से कार्यों में विशेषीकरण बढ़ता है और सेवा किए जाने वाले समूह को सुविधाएँ आसानी से मिल जाती हैं। परन्तु इसका नुकसान यह है कि चूंकि लोगों के समूह भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं, अतः सभी के लिए अलग-अलग विभागों की स्थापना करना महंगा कार्य होगा।
4. **स्थान(Place)-** स्थान को गुलिक विभागीयकरण का अन्तिम आधार बताते हैं। इसमें एक क्षेत्र-विशेष में किए जा रहे सभी कार्यों को जोड़ दिया जाता है और उनका एक विभाग बना दिया जाता है। इस प्रकार बनाए गए विभागों से उस क्षेत्र विशेष का विकास सम्भव हो जाता है, जिसके लिए कि विभाग की स्थापना की गयी है। पर यह आधार क्षेत्रीयता और संकीर्णता को बढ़ावा दे सकता है।

7.3.4 मुख्यालय-क्षेत्रीय कार्यालय सम्बन्ध

गुलिक ने मुख्यालय (हैडक्वाटर्स) और क्षेत्रीय कार्यालय (फील्ड ऑफिसेज) के बीच सम्बन्धों के तीन प्रतिमानों का उल्लेख किया है- सभी अंगुलियां (All Fingers), छोटी भुजाएँ-लम्बी अंगुलियां(Short Arms-Long Fingers), लम्बी भुजाएँ-छोटी अंगुलियां(Long Arms- Short Fingers)।

1. **सभी अंगुलियां प्रतिमान** से आशय है, मुख्यालय से आदेश सीधे क्षेत्रीय कार्यालयों और इकाईयों को भेजे जाते हैं। इस प्रतिमान में मुख्यालय और क्षेत्रीय कार्यालयों के बीच कोई मध्यस्थ नहीं होता है। यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार हमारे हथेली से सीधे ही अंगुलियां निकलती हैं।
2. **छोटी भुजाएँ तथा लम्बी अंगुलियां प्रतिमान** के अन्तर्गत क्षेत्रीय मुख्यालय प्रधान कार्यालय के अति निकट स्थित होते हैं। इतः इसे छोटी भुजाएँ कहा जाता है। इन छोटी भुजाओं से आदेश दूर स्थित क्षेत्रीय इकाइयों तक जाते हैं, जिन्हें लम्बी अंगुलियां कहा जाता है।
3. **लम्बी भुजाएँ तथा छोटी अंगुलियां प्रतिमान** में प्रधान कार्यालय और क्षेत्रीय कार्यालय के बीच काफी दूरी होती है, जिन्हें लम्बी भुजाएँ कहा जाता है। क्षेत्रीय कार्यालयों से क्षेत्रीय इकाइयों के बीच दूरी कम होती है। इन्हें छोटी अंगुलियां कहा जाता है।

इस प्रकार गुलिक ने मुख्यालय-क्षेत्रीय कार्यालयों के बीच का रोचक विवरण प्रस्तुत किया है।

7.4 लोक प्रशासन पर गुलिक के विचार

लूथर गुलिक लोक प्रशासन को परिभाषित करते हुए कहते हैं, ‘‘लोक प्रशासन प्रशासनिक विज्ञान का वह भाग है जिसका सम्बन्ध सरकार से रहता है और इस प्रकार प्रमुखतया इसका सम्बन्ध कार्यपालिका शाखा से है, जहाँ सरकार का कार्य किया जाता है। यद्यपि व्यवस्थापिका और न्यायपालिका से सम्बन्धित समस्याएँ भी स्पष्ट रूप से प्रशासकीय समस्याएँ ही हैं।’’

एक अन्य स्थान पर गुलिक लोक प्रशासन की परिभाषा इस प्रकार करते हैं, ‘‘सरकारी प्रणालियों, कार्यो और सेवाओं का विज्ञान तथा कला, विशेषतया प्रबन्धकीय पक्ष पर।’’

गुलिक लोक प्रशासन और निजी प्रशासन के बीच समस्याओं पर बल देते हैं और इन दोनों के बीच बढ़ती अन्तःक्रियाओं की वकालत करते हैं।

गुलिक का मत था कि चूँकि लोक प्रशासन अनिवार्यतः पर्यावरण में कार्य करता है, अतः लोक प्रशासन को बदलती हुई स्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करना चाहिए। गुलिक ने निम्न तीन सरकारी परिवर्तनों की भविष्यवाणी की है, पहला- अन्तर्राष्ट्रीय सरकारी क्रिया के विस्तार, आकार और आयतन में वृद्धि, दूसरा- घरेलू अर्थव्यवस्था के नियन्त्रण और विनियमन में राष्ट्र-राज्य का घुस जाना और तीसरा- महानगरीय सैटलमेन्ट के नए प्रतिमान का विकास, जिसे 'मेगापोलीज' कहते हैं।

गुलिक को केवल सिद्धान्तवादी या लोक प्रशासन का दार्शनिक ही नहीं माना जाना चाहिए। उसकी लोक प्रशासन के सुधार में भी रूचि थी और प्रशासनिक सुधारक के रूप में गुलिक ने निम्न सिद्धान्त विकसित किए-

1. सम्बद्ध गतिविधियों को एक इकाई के रूप में प्रशासित किया जाए।
2. सभी एजेन्सियों को कुछ विभागों में संचित कर दिया जाना चाहिए।
3. हर संगठनात्मक इकाई को अपनी योग्यता और तकनीकी ज्ञान सिद्ध कर चुके एक ही अधिकारी के अधीन कर दिया जाना चाहिए।
4. प्राधिकार को उत्तरदायित्व से जोड़ा जाना चाहिए।
5. हर विभागाध्यक्ष के पास नियमित मूल्यांकन से लिए खुद का स्टाफ होना चाहिए।
6. इस प्रकार के कार्यो को करने की जिम्मेदारी किसी विशिष्ट कार्यकर्ता को सौंपी जानी चाहिए।
7. निर्वाचित पदाधिकारियों की संख्या कम की जानी चाहिए।
8. प्रशासनिक कार्यों के लिए मण्डल और आयोगों का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।
9. मुख्य कार्यकारी को यह शक्ति होनी चाहिए कि वह विभागाध्यक्षों को नियुक्त कर सके, उन्हें हटा सके तथा उनके कार्य को निर्देशित कर सके।
10. मुख्य कार्यकारी के पास शोध स्टाफ होना चाहिए, जो विभागीय कार्यों पर प्रतिवेदन दे सके तथा उन्नत विधियां सुझा सके।

उपर्युक्त सुधारों का समबन्ध अमेरीकी प्रशासन में सुधार से है।

गुलिक ने द्वितीय विश्वयुद्ध के अपने प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर यह स्पष्ट किया कि नीति और प्रशासन के बीच कोई स्पष्ट रेखा नहीं खींची जा सकती। उनके मत में युद्धकाल का लोक प्रशासन शान्तिकाल के लोक प्रशासन से भिन्न होता है।

गुलिक कहते हैं कि जब सन् 1937 में उनका लेख 'पेपर्स ऑन दी साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' प्रकाशित हुआ था, उसके बाद बहुत कुछ ऐसा घटा जिसने लोक प्रशासन को काफी प्रभावित किया। गुलिक लोक प्रशासन में मानवीय-घटक को अत्यधिक महत्व देते हैं, क्योंकि सरकारें मानवों द्वारा ही उनके लिए ही बनाई जाती हैं। गुलिक के मत में राज्य का मुख्य कार्य मानवीय कल्याण होना चाहिए ना कि युद्ध। साथ ही गुलिक लोक प्रशासन में 'समय घटक' के महत्व को पहचानते हैं। ''पब्लिक एडमिनिस्ट्रेटिव रिब्यू'' नामक पत्रिका में 1987 में छपे अपने लेख ''समय और लोक प्रशासन'' में गुलिक ने समय के पांच भिन्न-भिन्न आयाम बताए हैं-

समय →
- → इनपुट के रूप में
- → आउटपुट के रूप में
- → घटनाओं के प्रवाह के रूप में
- → दो और अधिक महत्वपूर्ण घटनाओं/प्रक्रियाओं के बीच अन्तर के रूप में
- → प्रबन्ध नीति के रूप में

उनका मत है कि समय, लोक-प्रबन्धन की एक केन्द्रीय रणनीति और नैतिक चिन्ता होनी चाहिए।

अपने युद्धकालीन अनुभवों के आधार पर गुलिक ने लोक प्रशासन के लिए निम्न 15 सबक (पाठ) तैयार किए हैं-

1. अमेरिकी सरकारी तन्त्र, युद्ध के प्रशासन के लिए पूर्णतया पर्याप्त है।
2. प्रयोजनों का एक स्पष्ट विवरण जिसे सार्वभौमिक रूप से समझा जा सके, प्रभावशाली प्रशासन की असाधारण गारण्टी है।
3. प्रयोजन से कार्यक्रम का अनुवाद प्रशासन का एक जटिल तत्व है।
4. समन्वय प्रभावी क्रिया का अपरिहार्य गतिशील प्रनियम है।
5. प्रशासनिक व्यवहारों का नियन्त्रण होना चाहिए। उसकी अनेक तकनीकें हो सकती हैं।
6. युद्ध ने यह स्पष्ट कर दिया है कि नियोजन प्रबन्ध का आवश्यक और सतत् आयाम है।
7. प्रशासनिक नियन्त्रण और तकनीकी नियन्त्रण आवश्यक हैं।
8. व्यापक कार्यों वाले संगठन अधिक प्रभावी होते हैं।
9. नियन्त्रण के क्षेत्र को आवश्यकता से अधिक प्रभावी बनाया जाये।
10. राष्ट्रीय आपत्तियों में क्षमतावान कार्मिक अपरिहार्य हैं तथा रचनात्मक प्रशासनिक श्रेष्ठता अमूल्य है।
11. युद्ध ने लोक प्रशासन में समय-तथ्य के महत्व को स्पष्ट किया है।
12. लोकमत का समर्थन अच्छे प्रशासन के लिए आवश्यक है।
13. संगठित हित समूहों के सदस्य परामर्शदाता और सेल्समैन के रूप में सरकारी कार्यक्रमों के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं, अपेक्षाकृत प्रशासन के नियमित सदस्यों के।
14. प्रशासन में सत्य प्रभावी क्रिया प्रयोजन की एकता और स्पष्टता से आती है।
15. अन्तर्राष्ट्रीय प्रशासन ने कोई नई समस्याएं पैदा नहीं की हैं।

प्रशासन के विज्ञान में विश्वास रखते हुए गुलिक ने लोक प्रशासन को भावी मांगों के अनुरूप क्षमतावान बनाने के लिए निम्न पांच सूत्री कार्यक्रम बताये हैं-

- क्रिया के क्षेत्र के रूप में लोक प्रशासन को बदलती हुई मानवीय आवश्यकताओं के प्रति अनुकूलित होना चाहिए, विशेषतः अन्तर्राष्ट्रीय, आर्थिक और महानगरीय क्षेत्रों में।
- विश्लेषण और समझ के रूप में या यूँ कहें अध्ययन अनुशासन के रूप में लोक प्रशासन को व्यापार के अध्ययन और अन्य प्रशासनों के अध्ययनों से सम्बन्धित होना चाहिए।
- लोक प्रशासन को कार्मिक समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।
- लोक प्रशासन को 'आटोमेशन' (कम्प्यूटर) के अवसरों को स्वीकार कर आगे बढ़ना चाहिए।
- लोक प्रशासन को अपने सिद्धान्तों पर पुनर्विचार करना चाहिए और नया सूत्रीकरण करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न-

1. लूथर गुलिक का जन्म कहाँ हुआ?
2. पोस्टकार्ब विचार क्या है?
3. चार 'पी' (Four 'P')से क्या तात्पार्य है?
4. लूथर गुलिक के विचार, लोक प्रशासन के महत्व को संकुचित विचारधारा में क्यों सम्मलित करते हैं?

7.5 सारांश

लोक प्रशासन के एक प्रमुख शास्त्रीय विचारक के रूप में लूथर एच0 गुलिक को सदैव याद किया जाएगा। सन् 1937 में लिंडल एफ0 उर्विक के साथ मिलकर उन्होंने ''पेपर्स ऑन दी साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन'' का सम्पादन किया जो कि लोक प्रशासन के विकास के मार्ग में एक मील का पत्थर साबित हुआ।
गुलिक औपचारिक संगठन विचारधारा के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने संगठन के औपचारिक ढांचे का विशद् अध्ययन किया तथा संगठन के दस सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। उनके संगठन के दस सिद्धान्त इस प्रकार हैं- कार्य विभाजन या विशेषीकरण, विभागीय संगठनों के आधार, पदसोपान द्वारा समन्वय, सचेतन समन्वय, समितियों द्वारा समन्वय, विकेन्द्रीकरण, आदेश की एकता, स्टाफ तथा सूत्र, प्रत्यायोजन एवं नियन्त्रण का क्षेत्र।
'पोस्टकार्ब' के विचार से प्रशासन का हर विद्यार्थी परिचित है। गुलिक ने बड़े ही सुन्दर तरीके से प्रशासन के कार्यों को 'पोस्टकार्ब' में समेटा। 'पोस्टकार्ब' के अक्षरों में से प्रत्येक प्रशासन के एक निश्चित कार्य की ओर इशारा करता है। ये कार्य हैं- प्लानिंग, ऑर्गेनाइजिंग, स्टाफिंग, डायरेक्टिंग, कोऑर्डिनेटिंग, रिपोर्टिंग तथा बजटिंग।
गुलिक विभागीयकरण के चार आधारों की पहचान करते हैं। प्रथम- प्रयोजन या उद्देश्य, दूसरा- प्रक्रिया, तीसरा- व्यक्ति तथा चौथा- क्षेत्र। इसी प्रकार गुलिक प्रधान कार्यालय और क्षेत्रीय कार्यालयों के सम्बन्धों की भी विवेचना करते हैं। इसके लिए उन्होंने तीन प्रकार के सम्बन्धों की पहचान की- सभी अंगुलियां, छोटी भुजाएँ और लम्बी अंगुलियां एवं लम्बी भुजाएँ और छोटी अंुगुलियां।
अपने परवर्ती लेखन में गुलिक लोक प्रशासन पर दूसरे दृष्टिकोण से विचार करते हैं। वे लोक प्रशासन के व्यवहार का अध्ययन करते हैं तथा इसमें सुधार हेतु सुझाव भी देते हैं। गुलिक लोक प्रशासन में समय कारक और मानवीय कारकों पर सर्वाधिक बल देते हैं। वे सरकार को मानवीय कल्याण का कार्य करने की वकालत करते हैं। नि:संदेह गुलिक का प्रशासन को योगदान सदैव याद किया जाता रहेगा।

7.6 शब्दावली

औपचारिक संगठन- विधिवत संगठन, कार्यपालिका- प्रशासक या व्यवस्थापक, बजट- आय-व्यय का लेखा जोखा

7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. इस प्रश्न का उत्तर गुलिक के जीवन परिचय का अध्ययन करने से मालूम हो जायेगा।
2. पोस्टकार्ब विचार के माध्यम से लूथर गुलिक ने कार्यपालिका के कार्यों का वर्णन किया है। विस्तृत जानकारी हेतु लेख का ध्यान पूर्वक अध्ययन करें।
3. विभागों के गठन किस आधार पर किये जाते हैं। उसी को 'चार पी' द्वारा बताया गया है।
4. लोक प्रशासन के महत्व को दो रूपों में देखा जाता है। एक संकुचित तथा द्वितीय समग्र कार्य प्रणाली के रूप में शेष प्रश्न का उत्तर इकाई पढ़ने के विदित होगा।

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. लोक प्रशासन- बी0 एल0 फाड़िया।
2. प्रशासनिक एवम प्रबन्ध चिन्तक- एस0 एल0 गोयल।
3. लोक प्रशासन सिद्धान्त एवं व्यवहार- एम0 पी0 शर्मा एवं बी0 एल0 सड़ाना।

4. द गैलेक्सी आफ एडमिनिस्ट्रेटिव थिंकर्स- पी0 वी0 राठौर।
5. लोक प्रशासन के नये आयाम- मोहित भट्टाचार्या।
6. प्रमुख प्रशासनिक विचारक- नरेन्द्र कुमार थोरी।
7. प्रशासनिक विचारक- श्री राम माहेश्वरी।

7.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. प्रशासनिक विचारक, डॉ0 राकेश कुमार, प्रकाशन- लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
2. प्रमुख राजनीतिक विचारक, नरेन्द्र कुमार थोरी, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स।

7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. लूथर गुलिक के संगठन के सिद्धान्त भी विवेचना कीजिए।
2. लूथर गुलिक द्वारा प्रतिपादित कार्यपालिका के कौन-कौन से कार्य हैं? इनका विस्तार से वर्णन कीजिए।

इकाई- 8 लिण्डल एफ0 उर्विक

इकाई की संरचना

8.0 प्रस्तावना
8.1 उद्देश्य
8.2 लिण्डल एफ0 उर्विक- एक परिचय
8.3 उर्विक के संगठन के सिद्धान्त
8.3.1 उद्देश्यों का सिद्धान्त
8.3.2 समानता का सिद्धान्त
8.3.3 उत्तरदायित्व का सिद्धान्त
8.3.4 सोपान सिद्धान्त
8.3.5 नियंत्रण का क्षेत्र
8.3.6 विशेषीकरण का सिद्धान्त
8.3.7 समन्वय का सिद्धान्त
8.3.8 परिभाषा का सिद्धान्त
8.4 उर्विक का 'जैड' सिद्धान्त
8.5 उर्विक के अन्य विचार
8.6 लोक प्रशासन और निजी प्रशासन में समानता
8.7 उर्विक की आलोचना
8.8 उर्विक का मूल्यांकन
8.9 सारांश
8.10 शब्दावली
8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
8.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
8.14 निबन्धात्मक प्रश्न

8.0 प्रस्तावना

प्रशासन एवं प्रबन्ध की शास्त्रीय विचारधारा के अग्रणी पुरोधा लिण्डल एफ0 उर्विक का नाम महान चिन्तकों एवं लेखकों की श्रेणी में आता है। सैन्य पृष्ठभूमि पर आधारित होने के कारण उर्विक का चिन्तन स्वाभाविक रूप से अनुशासन तथा नियमों की सुव्यवस्थित संरचना को प्रशासन का केन्द्र बिन्दु मानता है। प्रशासन के यांत्रिक दृष्टिकोण के साथ-साथ उर्विक इसके व्यवहारवादी स्वरूप को भी विश्लेषित करने का प्रयास करते हुए कहते हैं, ''सामाजिक जीवन में रीति-रिवाज स्थायित्व बनाए रखने का कार्य करते हैं। संस्थाओं तथा सोचने की आदतों के क्रम में मानव मस्तिष्क परिवर्तन को बहुत धीरे-धीरे स्वीकारता है। यही कारण है कि संगठनात्मक स्तर पर भी परिवर्तन, व्यवहार एवं सुधार इत्यादि से सम्बन्धित मुद्दे चिन्ता का विषय बने रहते है।'' उर्विक 'वैज्ञानिक प्रबन्ध विचारधारा' के प्रबल समर्थक रहे हैं।

प्रशासन एवं प्रबन्ध के क्षेत्र में इतिहासकार के उपनाम से प्रसिद्ध उर्विक के बारे में लिलियन गिलब्रेथ लिखती है "जिस प्रकार शैले कवियों के कवि थे, मुझे उसी तरह उर्विक, सलाहकारों के सलाहकार दिखाई देते हैं।"
एक सैन्य अधिकारी से लेकर प्रबन्ध परामर्शदाता के रूप में उर्विक का चिन्तन सुसंगत विचारों से परिपूर्ण दिखाई देता है।

8.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- उर्विक के प्रशासनिक विचारों का जान पायेंगे।
- उर्विक के संगठन के महत्वपूर्ण विचार से अवगत होंगे।
- प्रशासनिक विचारों के क्षेत्र में उर्विक के योगदान को समझ पायेंगे।

8.2 लिण्डल एफ0 उर्विक- एक परिचय

उर्विक का जन्म सन् 1891 में ब्रिटेन में हुआ। उनकी पढ़ाई 'ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय' में हुई। यहीं से उसने इतिहास में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। उर्विक 'न्यू साउथ वेल्स विश्वविद्यालय' में प्रोफेसर भी रहे। उर्विक ने ब्रिटेन और यूरोप के कई प्रबन्ध संस्थाओं में कार्य किया। 1983 में उर्विक की मृत्यु हो गई।
उर्विक ने कई पुस्तकें लिखी और बहुत से लेख प्रकाशित करवाये। 1937 में उन्होंने लूथर गुलिक के साथ मिलकर 'पेपर्स ऑन दि साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' का सम्पादन किया। उर्विक की महत्वपूर्ण रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1. Dynamic Administration (Co.ed.)
2. Freedom and Coordination (ed.)
3. Papers on the Science of Administration (1937) [Co.ed.]
4. The Meaning of Rationalization (1929)
5. Committees on Organization
6. Management o Tomorrow
7. The Elements of Administration (1943)
8. The Making of Scientific Management (1945-48 [III Vol.]
9. The Theory of Organization (1952)
10. The Patterns of Management
11. The Golden Book of Management
12. The Patterns of Management and Leadership in the XX Century Organizations

'कमीटीज ऑन ऑर्गेनाइजेशन' पुस्तक में उर्विक ने समितियों पर मौलिक विचार प्रकट किए और संचार के क्षेत्र में अग्रणी योगदान दिया। 'द मीनिंग ऑफ रैशलाइजेशन' पुस्तक में उर्विक ने यह दर्शाने की कोशिश की है कि क्यों ब्रिटेन अमरीकी वैज्ञानिक प्रबन्ध आन्दोलन को स्वीकारने में सतर्कता बरत रहा है। 'द मेकिंग ऑफ साइन्टिफिक मैनेजमेन्ट' पुस्तक जो तीन वोल्यूमों (भाग) में प्रकाशित कराई गई थी, में उन्होंने सामाजिक सम्बन्धों पर प्रौद्योगिकी के प्रभावों का विश्लेषण किया है। 'द एलीमेन्ट्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' जो प्रथम बार 1943 में प्रकाशित हुई थी, उर्विक की सबसे महत्वपूर्ण कृति मानी जाती है। सन् 1956 में उर्विक ने नई दिल्ली में स्थित 'भारतीय लोक प्रशासन संस्थान' में दिए एक व्याख्यान में उन्होंने शासन में प्रबन्ध के महत्व पर जोर दिया।

एक शास्त्रीय विचारक के रूप में उर्विक का योगदान लोक प्रशासन में सदैव याद किया जाएगा। गुलिक के साथ मिलकर उनकी सम्पादित पुस्तक 'पेपर्स ऑन दि साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' लोक प्रशासन के विकास में मील का पत्थर साबित हुई।

8.3 उर्विक के संगठन के सिद्धान्त

शास्त्रीय विचारकों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान संगठन के सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। लूथर गुलिक ने जहाँ संगठन के दस सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, वहीं उर्विक भी संगठन के कतिपय सिद्धान्तों की पहचान करते हैं। संगठन को परिभाषित करते हुए उर्विक कहते हैं कि संगठन किसी प्रयोजन (या योजना) के लिए आवश्यक निर्धारक गतिविधियां हैं और उनको लोगों को दिए जाने के लिए समूहों में व्यवस्थित करना है। उर्विक संगठन की आकृति (Design) को काफी महत्व देते हैं और कहते हैं कि आकृति के अभाव में सगठन की स्थापना करना अतार्किक, क्रूर, व्यर्थ और अप्रभावी है।

उर्विक संगठन के कतिपय सिद्धान्तों का उल्लेख करते हैं। पहले उन्होंने संगठन के निम्न सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया-

8.3.1 उद्देश्यों का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का मुख्य जोर उद्देश्यों पर है। इसके अनुसार संगठन और इसकी प्रत्येक इकाई के उद्देश्यों में स्पष्टता और निश्चितता होनी चाहिए। बिना उद्देश्यों के संगठन कार्य नहीं कर सकता। संगठन के उद्देश्य जितने स्पष्ट होंगे उन्हें प्राप्त करना उतना ही सुगम होगा।

8.3.2 समानता का सिद्धान्त

समानता के सिद्धान्त से आशय, प्राधिकार और उत्तरदायित्व के बीच समानता है। संगठन के प्रत्येक पद के लिए जहाँ प्राधिकार की व्यवस्था की जाती है, वहीं इसके लिए समान उत्तरदायित्वों की व्यवस्था भी होनी चाहिए। बिना उत्तरदायित्व के प्राधिकारों का दुरूपयोग होने की सम्भावना रहती है और बिना प्राधिकार के उत्तरदायित्वों का निभाना मुश्किल होता है। अतः दोनों में समानता होनी चाहिए।

8.3.3 उत्तरदायित्व का सिद्धान्त

उत्तरदायित्व के सिद्धान्त से आशय उच्च अधिकारियों का अपने अधीनस्थों के प्रति उत्तरदायित्व निश्चित होना चाहिए। संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उच्चाधिकारियों का यह उत्तरदायित्व स्पष्ट व निश्चित होना आवश्यक है।

8.3.4 सोपान सिद्धान्त

सोपान सिद्धान्त से आशय संगठन के पदसोपानात्मक सिद्धान्त है, जिसमें उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थों पर नियंत्रण रखते हैं। सोपान का सिद्धान्त संगठन में एकीकरण की स्थापना में सहायक होता है। उर्विक कहते हैं कि "प्रत्येक संगठन में पदसोपान वैसे ही आवश्यक है जैसे हर घर में निकासी व्यवस्था होती है। किन्तु इस कड़ी को संचार का एकमात्र साधन मानना वैसे ही अनावश्यक है जैसे कि घर की निकास व्यवस्था में समय बिताना।"

8.3.5 नियंत्रण का क्षेत्र

नियंत्रण का क्षेत्र सिद्धान्त का तात्पर्य है कि प्रशासनिक संगठन में कोई उच्चाधिकारी अपने अधीन कार्यरत कितने कार्मिकों के कार्यों का पर्यवेक्षण प्रभावशाली रूप से कर सकता है। एक अधिकारी के अधीन कार्यरत कर्मचारियों की संख्या कितनी होनी चाहिए कि वह प्रभावशाली ढंग से कार्यों पर नियंत्रण और पर्यवेक्षण कर सके? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उर्विक कहते हैं कि एक व्यक्ति अपने अधीन कार्यरत पांच या छ: अधीनस्थों के कार्यों का ही प्रभावी तरीके से पर्यवेक्षण कर सकता है। उर्विक का मानना है कि किसी अधिकारी के अधीन कार्यरत व्यक्तियों की संख्या में जितनी बढ़ोत्तरी होती है, उससे कहीं अधिक बढ़ोत्तरी अधीनस्थ व्यक्तियों के मध्य परस्पर सम्बन्धों में हो जाती है। उनके अनुसार, "यदि किसी अधिकारी के अधीन पहले से कार्यरत पांच अधीनस्थों में यदि एक और (छठा) जुड़ जाए तो कार्य में केवल 23 प्रतिशत अधिक सहायता मिलती है, जबकि निरीक्षण या नियंत्रण के क्षेत्र में 100 प्रतिशत अर्थात दुगुनी से भी अधिक वृद्धि हो जाएगी।'' उर्विक की मान्यता रही है कि नियंत्रण का छोटा क्षेत्र सामाजिक एवं प्रशासनिक दूरियों में कमी लाता है। नियंत्रण का बड़ा क्षेत्र समन्वय तथा नियंत्रण व्यवस्था को प्रभावित करता है।

8.3.6 विशेषीकरण का सिद्धान्त

विशेषीकरण के सिद्धान्त का सम्बन्ध कार्य-विभाजन से है। इसका आशय होता है कि एक व्यक्ति के कार्य को एक विशेष कार्य तक ही सीमित रखना चाहिए। जब एक व्यक्ति विशिष्ट कार्यों को सम्पन्न करता है तो वह उन कार्यों को करने में विशेष दक्षता हासिल कर लेता है और इस तरह प्रशासन को विशेषीकरण का लाभ मिल जाता है।

8.3.7 समन्वय का सिद्धान्त

समन्वय, संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। सभी शास्त्रीय विचारकों ने इसे संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना है। समन्वय का आशय संगठन के विभिन्न अंगों, भागों, इकाइयों के कार्यों व गतिविधियों में तारतम्य या सामंजस्य की स्थापना करना है। समन्वय द्वारा जहाँ कार्यों में दोहराव व टकराव को समाप्त किया जा सकता है, वहीं यह सहयोगी भावना की स्थापना में भी सहायक होता है।

8.3.8 परिभाषा का सिद्धान्त

परिभाषा के सिद्धान्त से आशय यह है कि प्रत्येक पद के कर्तव्यों की स्पष्ट परिभाषा होनी चाहिए। कौन क्या-क्या कार्य करेगा, इसकी स्पष्ट परिभाषा होनी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक कार्य की स्पष्ट परिभाषा होने से किसी भी प्रकार की अनिश्चितता नहीं रहेगी और प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्यों को स्पष्ट समझ सकेगा।

इस प्रकार उर्विक संगठन के आठ सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं और प्रबन्ध के लिए इन सिद्धान्तों के महत्व का प्रतिपादन करते है। बाद में उर्विक ने फेयोल के चौदह सिद्धान्तों, मूनी व रैली के चार सिद्धान्तों, टेलर, फोलेट, ग्रेक्यूनास आदि के सिद्धान्तों को मिलाकर संगठन के 29 सिद्वान्तों का प्रतिपादन अपनी पुस्तक ''Elements of Administration (1943)'' में किया। ये 29 सिद्धान्त निम्न हैं- 1. अन्वेषण, 2. पूर्वानुमान, 3. नियोजन, 4. उपयुक्तता, 5. संगठन, 6. समन्वय, 7. व्यवस्था, 8. आदेश, 9. नियंत्रण, 10. समन्वयात्मक सिद्धान्त, 11. प्राधिकार, 12. स्कैलर प्रक्रिया, 13. कार्यों को देना, 14. नेतृत्व, 15. प्रत्यायोजन, 16. कार्यात्मक परिभाषा, 17. निर्धारक, 18. अनुप्रयात्मक, 19. व्याख्यात्मक, 20. सामान्य रूचि, 21. केन्द्रीयकरण, 22. स्टाफिंग, 23. जोश, 24. चयन तथा पदस्थापन, 25. पुरस्कार और शास्तियां, 26. पहल, 27.समानता, 28. अनुशासन और 29. स्थायित्व।

इस प्रकार उर्विक ने संगठन के सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की है। शास्त्रीय सिद्धान्तकार के रूप में संगठन की 'यांत्रिक विचारधारा' के समर्थक उर्विक का यह लोक-प्रशासन को महत्वपूर्ण योगदान है। उल्लेखनीय है कि ये सिद्धान्त गुलिक के साथ मिलकर गढ़े शब्द 'पोस्डकार्ब' का ही विस्तार हैं।

8.4 उर्विक का 'जैड' सिद्धान्त

उर्विक द्वारा प्रतिपादित यह सिद्धान्त प्रमुख रूप से व्यवसाय कार्यों से जुड़े संगठनों के सन्दर्भ में है। अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में 'आउची' तथा 'जेगर' का ''जैड सिद्धान्त'' उर्विक के सिद्धान्त से भिन्न है। उर्विक का जैड सिद्धान्त इस मान्यता पर टिका है कि 'प्रबन्ध अपने आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का उपयोग करता है।' कतिपय विद्वानों का मानना है कि उर्विक के 'आर्थिक उद्देश्य' सम्बन्धी इसी विचार पर मैकग्रिगोर की 'एक्स' और 'वाई' विचारधारा विकसित हुई है।

उर्विक ने अपने जैड सिद्धान्त विचारधारा में यह स्पष्ट किया है कि "किसी भी संगठन में प्रबन्ध का प्राथमिक उद्देश्य यह है कि वह उपभोक्ताओं को उनके द्वारा चाही गई वस्तु या सेवा उस कीमत पर दे, जिस कीमत को उपभोक्ता स्वेच्छा से दे सकते हैं। इसी क्रम में प्रबन्ध उत्पादन तथा वितरण का कार्य करता है तथा यह प्रयास करता है कि इस प्राथमिक उद्देश्य की प्राप्ति हो जाए।'' इसी क्रम में उर्विक आगे लिखते हैं "मुद्दा यह है कि आज व्यक्ति एक उपभोक्ता के रूप में उत्पादक एवं वितरणकर्ता मनुष्य से दूर हो गया है। इसका मुख्य कारण उपभोक्ता तथा उत्पादक एवं वितरक के मध्य अपूर्ण या अस्पष्ट संचार का होना है।''

इस अपूर्ण संचार का वास्तविक कारण यह है कि व्यक्तियों को 'सामान्य उद्देश्य' का ज्ञान नहीं है। उत्पादक एवं वितरक के रूप में व्यक्ति (संगठन मनुष्य या प्रबन्धक) अपने को उस व्यक्ति से भिन्न या पृथक् मानता है जो उपभोक्ता हैं। उर्विक कहते हैं, "व्यक्ति कहते हैं कि ग्राहक सदैव सही होता है, किन्तु वे इस बात को प्रायः भुला देते हैं कि वे ही 'उपभोक्ता' है।'' उर्विक के अनुसार, "यदि उपभोक्ता तथा उत्पादक एवं वितरक के मध्य व्याप्त खाई को पाट दिया जाए तो व्यक्ति अभिप्रेरित होंगे तथा वे पूर्ण मनोयोग से कार्य करेंगे।'' प्रबन्ध द्वारा इस सम्बन्ध में उठाया गया कोई भी सकारात्मक कदम 'सामान्य उद्देश्यों' के प्रति समझ उत्पन्न करेगा। इसी 'सामान्य उद्देश्य' की सही जानकारी होने पर प्रबन्ध, संगठन, कार्मिक (व्यक्ति) तथा उपभोक्ता की आवश्यकताऐं पूरी हो सकेंगी। उर्विक का यह स्पष्ट मत है कि व्यक्ति तकनीकी क्रांति के लाभों में भागीदार बनना चाहता है। किसी भी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए व्यक्ति प्रयास तो करता ही है। चाहे हमें ऊपरी तौर पर अलग-अलग व्यक्तियों के अलग-अलग उद्देश्य दिखाई दते हैं, किन्तु यथार्थ यह है कि किसी ना किसी बिन्दु पर हमारे कुछ उद्देश्य सामान्य भी होते हैं। सामान्य उद्देश्य को पहचान कर उसकी प्राप्ति हेतु सभी को प्रयास करने चाहिए।

लिण्डर एफ0 उर्विक के द्वारा औद्योगिक प्रबन्ध एवं प्रशासन के विविध पक्षों पर भरपूर लेखन किया गया है।

उर्विक ने अपनी एक कृति 'Committees on Organisation'(सन् 1930) में संगठनात्मक स्तर पर बनने वाली समितियों की रचना, कार्य-प्रणाली, इनके मध्य संचार तथा इनकी उपादेयता पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला है। उर्विक का स्पष्ट मानना रहा है कि संगठन में गठित की जाने वाली समितियां गैर-जिम्मेदाराना व्यवहार को प्रोत्साहित करती हैं, क्योंकि समितियों में 'सभी की जिम्मेदारी, किसी की जिम्मेदारी नहीं' नामक सिद्धान्त अभिभावी रहता है। उनके अनुसार समितियों की स्थापना गलतियों को छिपाने तथा उत्तरदायित्व से बचने के लिए की जाती है। उर्विक के शब्दों में "यह समितियां ऐसे निगम की तरह होती हैं, जिसमें ना तो श्राप देने के लिए कोई आत्मा होती है और ना ही लात मारने के लिए शरीर।''

8.5 उर्विक के अन्य प्रशासनिक विचार

लिण्डल एफ0 उर्विक लोक प्रशासन तथा प्रबन्ध के क्षेत्र में उस दौर का प्रतिनिधित्व करते हैं, जब संगठन की शास्त्रीय या संरचनात्मक या औपचारिक संगठन या कुशलता विचारधारा अपने चरम पर थी। गुलिक एवं उर्विक द्वारा रचित पुस्तक 'Papers on the Science of Administration (वर्ष 1937)' के समय (सन् 1930 से 50) यह विचारधारा पर्याप्त लोकप्रिय थी। लोक प्रशासन के साहित्य में अधिसंख्य विद्वान अमेरिका का प्रतिनिधित्व करते हैं, किन्तु एक ब्रिटिश चिन्तक एवं लेखक के रूप में उर्विक का योगदान किसी भी दृष्टि से कम करके नहीं आंका जा सकता है।

उर्विक का नाम उन विद्वानों में अग्रणी है, जो प्रशासन को विज्ञान मानते हैं। तथा इस सम्बन्ध में कतिपय सुनिश्चित सिद्धान्तों की स्थापना पर बल देते हैं। सन् 1942 में 'Institute of Industrial Administration' लन्दन में 'प्रशासन के सिद्धान्तों' पर दिए गए उर्विक के पांच व्याख्यान जो कि सन् 1943 में 'The Elements of Administration' नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए हैं, में उर्विक ने प्रशासन की प्रकृति को वैज्ञानिक करार दिया है। साथ ही वे प्रशासन के संचालन हेतु कौशल एवं कला पक्ष पर भी बल देते हैं। उर्विक यह भी मानते हैं कि प्रशासनिक कार्यों में सफलता के लिए सीमित ज्ञान पर्याप्त नहीं है, बल्कि निरन्तर व्यवहार के माध्यम से ही प्रशासनिक कौशल विकसित होता है। उनके अनुसार ''प्रशासनिक कौशल ना तो खरीदा जा सकता है और ना ही इसके 'शार्ट कट' रास्ते हैं। इसके लिए कठिन अध्ययन, गहन चिन्तन तथा बौद्धिक सिद्धान्तों के प्रशिक्षण (वास्तविक एवं कार्य समस्या पर आधारित) की कीमत चुकानी होती है।''

लोक प्रशासन को विज्ञान की तरह देखते हुए उर्विक ने तर्क दिया है कि ''जिस प्रकार किसी सेतु के निर्माण हेतु अभियांत्रिकी के कुछ निश्चित नियम होते हैं, उसी प्रकार संगठन के संचालन हेतु निश्चित सिद्धान्त होते हैं।'' इन संगठनात्मक सिद्धान्तों को सभी परम्परागत, व्यक्तिगत तथा राजनीतिक तथ्यों की प्राथमिकता की दृष्टि से ध्यान में रखना आवश्यक है, अन्यथा उस संगठन के लक्ष्यों या व्यक्तियों के परिश्रम का वांछित फल नहीं मिल सकेगा। प्रशासन के विज्ञान बनाने के लिए उर्विक ने निम्न तर्क प्रस्तुत किए हैं-

1. 'The Making of Scientific Management(1945-48) (3Volumes)' में उर्विक ने सामाजिक सम्बन्धों पर प्रौद्योगिकी के प्रभावों का अवलोकन प्रस्तुत किया है। उर्विक कहते हैं कि ''पाश्चात्य सभ्यता एक स्थापित सभ्यता के बजाय अनुकूलन योग्य सभ्यता बन गई है, लेकिन सबसे बड़ा परिवर्तन प्रौद्योगिकीय तरीकों में आया है। दुःखद पक्ष यह है कि वर्तमान प्रशासन (प्रबन्ध) ही प्रगति की राह में सबसे बड़ी बाँधा बना हुआ है।'' इसी पुस्तक में उर्विक ने अमेरिकी प्रशासनिक व्यवस्था एवं विकास की आलोचना भी की है।
2. उर्विक ने प्रबन्ध ज्ञान पिरामिड की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए इसके कलात्मक, मानवीय तथा अभियांत्रिक पक्षों पर प्रकाश डाला है तथा यह बताया है कि इसमें चार पक्ष मुख्य रूप से समाहित हैं, पहला- कार्य का विज्ञान, दूसरा- व्यक्ति एवं कार्य का समायोजन, तीसरा- कार्य का समूहीकरण तथा सहसम्बन्ध तथा चौथा- समूहों का निर्देशन एवं अभिप्रेरणा।
3. प्रशासनिक प्रबन्ध सिद्धान्त के प्रतिपादक उर्विक के अनुसार, ''इस सिद्धान्त में प्रशासन तथा प्रबन्ध को एकीकृत करते हुए चार तत्वों, यथा- विवेकशीलता (तार्किकता), कार्यकुशलता, कार्य विशिष्टिकरण तथा औपचारिक सम्बन्ध सम्मिलित किया जाता है।'' यह सिद्धान्त तथा इसके तत्व संगठन के उच्च स्तरों, कार्यरत कार्यपालक अधिकारियों के कार्य एवं व्यवहार से सम्बन्धित हैं। इसी क्रम में उर्विक ने नेतृत्व के

लिए स्वास्थ्य या शारीरिक क्षमता, समझदारी एवं मानसिक शक्ति, नैतिकता, समानता तथा प्रबन्धकीय योग्यताओं को आवश्यक बताया है।

4. संगठन में 'सूत्र' एवं 'स्टाफ' अवधारणा को अपनाने के क्रम में उर्विक ने स्पष्टता से एवं विस्तारपूर्वक लिखा है कि "यह अवधारणा हमने सैन्य प्रशासन से ग्रहण की है, जबकि इसे व्यवसाय प्रशासन एवं लोक प्रशासन में ज्यों का त्यों अपनाना कठिन है। सैन्य प्रशासन में सूत्र एवं स्टाफ की अवधारणा कम से कम चार स्थितियों, यथा- सूत्र, व्यक्तिगत स्टाफ, विशेष स्टाफ तथा सामान्य स्टाफ को स्पष्ट करती है। इसी के अनुरूप इन्हें कार्य, सत्ता तथा उत्तरदायित्व दिए जाते हैं।''
5. उर्विक ने अपनी प्रथम पुस्तक 'The Meaning of Rationalisation' (वर्ष 1929) में उस दौर में लोकप्रिय हो रही वैज्ञानिक प्रबन्ध की अमेरिकी विचारधारा तथा इस सम्बन्ध में ब्रिटेन द्वारा अपनायी गई सावधानियों का वर्णन भी किया है।

इसके अतिरिक्त उर्विक ने नौकरशाही संगठन के क्रम में लिखा है "यदि मानवीय सहयोग की व्यवस्थाऐं एक निश्चित आकार लेने के बाद विकसित होने लगती हैं, तो संगठन का नौकरशाही प्रारूप स्वतः ही अनिवार्य हो जाता है।'' उनकी दृष्टि में बहुत सारे कारणों तथा गुणों से युक्त नौकरशाही स्वयं को अपरिहार्य बना देती है। इसी प्रकार उर्विक द्वारा विगत सदी के तीसरे दशक में रॉवण्ट्री एण्ड कम्पनी में ओलिवर शेल्डन के साथ 'नीतिपरक आदर्शवाद' (Ethical Idealism) विषय पर किया गया कार्य, मानव-सम्बन्धों के हाथोर्न प्रयोगों से मिलता-जुलता माना जाता है, किन्तु यह प्रयोग पूर्ण सफल नहीं कहा जा सकता है।

8.6 लोक प्रशासन और निजी प्रशासन में समानता

इस प्रकार उर्विक यह भी मानते हैं कि लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन समान हैं, अर्थात् इनमें भेद करना ना तो आवश्यक है और ना ही सहज है। इस क्रम में उर्विक कहते हैं "जिस प्रकार सभी व्यक्तियों के लिए सभी विषय समान होते हैं, अर्थात् बैंक कार्मिकों के लिए जीव रसायन विज्ञान वैसा ही होता है जैसा अन्य के लिए है या राजनेताओं के लिए मनोरोग विज्ञान, सामान्य व्यक्तियों जैसा ही है; इसी प्रकार सभी प्रशासन सभी के लिए समान ही हैं।'' उर्विक मानते हैं कि एक सीमा तक लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन का अपनी-अपनी प्रकृति या लोकाचार या स्वभाव होता है तथा दोनों एक-दूसरे से सीखते हैं। प्रशासन और प्रबन्ध की भ्रान्ति के क्रम में भी उर्विक का यह मानना रहा है कि "यह दोनों शब्द अन्तर-परिवर्तनीय रहे हैं। 'प्रशासन' शब्द मुख्यतः लोक प्रशासन के सन्दर्भ में तथा 'प्रबन्ध' शब्द व्यवसाय प्रशासन के क्रम में अधिक प्रयुक्त हुआ है। हाँ यह सही है कि प्रशासन विशिष्ट एवं व्यापक गतिविधि है, जिसे समस्त प्रकार की क्रियाओं के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।'' उर्विक अपनी बात आगे बढ़ाते हुए लिखते हैं "प्रशासनिक संगठन अभी एक अछूता क्षेत्र है तथा इसे भली भाँति समझने के लिए कई अज्ञात कारणों का पता लगाना नितान्त आवश्यक है।''

8.7 उर्विक की आलोचना

लिण्डल एफ0 उर्विक की उनके लेखन या विचारों के लिए कभी भी व्यक्तिगत रूप से अधिक आलोचना नहीं हुई है, बल्कि उनकी आलोचना प्रशासन या संगठन के परम्परागत या शास्त्रीय दृष्टिकोण के समर्थक होने के नाते उसी सन्दर्भ में की गई है। इन आलोचकों में हरबर्ट साइमन तथा वाल्डो को अग्रणी माना जाता है। यह आलोचनाऐं इस प्रकार हैं-

1. साइमन के अनुसार, यांत्रिक दृष्टिकोण के कुछ मान्य सिद्धान्तों विशेषकर कार्य-विभाजन, आदेश की एकता, पदसोपान तथा नियंत्रण के क्षेत्र के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी बातें विद्यमान हैं। साइमन ने इन प्रशासनिक सिद्धान्तों को मात्र कहावतें या लोकोक्तियां या मुहावरे करार दिया है।
2. बहुत से विद्वानों ने उर्विक एवं अन्य विद्वानों द्वारा प्रतिपादित संगठनात्मक सिद्धान्तों को मात्र अनुभव दर्शन पर आधारित नियम बताया है, क्योंकि इन्हें विस्तृत परीक्षणों के परिणामों के आधार पर प्रतिपादित नहीं किया गया है।
3. उर्विक के सिद्धान्तों को भी आदर्शात्मक बताया जाता है, क्योंकि इनमें 'क्या होना चाहिए' पर बल है ना कि 'क्या है' पर। अतः ये सिद्धान्त व्यवहारवाद के विपरीत हैं।
4. संगठन के परम्परागत सिद्धान्तों की यह कहकर भी आलोचना की जाती है कि इनमें संरचना पर अधिक बल दिया गया है, संगठन को 'बन्द इकाई' माना गया है, आर्थिक प्रोत्साहनों पर जोर दिया गया है तथा व्यक्ति को मशीन की तरह विश्लेषित किया गया है।

इन आलोचनाओं के बावजूद भी सकारात्मक पक्ष यह है कि संगठन के अध्ययन के लिए आज भी परम्परागत उपागम तथा सिद्धान्त ही मूलाधार बने हुए हैं तथा उर्विक ने इन सिद्धान्तों को निरन्तरता प्रदान की है। ब्रिटेन में प्रबन्ध तथा प्रशासन के सिद्धान्तों को लोकप्रिय एवं मान्य बनाने में उर्विक का योगदान सर्वाधिक रहा है।

8.8 उर्विक का मूल्यांकन

उर्विक के सिद्धान्तों की आलोचना करते हुए आलोचक यह तर्क देते हैं कि उनके सिद्धान्त केवल अनुभव और दर्शन पर आधारित हैं। उनका कोई प्रयोगात्मक आधार नहीं है। साइमन जैसे विचारक लोक प्रशासन के सिद्धान्तों को 'कहावतें' कहकर उनकी खिल्ली उड़ाते हैं। उर्विक द्वारा संगठन के औपचारिक पहलुओं पर ज्यादा ध्यान देने और मानवीय पक्षों की अवहेलना करने का आरोप भी लगाया जाता है। साथ ही उर्विक का दृष्टिकोण 'यांत्रिक' या 'मैकनिस्टिक' होने के कारण आलोचनाओं का शिकार होता है। इन आलोचनाओं के बावजूद उर्विक के विचारों का लोक प्रशासन पर व्यापक प्रभाव है और लोक प्रशासन उनके योगदान के लिए सदैव ऋणी रहेगा।

अभ्यास प्रश्न-

1. उर्विक की पुस्तक का क्या नाम है? और इसका प्रकाशन कब हुआ?
2. यह किसने कहा, ''डिजाइन का अभाव संगठन को अतार्किक, निर्मम, अपव्ययी तथा अकार्यकुशल बनाता है।''
3. उर्विक के अनुसार एक निरीक्षक अपने अधीन कितने अधीनस्थों पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित कर सकता है?
4. उर्विक ने संगठन के कितने सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया?
5. उर्विक सम्बद्ध है, शास्त्रीय विचारधारा या मानव सम्बन्ध विचारधारा से।
6. उर्विक निम्न में से किस तर्क के समर्थक हैं? निजी व लोक प्रशासन एक-दूसरे के विरोधी हैं या लोक प्रशासन व निजी प्रशासन समान हैं।

8.9 सारांश

यह दुर्भाग्य की बात है कि लूथर गुलिक के साथ ही लिण्डल एफ0 उर्विक का नाम लिया जाता है, जबकि उर्विक के अपने विचार भी काफी महत्वपूर्ण एवं मौलिक है। उर्विक भी प्रशासन के शास्त्रीय विचारक माने जाते हैं। उर्विक

ने प्रशासन और प्रबन्ध पर अनेक पुस्तकें लिखी, जो प्रशासन व प्रबन्ध को उनकी अमूल्य धरोहर है। सन् 1943 में प्रकाशित 'दी एलीमेन्ट्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचनाओं में से एक है।
एक शास्त्रीय विचारक के रूप में उर्विक संगठन के कतिपय सिद्धान्तों की पहचान करते हैं। प्रारम्भ में वे संगठन के आठ सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं। पर बाद में यह संख्या बढ़कर 29 हो जाती है। उर्विक संगठन में सूत्र तथा स्टाफ पर भी विस्तार से विचार करते हैं। वे लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन को अलग-अलग बताने वाले विचारों की आलोचना करते हैं।

8.10 शब्दावली

पदसोपान- सीढ़ीनुमा आकार में पदों की व्यवस्था, जिसमें उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थों पर नियंत्रण रखते हैं।
विशेषीकरण- एक व्यक्ति को वही कार्य दिया जाना चाहिए जिसे करने की वह विशेष योग्यता रखता हो।
समन्वय- संगठन के विभिन्न विभागों के बीच सामजंस्य होना ताकि दोहराव या टकराव की स्थिति न हो।
प्रशासनिक कौशल- जो सिर्फ ज्ञान पर आधारित नहीं होता वरन् प्रशासन के लम्बे अनुभव, मेहनत और व्यवहार पर आधारित होता है।

8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. 'एलीमेन्ट्स ऑफ एडमिनिशसट्रेशन' 1943 में, **2.** उर्विक, **3.** 5-6, **4.** 29, **5.** शास्त्रीय विचारधारा, **6.** लोक प्रशासन व निजी प्रशासन समान है।

8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गुलिक एवं उर्विक, पेपर्स ऑन द साइन्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन, आई0पी0ए0, न्यूयार्क, 1937
2. श्री राम माहेश्वरी, एडमिनिस्ट्रेटिव थिंकर्स, मैकमिलन, 1998
3. लिण्डल उर्विक, द एलीमेन्ट्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन, पिटमैन, 1947
4. नरेन्द्र कुमार थोरी, प्रमुख प्रशासनिक विचारक, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर।
5. डॉ0 सुरेन्द्र कटारिया, प्रशासनिक चिन्तक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर।

8.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. नरेन्द्र कुमार थोरी, प्रमुख प्रशासनिक विचारक, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर।
2. डॉ0 सुरेन्द्र कटारिया, प्रशासनिक चिन्तक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर।

8.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उर्विक द्वारा प्रतिपादित संगठन के सिद्धान्त का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. उर्विक के प्रशासनिक विचारों का मूल्यांकन कीजिए।

इकाई- 9 मेरी पार्कर फोलेट

इकाई की संरचना

9.0 प्रस्तावना

9.1 उद्देश्य

9.2 मेरी पार्कर फोलेट- एक परिचय

9.3 फोलेट के प्रशासनिक विचार

    9.3.1 रचनात्मक संघर्ष

    9.3.2 संगठन में आदेश

    9.3.3 समन्वय

    9.3.4 नेतृत्व

9.4 फोलेट के अन्य विचार

9.5 फोलेट का योगदान

9.6 आलोचनात्मक मूल्यांकन

9.7 सारांश

9.8 शब्दावली

9.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

9.12 निबन्धात्मक प्रश्न

9.0 प्रस्तावना

प्रशासनिक चिन्तकों में मेरी पार्कर फोलेट का विशिष्ट स्थान है। उन्हें ''प्रबन्ध में भविष्यवक्ता'' की संज्ञा दी जाती है। उनके विचार 'समय से पहले' के विचार हैं। अर्थात नेतृत्व, एकीकरण, मेलजोल, समूह भावना तथा मानव-सम्बन्धों के क्रम में जो सिद्धान्त फोलेट ने 20वीं सदी के द्वितीय एवं तृतीय दशक में प्रस्तुत किए, उन्हें प्रबन्ध के क्षेत्र में पांचवे एवं छठे दशक में अपनाया गया। उर्विक एवं ब्रेच लिखते हैं कि 'फोलेट ने अपने विश्वासों को दर्शाने के लिए जीवन के हर क्षेत्र से उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जैसे- सरकार के कार्य, उद्योग, व्यापार, गृह-युद्ध, शान्ति, अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ आदि।' उनकी लेखनी व्यवहारिक बुद्धि, अन्तःप्रज्ञा की गहरी सोच, अविभागीयकृत सोच और लोकतांत्रिक गत्यात्मकता का भण्डार है। यह उल्लेखनीय है कि प्रशासन की शास्त्रीय विचारधारा और वैज्ञानिक प्रबन्ध विचारधारा, फोलेट के दर्शन से काफी प्रभावित थे। फोलेट का मुख्य कार्य 'सम्बन्धों के मनोविज्ञान' पर केन्द्रित रहा है। नेतृत्व, सत्ता, रचनात्मक संघर्ष या मनमुटाव, एकीकरण, समूह भावना, समन्वय, नियंत्रण, अभिप्रेरणा, संगठनों की नेटवर्किंग तथा मानव सम्बन्धों इत्यादि के सन्दर्भ में व्यापक सिद्धान्त प्रस्तुत करने वाली फोलेट के लिए डेनियल ए0 रेन ने कहा है कि ''ऐतिहासिक अनुक्रम में फोलेट वैज्ञानिक प्रबन्ध के दौर का प्रतिनिधित्व करती हैं, जबकि दार्शनिक दृष्टि से वे 'सामाजिक मानव' युग का प्रतिनिधित्व करती हैं।''

9.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- फोलेट के प्रशासनिक एवं प्रबन्धकीय विचारों को समझ पायेंगे।
- राजनीति, प्रशासन, मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र तथा समाजशास्त्र के क्रम में उनके विचारों से अवगत होंगे।
- समाज सेविका, दर्शनशास्त्री, प्रबन्ध विज्ञानी, समाजशास्त्री, संगठन की नव-शास्त्रीय विचारधारा की समर्थक तथा मानवतावादी चिन्तन के रूप में फोलेट के योगदान को समझ पायेंगे।

9.2 मेरी पार्कर फोलेट- एक परिचय

अमेरिका के बोस्टन शहर में 1868 में जन्मी फोलेट ने दर्शनशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, कानून एवं राजनीति विज्ञान में शिक्षा प्राप्त की। अपने भाषणों में दिन-प्रतिदिन के जीवन तथा समाज में विद्यमान छोटी-छोटी किन्तु व्यवहारिक बातों को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करने वाली फोलेट तत्कालीन अमेरिका के श्रेष्ठ वक्ताओं में एक मानी जाती थी। उनके प्रशासनिक एवं प्रबन्धकीय विचारों को आगे बढ़ाने तथा मानवता के कल्याण के लिए बोइस शहर में 'Mary Parker Fullet Foundation' स्थापित किया गया है।
मेरी पार्कर फौलेट की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1. The Speakers of the House of Representatives(1896)
2. The New States(1918)
3. Creative Experiences(1924)
4. Dynamic Administration: The Collected Papers of Marry Parker Follett (उर्विक व मेटकॉफ द्वारा सम्पादित)

9.3 फोलेट के प्रशासनिक विचार

मेरी पार्कर फोलेट का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान संघर्षों के रचनात्मक पहलुओं पर विचारों के रूप में माना गया है। यहाँ संघर्षों से तात्पर्य संगठन में उत्पन्न संघर्षों से हैं। संघर्ष की स्थिति व्यक्ति के जीवन में कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं है। आज हम संघर्ष के युग में जी रहे हैं। संगठन केवल व्यक्ति के जीवन तक ही सीमित नहीं है, अपितु संगठनों में भी संघर्ष व्याप्त है। संघर्ष एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्ति या इकाई किसी उद्देश्य के लिए दूसरे को रोकने का प्रयास करती है, जिसके परिणामस्वरूप दूसरा अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में और अपने हितों के संवर्द्धन में सफल नहीं हो पाता है। साधनों की सीमितता, लक्ष्यों की विविधता, व्यक्तियों में भेद, परिवर्तन, संचार की कमी आदि के कारण संगठनों में संघर्षों का जन्म होता है। सामान्यतया संघर्षों को नकारात्मक दृष्टि से देखा जाता है परन्तु फोलेट ने संघर्ष के रचनात्मक पहलुओं की ओर प्रबन्ध का ध्यान आकर्षित किया।

9.3.1 रचनात्मक संघर्ष

मेरी पार्कर फोलेट 'रचनात्मक संघर्ष' का विचार प्रस्तुत करती हैं और संघर्षों को संगठन की प्रत्येक क्रिया में एक सामान्य प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनका विचार है कि संघर्ष ना तो अच्छा है और ना ही बुरा। बल्कि यह तो एक सामान्य घटना है, जिसको बिना किसी भावना और नैतिक पूर्व निर्णय के रूप में स्वीकार करना चाहिए। अपनी रचना 'डायनैमिक एडमिनिस्ट्रेशन' में फोलेट कहती हैं कि संघर्ष कोई युद्ध की स्थिति नहीं होती। यह तो

सिर्फ मतभेदों की उपस्थिति को दर्शाता है। ये मतभेद राय अथवा हितों के हो सकते हैं। राय और हितों के मतभेद संगठन में केवल नियोक्ता और कर्मचारी के बीच, निदेशकों के बीच भी उपस्थित हो सकते हैं। चूँकि व्यक्तिगत मतभेद कभी भी समाप्त नहीं किए जा सकते, अतः संगठनों से संघर्षों को कभी समाप्त नहीं किया जा सकता। जब संघर्ष अपरिहार्य और ना टाला जाने वाला होता है तो इसकी आलोचना करने और इसे बुरा बताने के बजाए इसका सकारात्मक उपयोग लेने की कोशिश करनी चाहिए। यही फोलेट का रचनात्मक संघर्ष का विचार था। फोलेट कहती हैं "हर चमक घर्षण से पैदा होती है। जब हम वायलिन पर घर्षण करते हैं, तभी संगीत प्राप्त होता है और जब हमने घर्षण से अग्नि का अविष्कार किया तो हमने असभ्य अवस्था को छोड़ दिया।''

जब संघर्ष अपरिहार्य है तो इसे किस प्रकार रचनात्मक बनाया जाए? फोलेट ने संघर्षों को सुलझाने की तीन विधियों का उल्लेख किया- प्रभुत्व, समझौता तथा एकीकरण।

1. **प्रभुत्व-** फोलेट की दृष्टि में प्रभुत्व का अर्थ एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष पर विजय प्राप्त कर लेना है। यद्यपि संघर्षों के समाधान की यह विधि आसान प्रतीत होती है, तथापि फोलेट ने इसका पूर्ण समर्थन नहीं किया है। इसका कारण यह है कि प्रभुत्व में दबाव, बल प्रयोग, धमकी या दूसरों के हितों पर चोट करते हुए अपने स्वार्थों की पूर्ति की जाती है। अतः पराजित पक्ष सदैव बदला लेने की फिराक में अवसर की प्रतीक्षा करता रहता है। वस्तुतः प्रभुत्व विधि से संघर्ष का समाधान नहीं होता है, बल्कि वह कुछ समय के लिए दब जाता है। इसी क्रम में कहा जाता है कि प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् जर्मनी पर दबावपूर्ण जो शर्तें थोपी गई थीं, उन्होंने अन्ततः दूसरे विश्व युद्ध को जन्म दिया। अतः संघर्षों के समाधान हेतु प्रभुत्व विधि का यथासम्भव कम से कम उपयोग करना चाहिए।
2. **समझौता-** समझौता संघर्ष समाधान का वह तरीका है, जिसमें प्रत्येक पक्ष अपनी कुछ मांगों को छोड़ देता है और इस प्रकार शान्ति स्थापित करने के लिए अपनी कुछ मांगों का परित्याग करके संघर्ष से समझौता कर लेता है। संघर्ष के समाधान के समझौते का तरीका प्रभुत्व की तुलना में अधिक प्रभावी होता है, क्योंकि समझौते में किसी पक्ष को दबाया नहीं जाता और स्वेच्छा से दोनों पक्ष अपनी कुछ इच्छाएँ त्यागने को तैयार हो जाते हैं। चूँकि इसमें प्रत्येक पक्ष को कुछ इच्छाएँ त्यागनी पड़ती हैं, अतः कोई भी पक्ष इसे पसन्द नहीं करता है, वरन् समझौते मजबूरी में किए जाते हैं। उदाहरण के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच कश्मीर संघर्ष के समाधान के लिए 'ताशकन्द सन्धि' या 'शिमला समझौते' जैसी समझौतात्मक कार्यवाही हुई। परन्तु ये दोनों ही कश्मीर संघर्ष का स्थाई समाधान प्रस्तुत नहीं कर सके और संघर्ष पुनः पैदा हो गया। समझौता तभी सफल रह सकता है, जब दोनों पक्ष ईमानदारी से समझौते का सम्मान करें, जो कि वस्तुतः काफी कठिन होता है।
3. **एकीकरण-** संघर्ष समाधान के तीसरे तरीके के रूप में फोलेट एकीकरण का जिक्र करती हैं। फोलेट संघर्ष समाधान के सबसे सन्तोषजनक और प्रभावी उपाय के रूप में एकीकरण की पहचान करती हैं। एकीकरण में दोनों पक्षों की इच्छाओं को एकीकृत कर दिया जाता है और किसी भी पक्ष को अपनी इच्छाओं का परित्याग नहीं करना पड़ता। फोलेट समझौते से अधिक प्रभावी एकीकरण को मानती है, क्योंकि समझौते में कुछ भी नया रचित नहीं किया जाता, बल्कि यह उपस्थित स्थिति से ही सम्बन्ध रखता है। जबकि एकीकरण कुछ नया बनाता है, अविष्कार करने को प्रेरित करता है तथा नए मूल्यों का इससे जन्म होता है। एकीकरण संघर्ष की जड़ों तक जाता है और इसके स्थाई समाधान का प्रयास करता है। यदि हम किसी संघर्ष का समाधान समझौते से करते हैं तो संघर्ष किसी दूसरे रूप में प्रकट हो सकता है, क्योंकि लोगों को अपनी कुछ इच्छाएँ त्यागनी पड़ती हैं। फोलेट औद्योगिक और अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के उदाहरण से इस बात को स्पष्ट करती हैं। इसके विपरीत एकीकरण संघर्ष का स्थाई समाधान प्रस्तुत करता है। एकीकरण

का उदाहरण देते हुए फोलेट कहती हैं, "हॉवर्ड विश्वविद्यालय के एक छोटे से कमरे की खिड़की को एक महाशय खोलना चाहते थे, जबकि मैं उसे बन्द ही रखना चाहती थी। हमने अगले कमरे की खिड़की खोल दी जिसमें कोई भी नहीं था। यह समझौता नहीं था, क्योंकि हम दोनों को बिना कोई इच्छा छोड़े वह मिल गया जो हम चाहते थे। मैं बन्द कमरा चाहती थी, क्योंकि मैं नहीं चाहती थी कि उत्तरी वायु सीधे मेरी ओर बहे, इसी प्रकार दूसरा व्यक्ति भी किसी विशिष्ट खिड़की को नहीं खोलना चाहता था। वह तो सिर्फ कमरे में अधिक वायु चाहता था।''

फोलेट जहाँ एकीकरण के लाभों का जिक्र करती हैं, वहीं इसकी प्राप्ति में आने वाली कठिनाइयों से भी अनभिज्ञ नहीं हैं। हर तरह के संघर्ष का समाधान एकीकरण से सम्भव नहीं हो सकता। फोलेट उदाहरण देते हुए कहती हैं कि जब दो व्यक्ति किसी एक ही महिला से विवाह करना चाहते हों तो वहाँ एकीकरण की कोई गुंजाइश नहीं होती। कुछ मामलों में तो एकीकरण असम्भव ही होता है, पर फिर भी इसके लाभों के कारण वह प्रभुत्व और समझौते से अधिक प्रभावी और स्थाई तरीका है।

फोलेट एकीकरण प्राप्त करने के चरणों का उल्लेख करते हुए इसके निम्न चरण बताती हैं-

- एकीकरण के प्रथम चरण के रूप में फोलेट कहती हैं कि हमें सर्वप्रथम अपने मतभेदों को स्पष्ट करना चाहिए। जब तक हम यह नहीं जानते कि हमारे मतभेद क्या हैं? तब तक एकीकरण की आशा नहीं कर सकते। इसलिए सर्वप्रथम हमें संघर्ष में निहित वास्तविक मुद्दों की स्पष्ट पहचान करनी आवश्यक है।
- दूसरे चरण में हमें संघर्ष की समस्या के समग्र को कुछ भागों में तोड़ना पड़ता है। इसके लिए हमें संघर्ष में निहित मांगों को पहचान कर उनको संघटन भागों में बांटना पड़ता है। इस चरण में उन मांगों को अन्य मांगों से अलग कर लिया जाता है, जिनकी पूर्ति आवश्यक होती है। इस प्रकार हम समस्या से सम्बन्धित मुख्य मांगों तक ही अपने आपको केन्द्रित कर पाते हैं, जो संघर्ष समाधान के लिए आवश्यक होता है।
- संघर्ष समाधान का तीसरा चरण पूर्वानुमान है। इसमें संघर्ष के प्रति भिन्न तरीके से जवाब दिया जाता है। इसके लिए फोलेट एक उदाहरण देती हैं। वे कहती हैं कि एक व्यक्ति को कार चलाना अच्छा लगता है, जबकि उसकी पत्नी पैदल चलना पसन्द करती है। वह व्यक्ति अपनी पत्नी के प्रत्युत्तर को अच्छी तरह जानता है। फोलेट केवल प्रत्युत्तरों के पूर्वानुमान को ही पर्याप्त नहीं मानती, अपितु उनके निर्माण की भी वकालत करती हैं। प्रत्युत्तर, रेखीय या चक्रिक हो सकते हैं। चक्रिक प्रत्युत्तर संघर्ष पर अधिक अच्छे से प्रकाश डालता है। फोलेट के मत में चक्रिक व्यवहार(Circular Behaviour) रचनात्मक संघर्ष की कुँजी है।

यद्यपि एकीकरण संघर्ष के समाधान की प्रभावी विधि है, फिर भी इसमें कई बांधाएँ हैं। ये बांधाएँ इस प्रकार हैं-

क. एकीकरण के लिए उच्च बुद्धि, गहन बोध तथा श्रेष्ठ खोजी प्रवृत्ति की आवश्यकता होती है। जब तक बुद्धिमता और खोजी प्रवृत्ति नहीं होगी,संघर्षों का एकीकरण से समाधान मुश्किल होता है।

ख. एकीकरण की दूसरी बांधा यह है कि लोग प्रभुत्व की स्थिति का आनन्द लेते हैं और जब तक प्रभुत्व रहता है, एकीकरण मुश्किल होता है।

ग. समस्याओं को सैद्धान्तिक जामा पहना देना भी एकीकरण की एक बांधा है।

घ. उपयोग में ली गई भाषा एकीकरण के मार्ग में चौथी बांधा है। फोलेट के मत में भाषा मेल कराने वाली होनी चाहिए ना कि संघर्षों को और बढ़ाने वाली। कई बार भाषा नये विवाद खड़े कर देती है।

ङ. नेताओं द्वारा पैदा किया गया अनावश्यक प्रभाव एकीकरण की पांचवीं बांधा है।

च. प्रशिक्षण का अभाव एकीकरण की सबसे बड़ी बाँधा है। वे कहती हैं कि संगठन के प्रबन्धकों और श्रमिकों को सहकारी सोच के विकास की शिक्षा देनी चाहिए।

इस प्रकार फोलेट संघर्षों के विविध आयामों का उल्लेख करते हुए रचनात्मक संघर्ष का विचार प्रस्तुत करती हैं और संघर्षों के रचनात्मक उपयोग की वकालत करती हैं।

9.3.2 संगठन में आदेश

आदेश देना संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। मेरी पार्कर फोलेट संगठन में आदेश देने के विविध पहलुओं का परीक्षण करती हैं तथा 'निर्वैयक्तिक आदेश' का विचार प्रस्तुत करती है। वे इस बारे में 'स्थिति के नियम' का भी प्रतिपादन करती हैं।

फोलेट आदेश देने के चार महत्वपूर्ण चरण बताती हैं, प्रथम- एक सचेत अभिवृत्ति जो उन सिद्धान्तों को व्यवहार में लाती है, जिसके जरिए किसी मामले पर कार्यवाही करना सम्भव होता है। द्वितीय- एक जिम्मेदाराना अभिवृत्ति जिससे यह तय हो कि किन सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए। तृतीय- एक प्रयोगात्मक अभिवृत्ति जिससे प्रयोग किए जाएँ और परिणाम देखे जाएँ तथा चतुर्थ- परिणामों को एकत्रित करना।

प्राय: लोग आदेश देने सम्बन्धी सिद्धान्तों को जाने बिना ही आदेश देते हैं। सर्वप्रथम आदेश देने वाले को उन सिद्धान्तों की जानकारी होनी आवश्यक है, जिनके आधार पर आदेश दिए जाते हैं। इन सिद्धान्तों को पहचानने के बाद ही व्यक्ति को उनके अनुसार ही आदेश देने चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि दिए गए हर आदेश का पालन किया जाएगा। आदेश की पालना कई कठिनाइयों से घिरी है। कई बार अपनी पुरानी आदतों के कारण लोग आदेशों का पालन नहीं करते, क्योंकि वे अपनी आदतों के विपरीत आदेश पालन नहीं करना चाहते। आदेश देने से पहले नियोक्ता को आदेशों की पालना सुनिश्चित करने के लिए कर्मचारियों की 'आदतों' के निर्माण के साधनों और तरीकों पर विचार करना चाहिए। इसके लिए फोलेट निम्न सुझाव देती हैं-

1. अधिकारियों को नई विधियों की वांछनीयता देख लेनी चाहिए।
2. दूसरे ऑफिस के नियमों को इस प्रकार परिवर्तित किया जाए ताकि, अधिकारी नई विधियों को अपना सकें।
3. पहले ही कुछ लोगों को नई विधियां अपनाने के लिए विश्वास में ले लिया जाना चाहिए, ताकि एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा सके।
4. अन्तिम बात अभिव्यक्त किए जाने वाले व्यवहार को तीव्र बनाना कहते हैं। यह आदेशों की स्वीकृति का रास्ता तैयार करता है।

फोलेट कहती हैं कि आदेशों के प्रत्युत्तर उन स्थानों और परिस्थितियों पर निर्भर रहता है, जिनमें आदेश दिए जाते हैं। फोलेट कहती है कि ''किसी आदेश के प्रति अनुकूल प्रत्युत्तरों की शक्ति उस दूरी के व्युत्क्रमानुपाती(inverso ratio) होती है जो कि आदेशों द्वारा तय की जाती हैं।''

'आदेश देने' तथा 'आदेश ना देने' के मामले में मालिकानापन (bossism) से बचने के लिए फोलेट 'आदेशों के निर्वैयक्तिकरण' का सुझाव देती हैं तथा 'स्थिति के नियम' का प्रतिपादन करती हैं। फोलेट कहती हैं कि किसी को, अन्यों को आदेश नहीं देना चाहिए, बल्कि दोनों को 'स्थिति' से ही आदेश ग्रहण करने चाहिए। जब सभी व्यक्ति स्थिति से ही आदेश ग्रहण करें तो आदेश देने तथा आदेश के पालन करने का सवाल ही पैदा नहीं होता है। उनके मत में जैसी स्थिति माँग करती है, उसी के अनुसार निर्णय लेना चाहिए। इस बात का सम्बन्ध सिर्फ इस बात से है कि सत्ता 'स्थिति' से जुड़ी होती है। वह एक उदाहरण देती है कि, अपनी माँ के कहने पर उसका लड़का पहले तो पानी की बाल्टी लाने से मना कर देता है, पर बाद में ले आता है। इस मामले में वह आदेश पर गुस्सा होता है, पर

स्थिति की मांग को पहचानता है। फोलेट यह भी कहती है कि चूँकि स्थिति सदैव परिवर्तनशील होती है, अतः आदेश भी कभी स्थिर नहीं रह सकते। इस प्रकार फोलेट संगठन की महत्वपूर्ण समस्या, आदेश देने का विस्तार से परीक्षण करती है और 'स्थिति' को आदेशों का मूल मानती है।

9.3.3 समन्वय

समन्वय, प्रबन्ध का अति महत्वपूर्ण कार्य है। फोलेट के मत में समन्वय का अभाव किसी भी संगठन की मुख्य कमजोरी होती है। उनके मत में समन्वय संगठन के विभिन्न भागों को सामंजस्यपूर्ण तरीके से व्यवस्थित करना है। फोलेट प्रभावी समन्वय के निम्न सिद्धान्त प्रतिपादित करती हैं-

1. **प्रत्यक्ष सम्पर्क का सिद्धान्त-** संगठन में समन्वय स्थापना के सचेत प्रयास किए जाते हैं। कुछ व्यक्तियों को समन्वय स्थापना की जिम्मेदारी सौंपी जाती है। फोलेट के प्रत्यक्ष सम्पर्क के सिद्धान्त के अनुसार समन्वय की जिम्मेदारी रखने वाले व्यक्तियों को एक-दूसरे के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क रखने चाहिए। यह समन्वय की प्रक्रिया को सुगम बनाता है। सरकारी-तंत्र में समन्वय की विफलता का एक प्रमुख कारण यह है कि यहाँ पत्रों या आदेशों के माध्यम से समन्वय करने का प्रयास किया जाता है, जो प्रभावी सिद्ध नहीं होता है।
2. **प्रारम्भिक अवस्थाओं का सिद्धान्त-** समन्वय संगठन का सार है, अतः फोलेट सुझाव देती है कि समन्वय की स्थापना नीति-निर्माण की प्रक्रिया के साथ ही शुरू हो जानी चाहिए। प्रारम्भिक अवस्थाओं में ही समन्वय की स्थापना करने का प्रयास किया जाना चाहिए, क्योंकि बाद में इसकी स्थापना काफी कठिन हो जाती है।
3. **पारस्परिक सम्बन्धों का सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अनुसार स्थिति के विभिन्न घटकों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध पाए जाते हैं। समन्वय की स्थापना करते समय इन पारस्परिक सम्बन्धों का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि ये समन्वय प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं।
4. **सतत् प्रक्रिया का सिद्धान्त-** समन्वय चूँकि एक सतत् प्रक्रिया है, जो संगठन में प्रारम्भ से लेकर आगे तक चलती रहती है। अतः फोलेट समन्वय स्थापना की स्थाई मशीनरी की वकालत करती है। इस प्रकार की स्थाई मशीनरी काफी उपयोगी रहती है। इसके साथ-साथ सूचना आधारित सतत् अनुसंधान के महत्व पर भी जोर देती है।

9.3.4 नेतृत्व

नेतृत्व को एक वृत्ताकार घूमने वाली प्रक्रिया बताने वाली मेरी पार्कर फोलेट ने अपनी पुस्तक 'The New State' में लिखती हैं कि "अब हमें इस बात पर कम बल देना चाहिए कि नेता अपने समूह को प्रभावित करता है, बल्कि अब इस दिशा में सोचना चाहिए कि नेता को समूह प्रभावित करता है। एक-दूसरे को प्रभावित करने की यह प्रक्रिया दोनों ओर से चलती है। जब तक यह प्रवाह निरन्तर चलता है, तब तक नेतृत्व भी प्रभावशाली रहता है, अन्यथा प्रभावशाली नेतृत्व समाप्त हो जाता है। अतः नेतृत्व को समझने के लिए हमें केवल यह नहीं सोचना चाहिए कि नेता, समूह के लिए क्या करता है, बल्कि यह भी सोचना है कि समूह, नेता के प्रति क्या करता है?''
फोलेट ने नेतृत्व के तीन प्रकार बताए हैं, पहला- पद से उपजा नेतृत्व, दूसरा- व्यक्तित्व से उपजा नेतृत्व और तीसरा- कार्य से उपजा नेतृत्व।

फोलेट ने 'पद' से उपजे नेतृत्व को सत्ता से सम्बन्धित नेतृत्व भी बताया है, क्योंकि यह औपचारिक स्थिति का परिचायक है। व्यक्तित्व से उपजे नेतृत्व को वे बाध्य करने वाला नेतृत्व करार देती हैं, क्योंकि ऐसे नेतृत्व में नेता

प्रभुत्व स्थापित कर सकता है। चूँकि अनुयायी अपने नेता के गुणों से प्रभावित रहते हैं, अतः वे दबाव में भी कार्य कर देते हैं। तीसरी श्रेणी में कार्य से उपजा नेतृत्व है जो 'स्थिति' पर निर्भर करता है। फोलेट ने कई दशक पूर्व ही यह कल्पना कर ली थी कि आने वाले समय में ज्ञान नेतृत्व का उदय होगा जो विशेषज्ञों को 'नियंत्रण' की शक्ति मिलने का पर्याय होगा।

नेतृत्व के कार्यों को स्पष्ट करते हुए फोलेट ने तीन मुख्य कार्य बताए हैं, पहला- समन्वय करना, दूसरा - उद्देश्यों का निर्धारण करना, तीसरा- पूर्वानुमान लगाना।

वस्तुतः फोलेट का मानना है कि नेतृत्व के कार्यों की सूची काफी लम्बी है, किन्तु इस सूची में वे संगठन के उद्देश्यों(कार्यों) को परिभाषित करने, पूर्वानुमान लगाने, समूह के अनुभवों को संगठित या एकीकृत करने, अधीनस्थों में नेतृत्व क्षमता विकसित करने, समन्वय करने तथा मेलजोल बढ़ाने को प्रमुख रूप से सम्मिलित करती हैं। 'सभी नेता जन्मजात नहीं होते हैं, बल्कि नेता तैयार किए जा सकते हैं' इस मान्यता की समर्थक फोलेट ने बहु नेतृत्व तथा छोटे नेताओं की कल्पना की है। वे कहती हैं "संगठन में एक नहीं बल्कि कई अरस्तू होने चाहिए।" इसी प्रकार फोलेट ने संगठन में समूह चिन्तन, मेलजोल या साहचर्यता(Togetherness) तथा सामूहिकता की अवधारणा पर बल देते हुए एक ऐसी संगठनात्मक संरचना की कल्पना की है, जिसमें व्यक्ति पूर्ण गरिमा तथा प्रतिष्ठा के साथ मिलजुल कर संगठन के लिए योगदान कर सकता है।

9.4 फोलेट के अन्य विचार

फोलेट के विचार बहुआयामी, सामूहिकता पर आधारित तथा मानवतावादी मूल्यों के समर्थन में खड़े सशक्त तर्क दिखाई देते हैं। फोलेट के कतिपय अन्य उल्लेखनीय विचार इस प्रकार हैं-

नियोजन के सन्दर्भ में फोलेट का मत है कि यह स्व-व्यवस्थित(Self Adhusting) तथा स्व-समन्वित(Self Co-ordinating) करने की योजना है।

लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन के मध्य भेद नहीं मानने वाली फोलेट ने प्रबन्ध को एक पेशे के रूप में स्वीकार करते हुए कहा है "पेशा वह व्यवसाय होता है, जिसका आधार विज्ञान होता है तथा सेवा उसका लक्ष्य होता है।"

फोलेट का प्रारम्भिक चिन्तन लोकतंत्र, विधायिका तथा सरकार से सम्बन्धित रहा है। टॉयनबी की भाँति विश्व सरकार की कल्पना करने वाली फोलेट ने मतदान पेटी पर आधारित लोकतंत्र को 'भीड़ मनोविज्ञान' से सम्बन्धित अवधारणा बताया है। लोकतंत्र को 'सामाजिक चेतना' तथा 'आध्यात्मिक शक्ति' के निकट मानते हुए वे अपनी पुस्तक 'द न्यू स्टेट' में लिखती हैं, "लोकतंत्र की शिक्षा पालने (Cradle), नर्सरी, खेलकूद, स्कूलों तथा जीवन की प्रत्येक गतिविधि से मिलनी चाहिए। नागरिकता की शिक्षा केवल नागरिकशास्त्र से ही नहीं बल्कि सामाजिक चेतना से भी प्राप्त होनी चाहिए। .... यही हमारी संस्थाओं का लक्ष्य होना चाहिए।"

वैज्ञानिक प्रभावों एवं तकनीकों को संगठन के हित में अपनाने की वकालत करते हुए फोलेट कहती हैं, "हमें स्मरण रखना चाहिए कि हम मानवीय तथा यांत्रिक समस्याओं को पूर्णतया पृथक नहीं कर सकते हैं।"

फोलेट परम्परागत मतपेटी-लोकतंत्र का विरोध करती थी। उनका मानना था कि यह पद्धति 'Law of Crowd' (भीड़ का कानून) पर टिकी है।

फोलेट ने संगठनों की नेटवर्किंग की भी वकालत की है। नेटवर्किंग से तात्पर्य उस व्यवस्था से है जिसमें बहुत सारे अंग, संस्था या संगठन अन्तरसम्बन्धित होते हुए एक-दूसरे से सूचनाऐं तथा सहयोग का आदान-प्रदान करते हैं।

ऐसा माना जाता है कि संगठनों में परम्परागत पदसोपान के बजाय पार्श्वीय (Lateral) प्रक्रियाओं को महत्व देने की हिमायती फोलेट के विचारों को ही कालान्तर में अपनाया गया, जिनसे आव्यूह (Matrix) संगठनों की पद्धति

विकसित हुई। फोलेट की 'विशेषज्ञता की सत्ता सम्बन्धी विचार' भी आव्यूह (Matrix) संगठनों का आधार तत्व सिद्ध हुआ।

लोक प्रशासन के पूर्व प्रोफेसर अल्बर्ट लेपावस्की ने फोलेट को 'लोकतांत्रिक राजनीतिक दर्शनशास्त्री' बताया है। फोलेट के विचारों के आधार पर ही लिकर्ट, आर्गीरिस तथा ड्रकर ने कई प्रकार की अवधारणाऐं विकसित की हैं। इसी प्रकार रॉबर्ट फुल्मर का आकलन है कि फोलेट ने वैज्ञानिक प्रबन्ध, मानव-सम्बन्ध तथा प्रशासन की तीन कड़ियों को सही समय एवं सही स्थान पर एक साथ जोड़ा है।

9.5 फोलेट का योगदान

एक समाज सेविका, दर्शनशास्त्री, प्रबन्ध विज्ञानी, समाजशास्त्री, संगठन की नवशास्त्रीय विचारधारा की समर्थक तथा मानवतावादी चिन्तक के रूप में फोलेट का योगदान अविस्मरणीय है। फोलेट के लेखों को एकत्रित एवं निष्पादित करने वाले मेटकॉफ तथा उर्विक ने इस महान विचारक को 'प्रथम श्रेणी की राजनीतिक एवं व्यवसाय दर्शनशास्त्री' नाम दिया है, क्योंकि फोलेट कभी भी व्यावहारिक रूप से ऐसे किसी पद पर नहीं रही जिसमें परम्परागत ढंग से प्रबन्धक जैसे कार्य करने पड़ते हों। लेकिन राजनीति, प्रशासन, मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र तथा समाजशास्त्र के क्रम में उनके विचार अत्यन्त उच्चकोटि के प्रतीत होते हैं। प्रशासन तथा प्रबन्ध से सम्बन्धित उनके अधिसंख्य विचार, लेखों तथा व्याख्यानों के रूप में थे, जो उनकी मृत्योपरान्त प्रकाशित दो पुस्तकों में संकलित किए गए हैं।

9.6 आलोचनात्मक मूल्यांकन

नि:सन्देह फोलेट का प्रबन्ध को योगदान अति विशिष्ट है। उनके विचारों में नवीनता और मौलिकता थी। उनके विचार प्रशासन के लिए लाभदायक हैं, परन्तु आलोचनाओं से परे नहीं हैं। फोलेट के विचारों को अति-आदर्शवादी मान कर उनकी आलोचना की जाती है। साथ ही उनके विचार प्रबन्धकीय अनुभव और वैज्ञानिक अध्ययनों के परिणाम ना होना भी प्रमुख आलोचना है। डी0 ग्विशियानी ने लिखा है कि ''उनका दृष्टिकोण विशुद्ध रूप से अनुभवमूलक था तथा उन्होंने संगठन के सामाजिक पहलुओं की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत नहीं की।''

कुछ विचारक फोलेट को 'शास्त्रीय विचारक' के रूप में मानते हैं, जबकि अन्य उनकी यह कह कर आलोचना करते हैं कि उनके विचारों में कुछ भी 'शास्त्रीय' नहीं है। फोलेट की यह कहकर भी आलोचना की जाती है कि उन्होंने संगठनों के प्रबन्ध में सामाजिक पहलुओं को नजर-अन्दाज किया है। एकीकरण पर फोलेट के विचारों को भी भ्रामक कहकर ग्विशियानी उनकी आलोचना करते हैं। इन आलोचनाओं के बावजूद प्रशासनिक विचारधारा को उनका योगदान श्रेष्ठ और पूर्वानुमान करने वाला माना जा सकता है। हैनरी मेटकॉफ तथा लिंडल उर्विक लिखते हैं कि ''उनकी अवधारणाऐं अपने समय से काफी आगे थी। वे आज की विचारधारा से भी आगे हैं। उनके सुझाव उस व्यक्ति के लिए सोने की खदान के समान हैं, जिनकी रूचि किसी उद्यम को चलाने में मानवीय सहयोग की स्थापना और उसके संधारण (Maintenance) की समस्याओं में होती है।''

अभ्यास प्रश्न-

1. प्रभुत्व से फोलेट का आशय क्या है?
2. नेतृत्व की फोलेट ने क्या परिभाषा दी?
3. फोलेट ने संगठन में किस बात की वकालत की?
4. स्थिति का नियम क्या है?

5. फोलेट प्रबन्ध की भविष्यवक्ता क्यों कही जाती है?

9.7 सारांश

'प्रबन्ध की भविष्यवक्ता' मानी जाने वाली मेरी पार्कर फोलेट का प्रबन्ध जगत में अपना अलग ही स्थान है। उनके विचार मौलिक थे तथा प्रबन्ध को एक नवीन दृष्टिकोण प्रदान करने वाले थे। परन्तु दुर्भाग्य से उनको जीते-जी अधिक ख्याति प्राप्त ना हो सकी। 'क्रिएटिव एक्सपीरियंस' उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुस्तकों में से एक है।
फोलेट पहली प्रबन्ध विचारक थी, जिन्होंने संगठनों के संघर्षों का रचनात्मक उपयोग लेने की वकालत की। उनका आग्रह था कि संगठन में संघर्षों को ना तो बुरा माना जाना चाहिए और ना ही अच्छा, बल्कि इन्हें संगठन की सामान्य स्थिति मानकर उनका रचनात्मक उपयोग लेने का प्रयास करना चाहिए। फोलेट संगठन में संघर्षों को सुलझाने की तीन विधियों की वकालत करती हैं। प्रथम विधि है प्रभुत्व, जिसके अन्तर्गत संघर्ष के निपटारे के लिए एक पक्ष दूसरे पक्ष पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेता है। पर फोलेट इस विधि को स्थाई संघर्ष समाधान की विधि नहीं मानती। दूसरा तरीका है समझौता, जिसके अन्तर्गत दोनों पक्ष अपनी-अपनी मांगों में से कुछ को छोड़कर समझौता कर लेते हैं। यह विधि प्रभुत्व से बेहतर है। एकीकरण को फोलेट सबसे प्रबल विधि मानती है, जिसके अन्तर्गत दोनों पक्ष अपनी-अपनी इच्छाओं को एकीकृत करके संघर्ष का समाधान करते हैं। परन्तु फोलेट इस बात से भी सचेत थी कि हर स्थिति में एकीकरण सम्भव नहीं है। साथ ही वे एकीकरण की बांधाओं की भी चर्चा करती हैं।

9.8 शब्दावली

बॉसिज्म- अमेरिकी राजनीति में प्रचलित शब्द रहा है, जो पार्टी मुख्या के द्वारा सम्पूर्ण पार्टी को नियन्त्रित करने का अर्थ में लिया गया है।
प्रत्यायोजन- जब एक उच्च अधिकारी अपने अधिनस्थ अधिकारी को कार्य सौंपते समय उसे पूरा करने के लिये आवश्यक अधिकार प्रदान करता है, तो प्रशासन की भाषा में इसे 'प्रत्यायोजन' कहते हैं।
समन्वय- संगठन के विभिन्न विभागों के बीच सामजस्य होना, ताकि दोहराव या टकराव की स्थिति न हो।

9.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. प्रभुत्व का आशय एक पक्ष का दूसरे पक्ष पर जीत प्राप्त करना है।
2. नेता वह व्यक्ति होता है, जो अपने समूह को ऊर्जावान कर सकता है।
3. फोलेट ने संगठन में संघर्ष का रचनात्मक उपयोग लेने की वकालत की।
4. फोलेट के अनुसार जैसी स्थिति मांग करती है, उसी के अनुसार निर्णय लेना चाहिए। यही स्थिति का नियम है।
5. फोलेट की अर्न्तदृष्टि इतनी तीक्ष्ण थी कि उन्होंने जो विचार काफी पहले ही प्रकट कर दिये थे वे 1930 के बाद के हार्थोन प्रयोगों से पुष्ट हुए। इसी कारण वह प्रबन्ध की भविष्यवक्ता कहलाती है।

9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीराम माहेश्वरी 'एडमिनिस्ट्रेटिव थिंकर्स', मैकमिलन, 1998, पृ0 143,
2. नरेन्द्र कुमार थोरी, प्रमुख प्रशासनिक विचारक, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, 2002,
3. डॉ0 सुरेन्द्र कटारिया, प्रशासनिक चिन्तक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2012

9.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. नरेन्द्र कुमार थोरी, प्रमुख प्रशासनिक विचारक, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
2. डॉ0 सुरेन्द्र कटारिया, प्रशासनिक चिन्तक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2012

9.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. फोलेट के रचनात्मक संघर्ष की अवधारणा का मूल्यांकन कीजिए।
2. प्रशासनिक विचारों के इतिहास में फोलेट के योगदान का वर्णन कीजिए।